****

SURYA UPASANA

(Hindi)

****

अनुक्रम

अध्याय : एक

विश्ववन्दनीय भगवान सूर्यदेव

ब्रह्मा–विष्णु–महेश के रूप में ईश्वर के तीन स्वरूप, श्रीराम, योगेश्वर कृष्ण, भगवान भैरवदेव आदि के रूप में इनके कई अवतार और तैंतीस करोड़ देवता हमारे धर्म में हैं। हमारे लिए ये सभी समान रूप से महान और पूजनीय हैं। हम और आप सामान्य मानव हैं। सभी अवतारों और देवों पर श्रद्धा रखना तथा अपने आराध्यदेव की नियमित आराधना–उपासना करते हुए किसी भी देवी–देवता को छोटा न समझना हमारा नैतिक कर्तव्य है, और साथ ही आराधना–उपासना में सफलता प्रदायक प्रमुख तत्व भी। परन्तु जहां तक व्यावहारिकता का प्रश्न है, इन तैंतीस करोड़ देवताओं के नामों की सम्पूर्ण सारिणी भी किसी धर्म ग्रन्थ में उपलब्ध नहीं। जहां तक पूजा–आराधना का प्रश्न है, सम्पूर्ण देश में कुल मिलाकर लगभग दो दर्जन देवों की पूजा–आराधना ही की जाती है। भगवान विष्णु के अब तक हो चुके पन्द्रह अवतारों में सर्वाधिक आराधना भगवान श्रीराम और सोलह कला निधान पूर्णावतार भगवान कृष्ण की ही की जाती है, तो आशुतोष शिवजी के अमर अवतारों भगवान भैरवदेवजी और पवनपुत्र हनुमानजी की। इसी प्रकार तैंतीस कोटि देवों में भी वैदिककाल से ही सर्वाधिक पूजा–आराधना पांच देवताओं की हो रही है। ये देव हैं—जगत् संचालक भगवान विष्णु, महेश्वर शिवजी, प्रथम पूजनीय देव गणेश, मातृशक्तियों के तेज का सम्मिलित रूप भगवती दुर्गा और जगत् को प्रकाश तथा जीवन का आधार देने वाले प्रत्यक्ष देव भगवान भास्कर अर्थात् सूर्यदेवजी।

सभी देवों के साकार स्वरूप

दिवाकर रविदेवजी साक्षात विष्णु हैं, क्योंकि जगत् के पालन का कार्य व्यावहारिक रूप में भगवान सूर्यदेवजी ही कर रहे हैं। आधुनिक विज्ञान भी इस बात को मानता है कि पृथ्वी और अन्य सभी ग्रहों की उत्पत्ति सूर्य से ही हुई है। सूर्य के प्रकाश और उसकी किरणों से प्राप्त होने वाले ताप ने ही पृथ्वी पर जीवन को सम्भव बना रखा है। सूर्यदेव की किरणों के ताप से ही समुद्रों और नदियों–तालाबों का जल वाष्प रूप में उड़कर बादल बनता है और फिर पृथ्वी पर बरसता है। इसलिए साक्षात देवराज इन्द्र और वरुण भी आप ही हैं। प्रलयकाल में सूर्यदेव पृथ्वी के अत्यन्त निकट आ जाते हैं और तब आपके प्रबल ताप और अत्यधिक गुरुत्वाकर्षण के

कारण ही पृथ्वी पर प्रलय होती है। इस रूप में साक्षात भगवान शिव और उनका तीसरा नेत्र भी आप ही हैं। आप सभी ग्रहों, नक्षत्रों, राशियों और चांद-सितारों के अधिपति तो हैं ही, मृत्यु के नियन्त्रक यमराज और क्रूरतम ग्रह शनिदेवजी तो आपके पुत्र ही हैं। यही कारण है कि आप सबसे शक्तिशाली और प्रत्यक्ष देव तथा ईश्वर का साक्षात स्वरूप तो हैं ही, आपकी आराधना-उपासना करने पर सभी देवी-देवताओं की वन्दना-आराधना भी स्वयं ही हो जाती है। सूर्यदेव की पूजा-आराधना, उनकी मानसिक उपासना अथवा मंत्रों का जप करने वाले भक्त पर सभी देवी-देवता अपनी कृपादृष्टि बनाए रखते हैं, कोई भी देव उससे नाराज तो हो ही नहीं सकता।

भगवान विष्णु और आशुतोष शिव का साक्षात संयुक्त स्वरूप हैं भगवान भास्कर

सर्वकालीन सर्वाधिक पूजनीय देव

इस कलिकाल में तो भगवान विष्णु से भी अधिक पूजा-आराधना उनके अवतारों श्रीराम और गोपाल कृष्ण की हो रही है, तो मातृशक्ति के रूप में भगवती दुर्गाजी और काली माई की। पवनपुत्र हनुमानजी और मातेश्वरी दुर्गाजी के आज उत्तरी भारत में सर्वाधिक मन्दिर हैं, तो दक्षिण भारत में भगवान शिवजी के पुत्र कार्तिकेय मुरुगन के नाम से सबसे अधिक पूजे जाने वाले देवता। परन्तु वेदों में

इनके नाम तक नहीं। वैदिककाल में हमारे पांच प्रमुख पूजनीय देव थे और उनमें से भगवान सूर्य ही एकमात्र वह देव हैं जिनकी पूजा-आराधना और उपासना आज भी व्यापक स्तर पर हो रही है। सतयुग, त्रेता, द्वापर और अब कलियुग अर्थात् चारों ही युगों में भगवान सूर्यदेवजी की पूजा-आराधना का अत्यन्त व्यापक स्तर पर लगातार होते रहने का कारण भी एकदम स्पष्ट है। आप सभी देवों के कार्यों को प्रत्यक्ष रूप से पूर्णता प्रदान करने वाले सबसे शक्तिशाली देव तो हैं ही, स्वयं ईश्वर का साक्षात स्वरूप भी हैं, जिनके प्रत्यक्ष दर्शन हम प्रतिदिन प्रात:काल से सायंकाल तक अनायास ही करते रहते हैं।

वैदिककाल में महर्षि, ब्रह्मर्षि और तपस्वी तो वर्षों तक सतत रूप में कठोर तप करते थे, तो सामान्य व्यक्ति मंत्रों का जप और स्तुतियां। बाद में धीरे-धीरे मूर्तिपूजा का प्रचलन हमारे धर्म में हुआ। मूर्तिपूजा करने के लिए आराध्यदेव के किसी विग्रह, मूर्ति, चित्र अथवा प्रतीक की अनिवार्य रूप से आवश्यकता होती है। प्राचीनकाल में इस प्रकार की मूर्तियां और चित्र कुशल कारीगरों द्वारा हाथ से बनाए जाने के कारण जनसामान्य की पहुंच से बाहर थे। यही कारण है कि हमारे ऋषि-मुनियों ने मूर्तियों के साथ ही पांच सर्वाधिक पूजनीय देवों के लिए ऐसे प्रतीक भी निर्धारित किए, जिन्हें सामान्य व्यक्ति भी सुगमतापूर्वक लेकर इन देवों की पूजा-आराधना कर सके। भगवान विष्णु का प्रतीक गोदावरी नदी से प्राप्त होने वाली पत्थर की पिण्डियां हैं, जिन्हें शालिग्राम कहा जाता है। शिवजी के साक्षात प्रतीक शिवलिंग हैं। नर्मदा नदी से प्राप्त शिवलिंगों को शिवजी का साक्षात स्वरूप माना जाता है, वैसे अब काले अथवा सफेद पत्थर को तराशकर बनाए गए शिवलिंग ही अधिक प्रचलित हैं। मातृशक्तियों का प्रतीक पत्थर की चपटी पिण्डियां हैं। वैष्णोदेवी के मन्दिर में महालक्ष्मी, महासरस्वती और महाकाली के रूप में इस प्रकार की तीन पिण्डियां ही स्थापित हैं। सभी धार्मिक अनुष्ठानों में गणेशजी की पूजा अनिवार्य रूप से की जाती है और प्राय: ही पीली मिट्टी की डली अथवा गाय के गोबर के टुकड़े पर कलावा लपेटकर उसे गणेशजी मान लिया जाता है।

भगवान सूर्यदेव की महानता के अनुरूप हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने यहां भी भगवान भास्कर को विशिष्ट स्थान प्रदान किया है। सूर्यदेव का प्रतीक कोई पिण्डी या मिट्टी की डली नहीं, बल्कि गोलाकार सूर्य चक्र है। प्राचीनकाल में यह सूर्य चक्र कुम्भकारों द्वारा तैयार किया जाता था अथवा भक्त एवं पुजारी स्वयं तैयार कर लेते थे। अब इस प्रकार के प्लास्टर ऑफ पेरिस के बने हुए सूर्यचक्र फुटपाथों से लेकर कलाकृतियां बेचने वाले म्यूजियमों तथा आर्टगैलरियों तक में उपलब्ध हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि हिन्दुओं के साथ ही जैन धर्म को मानने वाले भी इस सूर्य चक्र की पूजा-आराधना तो करते ही हैं, वे मंत्रों का जप भी प्राय: इस सूर्यचक्र

के सम्मुख बैठकर ही करते हैं। जहां तक बौद्ध धर्म का प्रश्न है, बौद्ध धर्मावलम्बियों की तो सम्पूर्ण साधना का आधार ही यह सूर्यचक्र है। जिस प्रकार हम लोग प्रत्येक धार्मिक कार्य के पहले गणेशजी की पूजा करते हैं, ठीक उसी प्रकार बौद्ध धर्म को मानने वाले सूर्यचक्र के सम्मुख बैठकर ही पूजा-आराधना, मंत्रों का जप तथा अन्य सभी तांत्रिक सिद्धियां करते हैं।
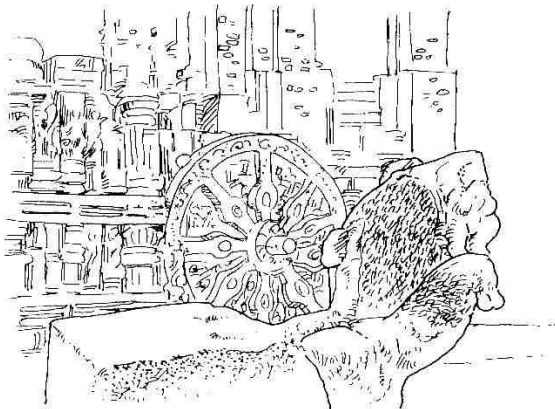
कोणार्क स्थित सूर्य मंदिर में बना सूर्यचक्र

सम्पूर्ण विश्व में वन्दनीय देव

प्राचीनकाल में सम्पूर्ण विश्व में ही भगवान सूर्यदेव की आराधना-उपासना अत्यन्त व्यापक स्तर पर की जाती थी। यूरोप में प्राचीन सभ्यता के केन्द्रबिन्दु रोम के निवासी भगवान सूर्यदेव की आराधना-उपासना व्यापक स्तर पर करते थे। यह बात दूसरी है कि वे भगवान सूर्यदेव को जुपीटर कहते थे और जुपीटर के नाम से सूर्यदेव को ग्रहों के अधिपति के रूप में पूजने के साथ ही आपको ईश्वर का साक्षात स्वरूप भी मानते थे। ईसामसीह द्वारा ईसाई धर्म चलाए जाने के बाद जहां सभी देवी-देवताओं की पूजा-आराधना समाप्त हो गई और एक ही ईश्वर अर्थात् गॉड की आराधना होने लगी, वहीं सूर्यदेव का उच्चतम स्थान बना ही रहा। ईसाई सूर्यदेव के नाम पर आधारित रविवार अर्थात् सन्डे (Sunday) को पवित्र दिन (Holyday) तो मानते ही हैं, रविवार को अनिवार्य रूप से चर्च में जाकर गॉड अर्थात् ईश्वर की

विशेष आराधना-उपासना भी करते हैं। वैसे यह गॉड (God) शब्द भी हमारे ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी के नामों के पहले अक्षरों को मिलाकर ही बना है। ब्रह्माजी जगत् उत्पादक अर्थात् जेनरेटर (Generator) हैं, तो भगवान विष्णु सृष्टि संचालक अर्थात् ऑपरेटर (Operator)। शिवजी संहार या विध्वंस अर्थात् डेस्ट्रॉय (Destroy) का प्रतीक हैं। हमारे भगवान सूर्यदेव प्रत्यक्ष रूप से ये तीनों कार्य करते हैं। इस प्रकार एक वाक्य में यही कहा जा सकता है कि समस्त ईसाई समाज रविवार के दिन सूर्यदेवजी की ही आराधना-उपासना करता है।

ईसाई धर्म के समान ही इस्लाम धर्म भी निराकार ब्रह्म का उपासक है। मस्जिदों में तो कोई मूर्ति अथवा चित्र तक नहीं होता। परन्तु भगवान सूर्यदेव के प्रभाव को तो कट्टर मुस्लिम राष्ट्रों तक ने स्वीकार किया है। 1970 तक सबसे बड़े, सर्वाधिक सम्पन्न और प्रगतिशील मुस्लिम देश ईरान के सम्राट अपने नाम के साथ आर्य-मिहिर विशेषण अनिवार्य रूप से जोड़ते थे। आर्य-मिहिर अर्थात् 'आर्यों का सूर्य' ईरान के बादशाह की पदवी थी, यद्यपि वे मुसलमान थे। यद्यपि ईरान में आज राजतन्त्र समाप्त हो चुका है और वहां के राष्ट्रपति स्वयं के नाम के साथ आर्य अथवा मिहिर शब्द नहीं लगाते परन्तु इण्डोनेशिया में यह परम्परा दूसरे रूप में कायम है। इण्डोनेशिया के सबसे लोकप्रिय और सफल राष्ट्रपति सुकर्ण थे और आज उनकी बेटी सुकर्णपुत्री मेघावती इण्डोनेशिया की राष्ट्रपति हैं। भगवान सूर्यदेव के सहस्रनामों में उनका एक नाम सुकर्ण भी है जबकि मेघावती नामकरण का कारण था उस दिन इण्डोनेशिया की राजधानी जकार्ता में मेघों का भीषण रूप में बरसना। मेघों के उत्पन्नकर्ता भी तो भगवान भास्कर ही हैं। यही कारण है कि ये दोनों ही नाम एक प्रकार से भगवान सूर्यदेव के प्रति उनकी आस्था और समर्पण भावना का प्रतीक तो हैं ही, इस बात का भी स्पष्ट प्रमाण हैं कि सम्पूर्ण विश्व ही भगवान सूर्यदेव को साक्षात ईश्वर का स्वरूप मानता है।

वेदों में सूर्यदेव

हमारे धर्म के आधार स्तम्भ चारों वेद विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ होने के साथ ही स्वयं भगवान के श्रीमुख से उद्घटित भी हैं। जगद्पिता ब्रह्माजी दिन भर वेदों का पाठ ही करते रहते हैं, और इस पाठ से प्राप्त शक्तियों के कारण ही वे प्रतिपल जीवों की रचना में संलग्न रहते हैं। हमारे चारों ही वेदों में हजारों मंत्रों द्वारा विभिन्न देवी-देवताओं की स्तुतियां की गई हैं। इन स्तुतियों में सबसे अधिक स्तुतियां भगवान सूर्यदेव की ही हैं। ऋग्वेद (1/115/1) में **सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च** अर्थात् सभी स्थावर और जंगम प्राणियों की आत्मा भगवान सूर्यदेव ही हैं, कहा गया है। ऋग्वेद के ही (1/99/4) श्लोक में कहा गया है कि विवस्वान, पूषा, त्वष्टा, धाता, विधाता,

सविता, मित्र, वरुण, आदित्य, शुक्र, उरुक्रम, विष्णु, भग आदि नाम अलग-अलग देवताओं के नाम होते हुए भी सूर्यदेव के प्रति समर्पित हैं और ये सभी देव सूर्यदेव के ही अंशरूप हैं। यजुर्वेद (23/48) **ब्रह्म सूर्यसमं ज्योति** कहकर ब्रह्म को सूर्य की ज्योति घोषित कर रहा है तो अर्थववेद (3/16/5) **भग एवं भगवान् अस्तु देवः** के द्वारा भगवान और जगत् उत्पन्न कर्ता सूर्यदेवजी को ही बता रहा है।

हमारे धर्म में सर्वाधिक लोकप्रिय और नित्य अनिवार्य रूप से जपे जाने वाले गायत्री मंत्र में भी भगवान सूर्यदेव (सविता) से ज्ञान प्रदान करने और अंधकार से निकालकर प्रकाश में ले चलने की प्रार्थना की गई है। यह मंत्र गायत्री छन्द में है, परन्तु इसमें सम्बोधित सविता अर्थात् भगवान सूर्यदेव को ही किया गया है। एक वाक्य में यही कहा जा सकता है कि सूर्यदेव की आराधना-उपासना जहां हमारे हिन्दू धर्म का आधार स्तम्भ है, वहीं सभी धर्मों को मानने वाले व्यक्ति किसी न किसी रूप में भगवान भास्कर की आराधना करते ही हैं। यही नहीं, धर्म और धार्मिक कार्यों का उपहास करने वाले नास्तिक तक सूर्यदेव के प्रताप को मानते हैं और बुरा समय आने पर भांति-भांति से भगवान सूर्यदेवजी को प्रसन्न करने की चेष्टा करते ही रहते हैं। हमारे शास्त्रों पर शंका करने वाला विज्ञान और आधुनिक वैज्ञानिक भी सूर्य के बारे में नित्य नवीन खोजों में रत हैं, और अधिकांश खोजों के पश्चात् वे यह देखकर विस्मित रह जाते हैं कि हमारे ऋषि-मुनियों ने अपने आध्यात्मिक ज्ञान के बल पर सूर्यदेव के बारे में जिन बातों को हजारों वर्ष पूर्व जान लिया था, उन तक वे आज भी नहीं पहुंच पा रहे हैं। अनन्त हैं भगवान भास्कर की शक्तियां और परब्रह्म का साक्षात स्वरूप हैं हमारे भगवान रविदेवजी। आपको जानने, समझने और हृदय में धारण करने के लिए आध्यात्मिक ज्ञान और स्वयं भगवान सूर्यदेवजी की कृपाओं की अनिवार्य आवश्यकता है, जो हम नियमित सूर्योपासना से ही प्राप्त कर सकते हैं।

❑❑

अध्याय : दो

सूर्यदेव के प्रमुख नाम एवं मंत्र

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पृथ्वी सहित सभी ग्रह सूर्य से अलग होने वाले टुकड़े हैं, तो पृथ्वी पर जीवन का आधार भी सूर्य की रश्मियां ही हैं। धार्मिक मान्यताओं के अनुसार भगवान सूर्यदेव सभी ग्रह-नक्षत्रों के अधिपति, आदिदेव और परमब्रह्म का साकार स्वरूप हैं। वेदों में उन्हें भास्कर और आदित्य के साथ ही विष्णु, शिव, इन्द्र, सविता आदि अनेक नामों से सम्बोधित किया गया है, जबकि धर्मग्रंथों में तो आपको हजारों नामों से विभूषित किया गया है। आपके आधा दर्जन से भी अधिक सहस्रनाम हमारे शास्त्रों में उपलब्ध हैं। यही नहीं, लगभग सभी शास्त्रकारों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से आपके सबसे प्रमुख नाम बतलाए हैं। यद्यपि उपासना तथा मंत्रों का जप करते समय तो आप भगवान सूर्यदेव के किसी सहस्रनाम अथवा अष्टोत्तर शतनाम का स्तवन करेंगे, परन्तु प्रारम्भिक दिनों में पूजा करते और सूर्यदेव को जल चढ़ाते समय तथा दिन में जब भी समय मिल जाए इन नामों का अधिक से अधिक स्तवन करते रहिए।

नमस्कारयुक्त बारह नाम

सूर्यदेव के बारह नामों को बारह पंक्तियों में पृथक-पृथक नमस्कार करने वाली इस हिन्दी कविता को आप सूर्य द्वादशनाम नमस्कार स्तोत्र भी कह सकते हैं। आप पूजा-आराधना और अर्घ्य अर्पण करते समय तो सूर्यदेव को नमस्कार करने हेतु इसका स्तवन करें ही, सूर्यदेव की ओर मुंह करके प्रातः, दोपहर और सायं इसका स्तवन करके लघुरूप में त्रिकाल संध्याएं भी कर सकते हैं—

**हे 'आदित्य देव' नाथ तुझे नमस्कार है।
दरिद्रता दूर करो, नमस्कार है।
हे 'भास्कर देव' प्रभु नमस्कार है।
धन-जन से पूर्ण करो नमस्कार है।
'भानु' 'चित्रभानु' देव नमस्कार है।
हे 'विश्व के प्रकाशकजी' नमस्कार है।
'तीक्ष्णांसु' 'मार्तण्ड' नमस्कार है।
'प्रभाकर', 'सूर्यदेव' नमस्कार है।**

हे 'विभावसु' देव तुझे नमस्कार है।
'सहस्त्रांषु' 'पूषादेबी' नमस्कार है॥
धन-जन से पूर्ण करें, नमस्कार है।
उपासकों के प्राणनाथ, नमस्कार है।

इक्कीस नामों का आदित्य स्तोत्र

भगवान सूर्यदेवजी के प्रमुख नामों के इस संग्रह का अधिकाधिक स्तवन आपके श्रीचरणों में प्रीति बढ़ाने और भगवान भास्कर की महती कृपाएं प्राप्त करने का सबसे आसान माध्यम सिद्ध हो सकता है। विज्ञजनों का कथन है कि यात्रा करते समय अथवा अन्य किसी कारणवश जब प्रात:काल स्नान और आराधना-उपासना करना संभव न हो सके तब भक्तिभावपूर्वक इस स्तोत्र का पाठ करने मात्र पर ही भगवान सूर्यदेव उसे पूरी आराधना-उपासना मान लेते हैं।

आदिदेव, आदित्य, दिवाकर, विभु तमिस्त्रहर।
तपन, भानु, भास्कर, ज्योतिर्मय, विष्णु, विभाकर॥
शंख, चक्रधर, रत्नहार के चूर-मुकुटधर।
लोकचक्षु, लोकेश, दुःख दारिद्र्य-कष्ट हर॥
सविता देव अनादि, सृष्टि जीवन पालन कर।
पाप तापहर, मंगलकर, मंगल-विग्रह-वर।
महातेज, मार्तण्ड, मनोहर, महा-रोग-हर।
जयति सूर्यनारायण, जय-जय सर्वसुखाकर॥

मासानुसार बारह नाम

वर्ष के बारह महीनों में भगवान सूर्यदेवजी की आराधना पृथक-पृथक नामों से करने का विधान है, जो इस प्रकार है—

वरुण माघ महं सूर्य फाल्गुन।
मधु वेदांग नाम रवि उदयन॥
भानु उदय बैसाख गिनावै।
ज्येष्ठ इन्द्र आषाढ़ रवि गावैं॥
यम भादों अश्विन हिम रेतां।
कातिक होत दिवाकर नेता॥
अगहन नाम विष्णु से पूजहिं।
पुरुष नाम रविहैं मलमासहि॥

सूर्यदेव के मासानुसार इन बारह नामों की व्याख्या और पूजा-आराधना करते

समय मास के अनुसार भोग का वर्णन आगे रविवार व्रत का विधान नामक अध्याय में दिया गया है। वैसे भी ये चौपाइयां इतनी आसान हैं कि आपको सहज ही याद हो जाएंगी और इनकी व्याख्या की भी कोई आवश्यकता नहीं।

सूर्याराधन करते सूर्यवंशी भगवान श्री राम

महाभारत में वर्णित बारह आदित्य

महाभारत मात्र कौरव-पाण्डव युद्ध की गाथा ही नहीं, बल्कि हमारे धर्म और संस्कृति का एक बड़ा आधार ग्रंथ है। इसमें धर्म, दर्शन, नीति और योग-वैराग्य के अनेक पक्षों पर विस्तार से विवेचना महर्षि वेदव्यासजी ने की है। सूर्य-साधना के प्रसंग में, महर्षि व्यासजी ने इस क्रम से द्वादश-आदित्यों का वर्णन किया है—

1. इन्द्र (शक्र)	5. पूषा	9. वरुण
2. अर्यमा	6. विवस्वान्	10. अंशु
3. धाता	7. सविता	11. भग
4. त्वष्टा	8. मित्र	12. विष्णु

द्वादश आदित्य

दिनकर और भास्कर के समान ही आदित्य भी भगवान सूर्यदेव का एक सर्वाधिक प्रचलित नाम है। हमारे अधिकांश प्राचीन धर्मग्रंथों में भगवान सूर्यदेव के आदित्य नाम का ही अधिक प्रयोग हुआ है। महाभारत के समान ही लगभग सभी प्राचीन धर्मग्रंथों में भगवान सूर्यदेव अर्थात् आदित्यदेव के बारह नामों और रूपों की चर्चा की गई है। विभिन्न धर्मग्रंथों में संकलित इन बारह नामों में अधिक अन्तर नहीं। अधिकांश धर्मग्रंथों में तो तीसरे रूप को त्वष्टा कहा गया है, जबकि कुछ में इस तीसरे रूप का नाम पर्जन्य है। नीचे इन बारह आदित्यों के नाम और उसके बाद इनके बारे में संक्षिप्त जानकारियां दी जा रही हैं—

1. इन्द्र	5. अर्यमा	9. अंशुमान
2. धाता	6. भग	10. पर्जन्य
3. त्वष्टा	7. विवस्वान्	11. वरुण
4. पूषा	8. विष्णु	12. मित्र

इन्द्र—देवराज इन्द्र भगवान सूर्यदेव का ही एक रूप हैं। इन्हें आप सूर्यदेव का प्रथम अवतार अथवा प्रथम आदित्य भी कह सकते हैं।

धाता—जगद्पिता ब्रह्माजी का एक नाम धाता अथवा विधाता भी है। ब्रह्माजी को हमारे शास्त्रों में भगवान सूर्यदेव का दूसरा अवतार अथवा आदित्यदेव का दूसरा रूप कहा गया है। इस प्रकार देवराज इन्द्र भी आप ही हैं और सभी जीवों के उत्पन्नकर्ता धाता अर्थात् ब्रह्माजी भी आप ही हैं।

त्वष्टा—भगवान सूर्य के तीसरे अवतार 'श्री त्वष्टा' हैं। इनका निवास समस्त वनस्पति-जगत् है। पेड़-पौधों, लता-बेलों और औषधियों में निवास करने वाले त्वष्टा देवता, अपने तेज से उन सबको प्रभावशाली और जीवधारियों के भरण-पोषण में समर्थ बनाए रखते हैं।

पूषा—चतुर्थ आदित्य पूषा का वास अन्न में है। सभी प्रकार के अनाज पूषा देवता से प्रभावित हैं। उन्हीं के तेज के प्रभाव से अन्न में पौष्टिकता आती है और वह अनाज सभी का पोषण करने में समर्थ होता है। समस्त अन्नों में जो स्वाद, पौष्टिक-तत्व, शक्ति और स्निग्धता विद्यमान है, वह वास्तव में पूषा का ही प्रभाव है।

अर्यमा—वायु रूप में समस्त चराचर, देव, मानव और जीव-जन्तु तथा

वनस्पति-जगत् को प्रभावित करने वाले वायुदेवता वास्तव में भगवान आदित्य के पांचवें अवतार (स्वरूप) हैं।

भग—समस्त प्राणियों के शरीर में अंग-विशेष के रूप में स्थित रहने वाले भग देवता श्री आदित्यदेव के छठे रूप हैं। देहधारी प्राणियों तथा दृश्य-अदृश्य वैभव में निवास करने वाले भग देवता शरीर में चेतना, काम-शक्ति और जीवन्तता का पोषण करते हैं और सभी प्राणियों का उत्पत्ति स्थल भी हैं।

विवस्वान्—सूर्यदेवता का सातवां स्वरूप अग्निदेव है अर्थात् अग्निदेव सूर्य का वह रूप है, जिसे विवस्वान् की संज्ञा दी गई है। इसका आशय है कि अग्नि में जो उष्मा अर्थात् ताप तत्व है, वह स्वयं सूर्य देवता का अंश है। सामान्य अग्नि के साथ ही भोजन को पचाने वाली जठराग्नि भी इसी के अंतर्गत आती है। सूर्य का ताप और किरणें ही सभी प्रकार के तापों का आधार हैं और यही कारण है कि सूर्यदेव का यह विवस्वान् नाम न केवल धर्मसम्मत बल्कि पूरी तरह विज्ञानसम्मत भी है।

विष्णु—लक्ष्मीपति भगवान विष्णु ईश्वर का दूसरा रूप और संसार के पालन-पोषणकर्ता माने जाते हैं। व्यावहारिक रूप में तो अपनी किरणों द्वारा प्रकाश, अपने ताप के द्वारा वर्षा देकर और फसलों को पकाकर जगत् के पालन-पोषण का कार्य भगवान सूर्यदेव ही कर रहे हैं। यही कारण है कि देवराज इन्द्र और जगद्पिता ब्रह्माजी के समान ही भगवान विष्णु को भी सूर्यदेव का एक रूप अथवा अवतार हमारे लगभग सभी धर्मग्रंथों ने माना है।

अंशुमान—मानव और पशु ही नहीं, प्रत्येक जीवधारी निरन्तर सांस लेता रहता है, वायु के अभाव में जीवन संभव नहीं। जीवधारी श्वास के रूप में प्राणवायु अर्थात् ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं और कार्बन डाई-ऑक्साइड के रूप में उस हवा को बाहर निकालते हैं। दिन में जब तक सूर्य का प्रकाश रहता है, पेड़-पौधे इस कार्बन डाई-ऑक्साइड गैस को ऑक्सीजन अर्थात् प्राणवायु में बदलते रहते हैं। सूर्य के प्रकाश में ही पेड़-पौधे यह कार्य कर पाते हैं और यही कारण है कि सूर्यदेव के नौवें रूप को अंशुमान अर्थात् ऑक्सीजन निर्माता कहा गया है।

पर्जन्य—सूर्य देवता का दसवां रूप पर्जन्य है, जो मेघमण्डल में (बादलों में) निवास करता है। बादलों में आपके निवास के कारण ही आपकी किरणों के प्रभाव से द्रवीभूत होकर बादल जल बरसाते हैं।

वरुण—बादलों और वर्षा के अधिपति देव को वेदों में वरुणदेव कहा गया है। सूर्यदेव ही अपने ताप से वाष्पीकरण द्वारा बादलों का निर्माण करते हैं। यही कारण है कि वर्षा के वास्तविक हेतु तो भगवान सूर्यदेवजी ही हैं और इसीलिए वरुणदेव को उनका ग्यारहवां रूप माना जाता है।

मित्र—उपरोक्त में धाता और श्रीविष्णु तो ईश्वर के दो रूप हैं और शेष नौ

देवता। परन्तु मित्र एक प्राचीन ऋषि हैं, जिन्होंने चन्द्रभागा नदी के तट पर कठोर तपस्या करके देवता का पद प्राप्त किया था। शास्त्रों के अनुसार महर्षि मित्र सूर्यदेव का ही अंश अवतार थे और इसीलिए उनकी गणना द्वादश आदित्यों में की जाती है।

सूर्यदेव के सोलह प्रमुख नाम

सोलह कलाओं को हमारे धर्म में एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। ईश्वर की कुल सोलह कलाएं मानी गई हैं और भगवान श्रीकृष्ण को सोलह-कला-निधान पूर्ण अवतार। भगवान सूर्यदेवजी को भी सोलह कलाओं से युक्त साक्षात परब्रह्म कहा गया है। इस आधार पर आपके सोलह प्रमुख नाम इस प्रकार हैं—

1. पद्माक्ष
2. तेजसां राशि
3. छायानाथ
4. तमिस्रहा
5. कर्मसाक्षी
6. जगत्बन्धु
7. लोकबन्धु
8. त्रयीतनु
9. प्रद्योतन
10. दिनमणि
11. खद्योत
12. लोकबान्धव
13. इन
14. धामनिधि
15. अंशुमाली
16. अंजनीपति

अमरकोष में वर्णित इकतीस नाम

प्राचीन धर्मग्रंथों में अमरकोष की गणना शास्त्रों के अंतर्गत होती है। धर्म और संस्कृति से सम्बंधित शब्दों की व्याख्या और सटीक विवेचना करना इस ग्रन्थ की प्रमुख विशेषता है। ऊपर वर्णित बारह आदित्यों की व्याख्याएं हमने अमरकोष के आधार पर ही की हैं। उन बारह आदित्यों के अतिरिक्त अमरकोष में सूर्यदेवजी के ये इकतीस प्रमुख नाम भी बतलाए गए हैं—

1. सूर
2. आदित्य
3. द्वादशात्मा
4. दिवाकर
5. भास्कर
6. अहस्कर
7. ब्रध्न
8. प्रभाकर
9. विभाकर
10. भास्वान्
11. सप्ताश्व
12. हरिदाश्व
13. उष्णरश्मि
14. विकर्तन
15. अर्क
16. मार्तण्ड
17. मिहिर
18. अरुण
19. द्युमणि
20. तरणि
21. चित्रभानु
22. विरोचन
23. विभावसु
24. ग्रहपति
25. त्विषांपति
26. अहर्पति
27. भानु
28. हंस
29. सहस्रांशु
30. तपन
31. रवि

सूर्यदेव के एक सौ बीस प्रमुख नाम

1. ॐ सूर्य
2. पूषा
3. गभस्तिमान
4. धाता
5. तेज
6. सोम
7. अंगारक
8. शुचि
9. विष्णु
10. यम
11. ऐन्धन
12. वेदकर्ता
13. सत्युग
14. कला
15. प्रहर
16. कालचक्र
17. योगी
18. प्रजाध्यक्ष
19. सागर
20. अरिहा
21. सृष्टा
22. अलोलुप
23. कामद
24. वरद
25. भूतादि
26. धूमकेतु
27. रवि
28. पितामह
29. स्वर्ग
30. विश्वतोमुख
31. आर्यमा
32. अर्क
33. अज
34. प्रभाकर
35. आकाश
36. बृहस्पति
37. इन्द्र
38. सौरि
39. रुद्र
40. वैद्युत
41. अग्नि
42. वेदांग
43. त्रेता
44. काष्ठा
45. क्षण
46. विभावसु
47. व्यक्ताव्यक्त
48. विश्वकर्मा
49. अंश
50. भूताश्रय
51. संवर्तक
52. अनन्त
53. सर्वतोमुख
54. सर्वभूतनिसेवित
55. शीघ्रज
56. आदिदेव
57. दक्ष
58. स्वर्गद्वार
59. देहकर्त्ता
60. चराचरात्मा
61. भग
62. सविता
63. काल
64. पृथ्वी
65. वायु
66. शुक्र
67. विवस्वान्
68. शनैश्चर
69. स्कन्द
70. अग्नि
71. तेजापति
72. वेदवाहन
73. द्वापर
74. मुहूर्त
75. संवत्सरकर
76. पुरुष
77. सनातन
78. तमोनुद
79. जीमूत
80. भूपति
81. प्रलय
82. कपिल
83. जप
84. मन
85. प्राणधारण
86. अदितिपुत्र
87. पिता
88. प्रजाद्वार
89. प्रशान्तात्मा
90. मैत्रेय
91. त्वष्टा
92. रवि
93. मृत्यु

94. आप	103. सर्वामराश्रय	112. भानु
95. परायण	104. रात्रि	113. विशाल
96. बुध	105. अश्वत्थ	114. सुपर्ण
97. दीप्तांशु	106. शाश्वत	115. धनवन्तरि
98. ब्रह्मा	107. कालाध्यक्ष	116. द्वादशात्मा
99. वैश्रवण	108. वरुण	117. माता
100. जाठराग्नि	109. जीवन	118. मोक्षद्वार
101. धर्मध्वज	110. सर्वलोकनमस्कृत	119. विश्वात्मा
102. कलि	111. सर्वादि	120. रश्मिकर

जप हेतु चार मंत्र

भगवान सूर्यदेव की पूरे विधि-विधान से षोडशोपचार आराधना अथवा मानसिक उपासना करते समय अनिवार्य रूप से उनके किसी मंत्र का कम से कम एक माला जप किया जाता है। सामान्य पूजा, रविवार का व्रत अथवा अर्घ्य अर्पित करने के बाद मंत्र जप कर लेने पर उस व्रत, पूजा अथवा अर्घ्य के पुण्यफलों में अत्यधिक वृद्धि हो जाती है। इस प्रयोजन के लिए सूर्यदेव के चार अत्यन्त सुगम मंत्र नीचे दिए जा रहे हैं। ये चारों ही मन्त्र समान रूप से प्रभावशाली और पुण्य-प्रदायक हैं—

ॐ ह्रीं ह्रीं सूर्याय नमः।
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः सूर्याय नमः।
ॐ घृणिः सूर्याय नमः।
घृणिः सूर्य आदित्य ॐ।

जिस प्रकार भगवान सूर्यदेव स्वयं, उनके स्वरूप और शक्तियां अनन्त हैं, ठीक उसी प्रकार असंख्य हैं आपके नाम और दर्जनों हैं आपके विशिष्ट मंत्र। इस अध्याय में आपके कुछ प्रमुख नामों और एकदम सुगम चार मंत्रों का ही संकलन किया है। इन सभी नामों को रटने के स्थान पर एक-एक नाम को बारम्बार पढ़ें और उसके कारण एवं अभिप्राय को समझने के साथ ही उनके उस रूप-स्वरूप का भी चिन्तन करते रहें। जहां तक आराधना-उपासना के अंतिम चरण में सूर्यदेवजी के नामों के स्तवन का प्रश्न है, आपका एक सहस्रनाम और एक अष्टोत्तर शतनाम मूल स्तोत्रों और हिन्दी अनुवादों सहित पुस्तक के मध्यवर्ती अध्यायों में संकलित किए गए हैं। इसी प्रकार भगवान भास्कर के अधिक मंत्र और मंत्रों के जप तथा सिद्धि तथा यंत्र-तंत्र की साधनाओं के बारे में सम्पूर्ण शास्त्रोक्त जानकारियां अंतिम दो अध्यायों में दी गई हैं।

❑❑

अध्याय : तीन

सूर्यदेव के प्रमुख आराधक

परब्रह्म के साक्षात-स्वरूप, सृष्टि प्रकाशक एवं सम्पूर्ण जगत् के जीवन के आधार भगवान सूर्यदेव की आराधना-उपासना आदिकाल से सम्पूर्ण विश्व में व्यापक स्तर पर होती रही है। देवभूमि भारत में ही नहीं विश्व में जहां भी हिन्दू रहते हैं, वहां पर भी अधिकांश व्यक्ति प्रतिदिन प्रातःकाल भगवान भास्कर को जल अवश्य अर्पित करते हैं। शायद ही कोई एकाध ऐसा आस्थावान व्यक्ति खोजने पर मिलेगा जिसने जीवन में कभी रविवार का व्रत न किया हो। यही कारण है कि सूर्यदेवजी के भक्तों अथवा आराधक-उपासकों की सूची तो बनाई ही नहीं जा सकती, लगभग सभी व्यक्ति किसी-न-किसी रूप में आपकी महिमा को मानते ही हैं। फिर भी इस अध्याय में कुछ सर्वाधिक पूजनीय देवी-देवताओं, ईश्वर के विभिन्न अवतारों और अपने धर्म के महानायकों द्वारा की गई सूर्य आराधना की एक झलक देने की चेष्टा इस अध्याय में की जा रही है।

भगवान श्रीराम द्वारा सूर्याराधना

भगवान विष्णु के बारह कला निधान पुरुषोत्तम अवतार भगवान श्रीराम ने लंका पर चढ़ाई करते समय सेतुबन्द रामेश्वरम् में आशुतोष भगवान भोले शंकर का शिवलिंग स्थापित करके शिवाराधना की थी, वहीं युद्धभूमि में रावण का वध करने से पूर्व तीन बार भगवान सूर्यदेव के आदित्य हृदय स्तोत्र का पाठ भी किया था। महर्षि वाल्मीकि ने अपनी रामायण में इस प्रसंग की चर्चा करते हुए लिखा है कि युद्ध के अंतिम दिनों में भगवान श्रीराम, लक्ष्मणजी और उनकी सेना काफी थकी हुई थी। नाभि में अमृत होने के कारण रावण मर नहीं रहा था। सभी देवता आकाश में एकत्रित होकर उस दृश्य को देख रहे थे। इसी समय महर्षि अगस्त्य युद्धभूमि में श्रीरामजी के समक्ष अवतरित हुए। महर्षि अगस्त्य ने श्रीरामचन्द्रजी से कहा—हे राघव! निराश न हों। आप भगवान सूर्यदेवजी का ध्यान करके उनके परम प्रतापी आदित्य हृदय स्तोत्र का तीन बार पाठ कीजिए। भगवान सूर्यदेव की कृपा होने पर आप अवश्य ही रावण पर विजय प्राप्त करने में सफल होंगे। महर्षि अगस्त्य के कहने पर भगवान श्रीराम ने सूर्यदेव को नमन करने के पश्चात् पूरे विधि-विधान से

आदित्य हृदय स्तोत्र का स्तवन किया और तत्पश्चात् भगवान भास्कर की कृपा से राक्षसराज रावण का हनन करने में सफल हुए।

श्रीकृष्ण द्वारा सूर्य महिमा का वर्णन

महाभारत के युद्ध में विजय के कुछ समय बाद जब अर्जुन ने भगवान श्रीकृष्ण से कहा कि अब वह सभी सांसारिक ऐश्वर्य प्राप्त कर चुका है। अतः मोक्ष की प्राप्ति के लिए उसे किस देवी–देवता की और किस प्रकार से आराधना–उपासना करनी चाहिए। तब भगवान श्रीकृष्ण ने स्वयं अपने श्रीमुख से कहा था कि हे अर्जुन! तुम्हें ब्रह्म के साकार स्वरूप भगवान सूर्यदेव की पूजा-आराधना करनी चाहिए और अधिक से अधिक संख्या में उनके परम पवित्र आदित्य हृदय स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। यह वही आदित्य हृदय स्तोत्र है जिसका स्तवन करके युद्धभूमि में श्रीराम रावण का वध करने में समर्थ हुए थे। भगवान विष्णु के पूर्णावतार योगेश्वर श्रीकृष्ण स्वयं सूर्यदेव को ब्रह्म का साक्षात स्वरूप मानते थे। यही कारण है कि वनवास काल में जब पांचों पाण्डव और द्रौपदी वनों में भटक रहे थे और दाने–दाने को परेशान थे, तब भगवान श्रीकृष्ण ने धर्मराज युधिष्ठिर को भी सूर्यदेव की आराधना–उपासना करने की सलाह दी थी। युधिष्ठिर की सूर्याराधना पर प्रसन्न होकर ही भगवान रविदेव ने उन्हें वह अक्षय पात्र दिया था जिसमें कुछ भी न पकाने अथवा डालने के बावजूद उसमें से निकाल–निकालकर असंख्य व्यक्तियों को सभी प्रकार का भरपूर भोजन खिलाया जा सकता था।

प्रखर सूर्यभक्त कर्ण तथा कुन्ती

द्वापर युग में पाण्डवों के समान ही यों तो लगभग सभी व्यक्ति भगवान सूर्यदेव की आराधना अथवा उपासना करते थे, परन्तु उन सभी में सूर्यपुत्र कर्ण का स्थान अनन्यतम है। महाराज कुन्तभोज की पुत्री कुन्ती जब अबोध बालिका थी, तब से प्रतिदिन प्रातःकाल सूर्यदेव को जल चढ़ाने के बाद उनकी आराधना भी करती थी। उसकी आराधना पर प्रसन्न होकर भगवान सूर्यदेव ने उसे कर्ण जैसा दिव्य बालक तो दिया ही, यह भी वरदान दिया कि वह जब भी किसी देवता का आवाह्न करेगी, वह देव स्वयं साक्षात उसके सम्मुख उपस्थित हो जाएगा। सूर्यदेव के इस वरदान के बल पर ही महाराज पाण्डु से शादी के बाद कुन्ती ने क्रमशः धर्मराज, यमराज और देवराज इन्द्र को बुलाकर अपने लिए धर्मराज युधिष्ठिर, महाबली भीम और अर्जुन को पुत्र रूप में प्राप्त किया था। यही नहीं, सनतकुमारों को भी बुलवाया जिन्होंने महाराज पाण्डु की दूसरी पत्नी माद्री को नकुल और सहदेव नामक दो प्रदान किए थे। यह कथा सिद्ध करती है कि जिस व्यक्ति पर सूर्यदेव प्रसन्न

होते हैं, उस व्यक्ति की सहायता अन्य सभी देवी-देवता भी करते हैं। भगवान सूर्यदेव की आज्ञा का पालन तो सभी देव करते ही हैं, स्वयं देवता भी उनकी आराधना और स्तुतियां करते रहते हैं।

सूर्य के आशीर्वाद से कुंती को प्राप्त हुआ था कर्ण—दिव्य शक्तियों से युक्त महान योद्धा, जिसका एक नाम प्रतिसूर्य भी था

इस देवभूमि भारत में सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र, स्वयं अपनी अस्थियों का दान करने वाले महर्षि दधीचि, अतिथि सत्कार के लिए स्वयं अपने पुत्र को आरे से चीरने वाले महाराज मोरध्वज, महान धनुर्धर अर्जुन जैसे अनेक महानायक अवतरित हुए हैं। इन सभी में कर्ण का स्थान अनन्यतम है। यद्यपि महाभारत के खलनायक दुर्योधन का साथ देने के कारण सूर्यपुत्र कर्ण को धर्मशास्त्रों में वह सम्मान नहीं मिला जिसका वह अधिकारी था। परन्तु दुर्योधन का साथी और सहायक होने के बावजूद कोई उससे घृणा नहीं करता और उसका नाम आने पर सिर स्वयं ही श्रद्धा से झुक जाता है। सूर्यपुत्र होने के साथ ही कर्ण प्रखर सूर्यभक्त भी था। वह तीनों संध्याओं अर्थात् प्रात:, मध्याह्न और सायं भगवान सूर्यदेव की आराधना करता था।

कर्ण जहां अर्जुन से भी बड़ा धनुर्धर था, वहीं हरिश्चन्द्र से भी बड़ा सत्यवादी। एक बार दुर्योधन को बड़ा भाई कह देने के बाद उसने जीवन भर दुर्योधन का साथ निभाया और उसके लिए अपने प्राण भी दे दिए। देवराज इन्द्र ने जब भिक्षु का रूप धारण करके कर्ण से कवच और कुण्डल मांगे तब उसने सहर्ष अपना वक्षस्थल काटकर कवच और कानों को फाड़कर कुण्डल उन्हें दे दिए। कुन्ती को कर्ण ने वचन दे दिया था कि वह अर्जुन के अतिरिक्त उसके अन्य किसी पुत्र को नहीं मारेगा। यही कारण है कि महाभारत के युद्ध में बारम्बार अवसर मिलने पर भी धर्मराज युधिष्ठिर, महाबली भीम, नकुल अथवा सहदेव पर वार नहीं किया। कर्ण को ये दिव्य गुण और शक्तियां किसने दीं। कहने की आवश्यकता नहीं कि सूर्यदेव के आशीर्वाद से उत्पन्न होने तथा निरन्तर सूर्यदेव की नियमित आराधना करने के कारण भगवान सूर्यदेव ने ही उसे ये सभी दिव्य विभूतियां दी थीं।

सूर्य-शिष्य हनुमानजी

रामभक्त हनुमानजी को विद्यावान, गुणी और अत्यन्त चतुर के साथ ही ज्ञान और गुणों का सागर भी कहा जाता है। आखिर कौन था हनुमानजी का गुरु? उन्होंने किससे यह सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया था? रामायण और हनुमान चालीसा तो इस विषय में मौन हैं, परन्तु प्राचीन धर्मग्रंथों में इसका बड़ा ही मोहक वर्णन मिलता है। हनुमानजी बचपन में अत्यधिक बलशाली और शरारती थे। उनके पिता पवनदेवजी ने हनुमानजी को आदेश दिया कि वे सूर्यदेव के पास जाकर उनसे शिक्षा और ज्ञान प्राप्त करें। पौराणिक कथाओं के अनुसार, हनुमानजी प्रातःकाल भूलोक से उड़कर सूर्यदेव के निकट पहुंचते और दिन भर उनके रथ के साथ पूर्व से पश्चिम तक की यात्रा पूरी करने के बाद शाम को पृथ्वी पर वापस लौट आते थे। छह मास तक यह क्रम चलता रहा। इस बीच, प्रतिदिन सुबह से शाम तक भगवान सूर्यदेव धर्म और ज्ञान का उपदेश देते रहते थे और हनुमानजी लगातार उस ज्ञान को अपने मन एवं मस्तिष्क में धारण करते रहते थे। उपरोक्त कथाओं के विपरीत यद्यपि यह कथा प्रतीक रूप में है, परन्तु इस बात को तो प्रमाणित करती ही है कि भगवान सूर्यदेवजी प्रकाश के प्रबल पुंज और जीवन के सभी आधारों के प्रदायक होने के साथ ही ज्ञानदाता भी हैं। वैसे हमारे वेदों में भी गायत्री मंत्र के रूप में सविता अर्थात् सूर्यदेव से ही ज्ञान प्रदान करने और अंधकार से निकालकर प्रकाश में ले जाने की प्रार्थना की गई है।

चारों ही युगों में हमारे आराध्यदेव भगवान सूर्य नारायण जी सर्वाधिक पूजनीय देव रहे हैं और लगभग सभी धर्मशास्त्रों ने आपको न केवल सबसे बड़ा देव बल्कि ईश्वर का साक्षात स्वरूप भी माना है। सतयुग अथवा वैदिककाल में मूर्तिपूजा का

प्रचलन नहीं था। तपस्वी वर्षों के कठोर तप करते थे तो साधन सम्पन्न व्यक्ति यज्ञों का आयोजन करते थे। यज्ञों में भी सबसे अधिक आहुतियां भगवान भास्कर के विभिन्न नामों के साथ भगवान सूर्यदेव को अर्पित की जाती थीं। त्रेता युग में भगवान श्रीराम ने स्वयं सूर्यदेव की वन्दना की थी, तो महावीर हनुमानजी ने आपका शिष्यत्व ग्रहण किया था। द्वापर में जहां कुन्ती सहित सभी पाण्डव और द्रौपदी भगवान सूर्यदेव की उपासक थीं, वहीं कौरव पक्ष में भी सूर्यपुत्र कर्ण और गंगापुत्र भीष्म पितामह सूर्यदेवजी के प्रखर भक्त थे। यह कलियुग भी कोई अपवाद नहीं। राजपूतों का एक बड़ा वर्ग स्वयं को सूर्यदेव का वंशज मानते हुए अपने-आपको सूर्यवंशी कहता है, वहीं लगभग सभी हिन्दू राजपरिवार सूर्यदेव की आराधना विशेष रूप से करते हैं। यही कारण है कि सम्पूर्ण भारत के साथ-साथ नेपाल में भी विभिन्न राज-परिवारों द्वारा बनवाए गए सूर्यदेवजी के अनेक विशाल मन्दिर विभिन्न नगरों में हैं। वास्तविकता तो यह है कि भगवान सूर्यदेव की नियमित आराधना-उपासना इस लोक में सभी ऐश्वर्यों और उपलब्धियों तथा अन्त में मोक्ष प्राप्ति का सबसे सुगम और सटीक मार्ग पहले भी था, आज भी है और भविष्य में भी रहेगा। ईश्वर के साकार स्वरूप भगवान सूर्यदेवजी की आराधना-उपासना के मार्ग से भटक जाने के कारण ही आज प्रत्येक मानव, सम्पूर्ण समाज और अधिकांश विश्व इतने दुख और सन्ताप झेल रहा है। इस तथ्य को जितना शीघ्र हम समझ लेंगे तथा जितनी जल्द भगवान सूर्यदेव के शरणागत होकर उनकी आराधना-उपासना प्रारम्भ कर देंगे, उतना ही शीघ्र हमारा और विश्व का कल्याण होगा। शास्त्रीय कथन होने के साथ ही यह एक विज्ञानसम्मत सत्य भी है जिसे कोई तर्क अथवा किन्तु-परन्तु झुठला नहीं सकता।

❑❑

अर्घ्य समर्पण एवं नमस्कार

हमारे धर्म में निराकार ब्रह्म की अवधारणा के साथ ही ब्रह्मा-विष्णु-महेश के रूप ईश्वर की साकार त्रिमूर्ति भी और साथ ही तैंतीस कोटि देवी-देवता। नवग्रह और चांद-सितारे भी देवता माने गए हैं, तो ईश्वर के अनेक अवतार भी हैं। परन्तु इन सभी में भगवान सूर्यदेव ही एकमात्र वह देवता हैं, जो इन सभी श्रेणियों में न केवल हैं, बल्कि इन चारों ही वर्गों में उन्हें उच्चतम स्थान भी प्राप्त है। पृथ्वी को प्रकाश, सभी प्राणियों को जीवन शक्ति और ऊर्जा प्रदान करने के साथ ही अपनी किरणों के ताप से समुद्रों के जल को बादल बनाकर बरसाने के कारण ही आपको भगवान विष्णु का साकार रूप माना जाता है और इस रूप में आप साक्षात ईश्वर हैं। सभी ग्रहों और नक्षत्रों के आप अधिपति हैं अत: सर्वशक्तिमान ग्रह तो आप हैं ही, रात्रि को दिन में बदलने और अपने परम तेज से विश्व को प्रकाशित करने के कारण आप सबसे शक्तिशाली देव भी हैं। यही कारण है कि जहां अन्य देवी-देवता, स्वयं ईश्वर अथवा इसके अवतारों की पूजा-आराधना स्नान करने के पश्चात् मन्दिर जाकर अथवा विशिष्ट स्थान पर बैठकर की जाती है, वहीं स्नान करते समय अथवा तुरन्त बाद ही प्रत्येक आस्थावान व्यक्ति सूर्यदेव को अर्घ्य अवश्य प्रदान करता है। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति अपने आराध्यदेव से पहले भगवान सूर्यदेव का पूजन करता है।

किसी भी देवी-देवता को छोटा अथवा बड़ा कहना एक पाप है और यह पाप हम नहीं कर सकते। सभी देव हमारे लिए समान रूप से वन्दनीय और आदरणीय हैं और हम सभी को नमन करते हैं। परन्तु यह भी एक सत्य है कि अन्य सभी देवी-देवता और ग्रह-नक्षत्र जहां उस परब्रह्म का अंश रूप हैं, वही भगवान सूर्यदेवजी ब्रह्माजी, भगवान विष्णु और शिवजी का साकार संयुक्त स्वरूप होने के कारण परब्रह्म का आसानी से बोधगम्य साकार रूप हैं। यही कारण है कि वेदों में जहां सबसे अधिक मंत्र और ऋचाएं भगवान सूर्यदेवजी के प्रति समर्पित हैं, वहीं प्रत्येक व्यक्ति स्नान करते समय सूर्यदेवजी को अर्घ्य अवश्य समर्पित करे, यह परम्परा भी वैदिककाल से ही चली आ रही है। हमारे शास्त्रों और धर्मग्रंथों में सूर्यदेवजी को अर्घ्य समर्पित करने को अनिवार्य दैनिक कर्म बताने के साथ ही अर्घ्य समर्पण के शास्त्रोक्त विधि-विधान का भी विशद विवेचन किया गया है। यह सत्य है कि आज अधिकांश व्यक्ति नदी, सरोवर, नहर अथवा तालाब में स्नान करते समय उस जल

में खड़े रहकर ही दोनों हाथों की अंजलि में जल भरकर भगवान सूर्यदेवजी को अर्घ्य समर्पित कर देते हैं। घर में स्नान करने वाले व्यक्ति प्राय: ही स्नान के पश्चात् एक पात्र में जल भरकर और सूर्यदेव की ओर मुंह करके अर्घ्य अर्पित कर देते हैं। परन्तु इस समय इनमें से अधिकांश न तो सूर्यदेव के किसी मंत्र का स्तवन करते हैं और न ही भगवान भास्कर को उचित विधि से नमस्कार ही करते हैं।

परम उदार और अत्यन्त भक्त-वत्सल हैं हमारे भगवान रविदेव। वे इस प्रकार दिए हुए अर्घ्य को भी न केवल स्वीकार कर लेते हैं, बल्कि ऐसे भक्तों की सभी आकांक्षाओं की सतत आपूर्ति भी करते रहते हैं। परंतु आप तो भगवान सूर्यदेव के भक्त हैं और उनकी आराधना-उपासना के क्षेत्र में कदम रखने जा रहे हैं, अत: भगवान सूर्यदेवजी को शास्त्रोक्त विधि-विधान से ही अर्घ्य समर्पित करें। सूर्यदेवजी को अर्घ्य अर्पित करते समय उदित होते हुए सूर्यदेवजी की ओर मुख करके खड़े होने के पश्चात् सर्वप्रथम **ॐ सूर्याय नम:** कहते हुए भगवान भास्कर को नमन करें। भगवान सूर्यदेव को हाथ जोड़कर नमस्कार करने के पश्चात् जल भरे हुए पात्र को दोनों हाथों में उठाकर अपने सिर से ऊपर ले जाएं और धार से भगवान सूर्यदेव को यह जल समर्पित करें। धार से जल डालते समय दो पंक्तियों के इस मंत्र का स्तवन करते रहें—

ॐ ऐहि सूर्य सहस्त्रासो तेजो राशि जगत्पते।
अनुकम्पय मां भक्तया गृहाणार्घ्यम् दिवाकर:॥

उपरोक्त मंत्र का मन ही मन स्तवन करते हुए भगवान सूर्यदेवजी को अर्घ्य अर्पित करने के पश्चात् **ॐ सूर्याय नम:** कहते हुए एक बार भगवान भास्कर को पुन: नमस्कार करें। इसके बाद दोनों हाथ जोड़कर आप भय-रोग निवारक और ऋद्धि-सिद्धि प्रदायक इस सूर्य स्तोत्र का मन ही मन स्तवन कीजिए—

प्रात: स्मरामि खलु तत्सवितुर्वरेण्यं,
रूपं हि मण्डल मृयोऽथ तनुर्यजूंसि।
सामानि यस्य किरणा: प्रभवा दिहेतुं,
ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्यव्यरूपम्॥ 1॥
प्रातर्नमामि तरणिं तनुवाङ् मनोभि:
ब्रह्मेन्द्र पूर्वक सुरैनर्तमर्चितं च्।
वृष्टि प्रमोचन विनिग्रहहेतुभूतं
त्रैलोक्य पालन परं त्रिगुणात्मकं च॥ 2॥
प्रातर्भजामि सविता रमन्त शक्ति
पापौ घसत्रु भय रोगहरं परं च।
तं सर्वलोक कलनात्म ककाल मूर्ति
गोकण्ठ बन्धन विमोचन मादिदेवम्॥ 3॥

श्लोक त्रयमिदं भानोः प्रातः काले पठेत्तु यः
स सर्वव्याधि निर्मुक्तः परं सुखमवाप्नुयात्॥ 4॥

स्तोत्र का अनुवाद एवं अर्थ

मैं भगवान सूर्यदेव के उस दिव्य स्वरूप का प्रातःकाल स्मरण करता हूं, जिनका मण्डल ऋग्वेद, शरीर यजुर्वेद और किरणें सामवेद हैं तथा जो ब्रह्मा, विष्णु और शंकर के रूप हैं। जो जगत् की उत्पत्ति, रक्षा और नाश के कारण हैं तथा अलक्ष्य और अचिन्त्य स्वरूप हैं॥ 1॥

मैं प्रातःकाल शरीर, वाणी और मन के द्वारा ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवताओं से स्तुत और पूजित, वृष्टि के कारण एवं विनिग्रह के हेतु, तीनों लोकों के पालन को तत्पर और सत्व स्वरूप एवं त्रिगुणरूप धारण करने वाले तरणि (सूर्य भगवान) को नमस्कार करता हूं॥ 2॥

जो पापों के समूह तथा शत्रुजनित भय एवं रोगों का नाश करने वाले हैं, सबसे उत्कृष्ट हैं, सम्पूर्ण लोकों में गणना के निमित्त काल (समय) स्वरूप हैं और गौओं के कण्ठबंधन छुड़ाने वाले हैं, उन अनंत शक्तिसम्पन्न आदिदेव सविता (सूर्य भगवान) को मैं प्रातःकाल भजता हूं॥ 3॥

जो मनुष्य प्रातःकाल सूर्य के स्मरण रूप इन तीनों श्लोकों का पाठ करेगा, वह सब रोगों से, समस्त शत्रु भय से मुक्त होकर परम सुख प्राप्त करेगा॥ 4॥

आप संस्कृत के मूल सूर्य स्तोत्र का स्तवन करें अथवा इसके हिन्दी अनुवाद का पाठ, भगवान सूर्यदेवजी को इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। भगवान सूर्यदेवजी और अन्य सभी देवी-देवता हमारी भाषा नहीं भक्त की भावना देखते हैं। यही नहीं, आप इस स्तोत्र के स्तवन के पश्चात् अथवा इस स्तोत्र के स्थान पर भगवान सूर्यदेवजी से यह प्रार्थना भी कीजिए—

दीन दयालु दिवाकर देवा, कर मुनि, मनुज, सुरासुर सेवा।
हिम-तम-करि केहरि करमाली, दहन-दोष-दुख-दुरित रुजाली॥
कोक-कोकनद-लोक प्रकाशी, तेज-प्रताप-रूप-रस-रासी।
सारथि पंगु, दिव्य रथ गामी, हरि-शंकर-विधि-मूरति स्वामी॥
वेद-पुराण प्रगट सब जागे, तुलसी सम-भगति वर मांगे।
जय सूरज जय भुवन विभाकर, जय पूषा जय प्रखर प्रभाकर॥
जय पावक रवि चन्द्र जयति जय, सत्-चित् आनन्द भूमा जय-जय।
जय-जय विश्व रूप हरि जय, जय हर अखिलात्मन, जय-जय॥
जय विराट जय जगत्पते, गौरीपति जय रमा पते॥

भगवान सूर्यदेवजी के स्तोत्र का पाठ और यह प्रार्थना करने के पश्चात् आप उन्हें एक बार पुन: नमस्कार कीजिए। जिस स्थान पर आपने अर्घ्य का जल समर्पित किया है, उस गीली भूमि को नमस्कार करने के पश्चात् दोनों हाथ की उंगलियों से स्पर्श करें और उस रज को अपने मस्तक पर लगाएं।

यद्यपि कुछ ग्रंथों में सूर्यदेवजी को अर्घ्य देते समय उनके विशेष ध्यान, प्राणायाम और अन्य अनेक कर्मकाण्डों तथा बाद में गायत्री मंत्र के जप का विधान भी बतलाया गया है। वास्तव में इस प्रकार के विधान सूर्योपासना के ही एक अंग हैं। विभिन्न ग्रंथों में वर्णित इस प्रकार के विधान भ्रामकता की सीमा तक जटिल तो हैं ही, आज के युग में उनका पालन भी सहज सम्भव नहीं। यही कारण है कि आप इस अध्याय में वर्णित विधि से भगवान सूर्यदेवजी को अर्घ्य समर्पित करें, जबकि उनका ध्यान और अन्य स्तुतियां तो आप आराधना-उपासना करते समय करेंगे ही।

द्वादश नामानि नमस्कार

सूर्यदेव के हजारों नामों में से बारह प्रमुख नामों को अलग-अलग नमस्कार करना सूर्यार्घ्य और सूर्योपासना की एक महत्वपूर्ण क्रिया है। ये बारह नमस्कार अर्थ सहित इस प्रकार हैं—

ॐ मित्राय नमः।
अर्थात् हे विश्व के मित्र सूर्य! तुम्हें नमस्कार है।

ॐ रवये नमः।
अर्थात् हे संसार में हलचल करने वाले सूर्य! तुम्हें नमस्कार है।

ॐ सूर्याय नमः।
अर्थात् हे संसार को जीवन देने वाले सूर्य! तुम्हें नमस्कार है।

ॐ भानवे नमः।
अर्थात् हे प्रकाशपुंज सूर्य! तुम्हें नमस्कार है।

ॐ खगाय नमः।
अर्थात् हे आकाश में गमन करने वाले देव! तुम्हें नमस्कार है।

ॐ पूष्णे नमः।
अर्थात् हे संसार के पोषक! तुम्हें नमस्कार है।

ॐ हिरण्यगर्भाय नमः।
अर्थात् हे ज्योतिर्मय! तुम्हें नमस्कार है।

ॐ मरीचये नमः।
अर्थात् हे किरणों के स्वामी! तुम्हें नमस्कार है।

ॐ आदित्याय नमः।

अर्थात् हे संसार के रक्षक! तुम्हें नमस्कार है।

ॐ सवित्रे नमः।

अर्थात् हे विश्व को उत्पन्न करने वाले! तुम्हें नमस्कार है।

ॐ अर्काय नमः।

अर्थात् हे पवित्रता के शोधक! तुम्हें नमस्कार है।

ॐ भास्कराय नमः।

अर्थात् हे प्रकाश के करने वाले! तुम्हें नमस्कार है।

सूर्यदेवजी के इन बारह नमस्कार मंत्रों को कण्ठस्थ करने के साथ ही इनके अर्थों अर्थात् इन नामों के अभिप्रायों को भी भली प्रकार समझ लीजिए। इन सभी नामों के अभिप्राय समझ लेने पर आपको सूर्यदेव के स्वरूपों की झांकी मन-मन्दिर में बसाने में आसानी तो रहेगी ही, इनमें से किसी भी एक नमस्कार का सूर्य मंत्र के रूप में आप जप भी कर सकते हैं। वास्तव में ये बारहों नमस्कार जपने के लिए भगवान सूर्यदेव के सबसे सुगम और शक्तिशाली मंत्र हैं। यही कारण है कि पूजा, आराधना अथवा उपासना करते समय आप इनमें से किसी भी एक नमस्कार की कम से कम एक माला तो जपें ही, वैसे जितना अधिक यह जप किया जाए उतना ही कम है। यही नहीं, प्रातःकाल उदित होते हुए सूर्यदेव की तरफ मुंह करके आप घुटनों के बल बैठ जाएं। प्रत्येक मंत्र का स्तवन करते हुए उन्हें दण्डवत प्रणाम करें और प्रत्येक प्रणाम के बाद बैठ जाएं और फिर दण्डवत प्रणाम करें। इस प्रकार सूर्यदेवजी को नमस्कार के साथ ही एक अच्छा व्यायाम भी हो जाएगा। प्राचीनकाल में तो साधु-संत, विद्यार्थी, ऋषि-मुनि और हठयोगी बारह जटिल आसन बना-बनाकर सूर्यदेव को यह बारह नमस्कार करते थे। उनके अच्छे स्वास्थ्य और दीर्घ-आयु का एक प्रमुख कारण उनका यह सूर्य नमस्कार भी था।

❑❑

रविवार व्रत-विधान व कथा

एकादशी और प्रदोष व्रत के समान ही रविवार को सूर्यदेव के निमित्त व्रत भी अधिकांश व्यक्ति रखते ही हैं। एकादशी का व्रत भगवान विष्णु के और प्रदोष व्रत आशुतोष भगवान शिव के निमित्त रखे जाते हैं, तो रविवार का यह साप्ताहिक व्रत भगवान भुवन भास्कर की विशेष कृपाओं की प्राप्ति के लिए रखा जाता है। यद्यपि शनिवार को शनिदेव के और गुरुवार को देवगुरु बृहस्पतिदेव के निमित्त भी व्रत रखे जाते हैं। परन्तु यहां एक बड़ा अन्तर है। अन्य ग्रहों के व्रत तो ग्रह विशेष के रुष्ट होने अथवा खराब स्थिति में चलने पर रखे जाते हैं, परन्तु सूर्यदेव के निमित्त यह व्रत सामान्य रूप से रखते रहने पर कोई भी ग्रह अपना दुष्प्रभाव दिखला ही नहीं पाता। सभी ग्रहों, राशियों और नक्षत्रों के अधिपति भगवान सूर्यदेव हैं, अतः आपके प्रसन्न बने रहने पर अन्य कोई ग्रह अथवा शक्ति कुपित होने का साहस कर ही नहीं पाता। यही नहीं, हमारे शास्त्रों में सूर्यदेव को भगवान विष्णु का साक्षात रूप कहा गया है। यही कारण है कि आपके भक्तों को इस लोक में सभी सुख तो सतत रूप से मिलते ही रहते हैं, अन्त में मोक्ष भी प्राप्त हो जाता है।

व्रत का विधि-विधान तथा उद्यापन

अधिकांश व्यक्ति किसी भी रविवार से व्रत प्रारम्भ करके जीवन भर यह व्रत रखते रहते हैं। ज्ञान के अभाव में अधिकांश व्यक्ति भगवान सूर्यदेव की विशिष्ट पूजा भी नहीं करते, दोपहर को कहानी सुनकर सूर्यास्त से पहले एक बार भोजन करके ही व्रत का समापन कर लेते हैं। परम कृपालु और भक्त-वत्सल हैं हमारे भगवान भुवन-भास्कर और यही कारण है कि वे इस प्रकार के भक्तों की भी सभी मनोकामनाओं की आपूर्ति करते रहते हैं। वैसे स्कन्दपुराण में इस रविवार व्रत का अत्यन्त विस्तृत विवेचन है, जो संक्षेप में इस प्रकार है—

स्कन्दपुराण के अनुसार आश्विन मास अर्थात् क्वार के शुक्ल पक्ष के अंतिम रविवार से व्रत प्रारम्भ करना अधिक फलप्रद रहता है। पांच वर्ष कुछ माह तक लगातार यह व्रत रखने के पश्चात् छठे वर्ष में माघ मास की सप्तमी को इस व्रत का उद्यापन किया जाता है। यहां विशेष ध्यान रखने की बात यह है कि सूर्यदेव के

निमित्त किए जाने वाले रविवार व्रत का उद्यापन आप माघ मास की सप्तमी को करेंगे, चाहे उस दिन रविवार हो या अन्य कोई भी वार। उद्यापन में बारह ब्राह्मणों को भोजन कराने और उन्हें वस्त्र एवं दक्षिणा आदि देने का विधान है। क्या-क्या और कितना-कितना दिया जाए यह आपकी श्रद्धा एवं सामर्थ्य पर निर्भर करेगा। वैसे भी बहुत ही सरल-सुगम और न्यूनतम व्ययसाध्य है भगवान भास्कर का यह व्रत। आप भोजन तो दिन में एक ही बार करेंगे, परन्तु फलाहार अनिवार्य नहीं, केवल नमक और तेल का प्रयोग वर्जित है। नमक, खटाई, सभी प्रकार के क्षार और खट्टे फल आप इस व्रत में न खाएं, परन्तु दही का प्रयोग कर सकते हैं।

पांच वर्ष तक यह व्रत रखा जाता है और प्रत्येक वर्ष में एक-एक अनाज भगवान सूर्यदेव के निमित्त छोड़ा जाता है। आप जिस अनाज को छोड़ते हैं, उस अनाज को व्रत के दिन नहीं खाते, वैसे बाकी छह दिनों में आप उसका प्रयोग कर सकते हैं। पहले वर्ष में जौ, दूसरे वर्ष में गेहूं, तीसरे में चना, चौथे में तिल और पांचवें वर्ष में उड़द छोड़ने का विधान है। शास्त्रों का कथन है कि आपने जो अनाज छोड़ा है, वर्ष के अन्त में अपनी सामर्थ्यानुसार वही अनाज ब्राह्मणों को दान में दें और प्रति वर्ष के अन्त में बारह ब्राह्मणों को भोजन भी कराएं। इससे परम प्रसन्न होंगे भगवान सूर्यदेव और आपके व्रत का पुण्यफल कई गुना बढ़ जाएगा।

रविवार के व्रत में भोजन सूर्य अस्त होने से पहले ही कर लेना चाहिए, सूर्यास्त के पश्चात् तो जल पीने का भी निषेध है। यदि कभी किसी कारणवश आप व्रत न खोल पाएं और सूर्य छिप जाए तब फिर उस दिन कुछ भी न खाएं और न ही सूर्यास्त के बाद जल ही पिएं। दूसरे दिन सूर्योदय के पश्चात् सूर्यदेव को अर्घ्य चढ़ाने के बाद ही अन्न-जल ग्रहण करें। जहां तक सूर्यदेव की सामान्य पूजा का प्रश्न है, स्नान के पश्चात् स्वच्छ सफेद वस्त्र धारण करें और गाय के गोबर से भूमि पर बारह दल का कमल बनाएं। इस कमल को गेहूं के आटे, रोली और हल्दी से सजाकर इसके मध्य जल से भरा पात्र रखें। जल से भरे लोटे या घड़े के मुंह पर तस्तरी रखकर लाल कपड़ा ढका जाता है और उस पर रखते हैं भगवान भास्कर अर्थात् सूर्यदेव की मूर्ति, चित्र अथवा उनका यंत्र। सूर्यदेव की पूजा-आराधना में लाल वस्तुओं को विशेष महत्त्व प्राप्त है। अतः आप लाल चन्दन, लाल वस्त्र और लाल फूलों का प्रयोग करें। गेहूं और गुड़ का प्रयोग भी सूर्यदेव की पूजा में आप कर सकते हैं। जहां तक धूप, दीप और नैवेद्य का प्रश्न है, सभी पूजाओं के अनिवार्य अंग हैं और सूर्यदेव की पूजा भी इसका अपवाद नहीं।

महीनों के अनुसार विशिष्ट विधान

सूर्यदेव के निमित्त रविवार का व्रत पांच वर्ष तक रखा जाता है और प्रति वर्ष

आप एक अनाज भोजन में छोड़ते भी हैं। परन्तु इससे भी बड़ी विशेषता इस व्रत में यह है कि वर्ष के प्रत्येक मास में सूर्यदेव का पूजन उनके अलग-अलग नामों से किया जाता है और नाम के अनुरूप ही प्रयोग किया जाता है नैवेद्य का। आप सूर्यदेव की सम्पूर्ण पूजा तो प्रत्येक मास में सामान्य रूप से करेंगे ही, प्रत्येक मास में ये कार्य अतिरिक्त रूप से किए जाएंगे।

हमारे भारतीय नव वर्ष का प्रारम्भ चैत्र मास से होता है। होलिका दहन के दूसरे दिन से प्रारम्भ हो जाता है चैत्र मास। इस मास के सभी रविवारों को रविदेव का पूजन उनके भानु नाम से किया जाता है। आप मूर्ति अथवा यंत्र तो सूर्यदेव का ही पूजेंगे, परंतु उनके नाम का स्मरण भानु कह कर करेंगे। भानु के पूजन में पूड़ियों, घी और अनार का भोग सूर्यदेव को लगाया जाता है। मिठाई के दान का विधान है और व्रतधारक को स्वयं दूध पीना चाहिए। आगामी मास वैशाख में मौसम गरम होकर भूमि तपने लग जाती है। यही कारण है कि वैशाख मास में सूर्यदेव का पूजन आप 'तपनदेव' के नाम से करेंगे। तपनदेव को उड़द की दाल के घी में तले हुए पूड़ों, उड़द की दाल के हलवे और मुनक्कों का भोग लगाया जाता है। इस मास में सूर्यदेव के निमित्त घी और उड़द के दान का विशेष महत्व है, जबकि व्रतधारक द्वारा गाय के दूध और दही के सेवन का शास्त्रीय विधान है।

ज्येष्ठ मास में भीषण गरमी पड़ने लगती है और हर प्राणी करने लगता है वर्षा की चाह। यही कारण है कि ज्येष्ठ मास में सूर्यदेव के इन्द्र रूप की पूजा की जाती है। इन्द्रदेव वर्षा के देवता और देवराज हैं, जबकि वर्षा का वास्तविक कारण तो सूर्य के प्रखर ताप से बनने वाली वाष्प ही है। यही नहीं, सभी ग्रहों के केन्द्रबिन्दु और प्रकाश एवं ऊर्जा का एकमात्र स्रोत होने के कारण भास्कर सभी देवों के अधिपति और ईश्वरीय शक्तियों का साक्षात रूप भी हैं। यही कारण है कि दिवाकर, वरुण, इन्द्र, विष्णु, गभास्ते और काल नियन्ता अर्थात् यमराज आदि भी सूर्यदेव के नाम माने गए हैं। ज्येष्ठ मास में आप सूर्यदेव का पूजन उनके इन्द्र रूप का करेंगे और उन्हें दही और सतुए का विशिष्ट भोग तथा आम का फल अर्घ्य के रूप में प्रस्तुत करेंगे। शास्त्रीय विधान के अनुसार इस मास में दही और भात का दान करना चाहिए तथा व्रतधारक को तीन अंजलि जल का प्राशन करना चाहिए।

आषाढ़ मास में सूर्यदेव का पूजन उनके लोक प्रचलित नाम सूर्य से ही किया जाता है। आप प्रसाद के रूप में तो किसी भी वस्तु का भोग लगा सकते हैं परन्तु सूर्यदेव को अर्घ्य चिड़वे का दें तथा अनाजों का दान करें। व्रतधारक को तीन काली मिर्चों का प्राशन करना चाहिए। श्रावण मास में 'गभस्ति' नाम से सूर्यदेव का पूजन

किया जाता है। पूड़ी और सतुए का भोग और फलों का अर्घ्य सूर्यदेव को अर्पित करने तथा तैयार भोज्य पदार्थों का दान करने और व्रतधारक द्वारा तीन मुट्ठी सत्तू का प्राशन करने का शास्त्रीय विधान है। भाद्रपद मास के रविवारों को आप सूर्यदेव का ध्यान और पूजन 'यम' नाम से करें। घी और चावल का भोग लगाएं, कूष्माण्ड का अर्घ्य दें, भोजन का दान करें तथा स्वयं गोमूत्र का प्राशन करें, ऐसा शास्त्रीय विधान है।

आश्विन मास को लोकभाषा में क्वार का महीना कहा जाता है। पितृपक्ष के इस मास में सूर्यदेव कन्या राशि में प्रवेश करते हैं अत: 'हिरण्यरेता' नाम से आपका पूजन किया जाता है। इस मास में सूर्यदेव को शक्कर का नैवेद्य और दाड़िम का अर्घ्य प्रदान किया जाता है और व्रतधारक को भी तीन पल खाण्ड (शक्कर) का प्राशन करना चाहिए। चावल और शक्कर के दान का इस मास में विशेष महत्व है। कार्तिक मास में सूर्यदेव की पूजा दिवाकर नाम से की जाती है। इस मास में सूर्यदेव को केले का अर्घ्य और खीर का नैवेद्य चढ़ाया जाता है तथा खीर का ही दान और प्राशन किया जाता है। मार्गशीर्ष अर्थात् अगहन मास में 'मित्र' नाम से सूर्यदेव की पूजा की जाती है और उन्हें चावलों का भोग लगाया जाता है। इस मास में घी और गुड़ के दान तथा तुलसीदलों अर्थात् तुलसी की पत्तियों के प्राशन का शास्त्रीय विधान है।

परमेश्वर भगवान विष्णु का स्थूल रूप माना जाता है सूर्यदेव को। पौष मास में आप सूर्यदेव की पूजा उनके विष्णु नाम से करेंगे। अन्य सभी मासों के समान ही इस मास में भी आप पूजा-आराधना तो सूर्यदेव की ही करेंगे, परन्तु उन्हें सम्बोधित करेंगे विष्णु नाम से। आप सूर्यदेव को मूंग की दाल, चावल और तिलों की बनी हुई खिचड़ी का भोग तथा बिजौरे (एक प्रकार के बड़े नीबू) का अर्घ्य अर्पित करें। स्वयं तीन पल शुद्ध घी का प्राशन करें और शुद्ध घी का ही दान करें। माघ मास में सूर्यदेव का पूजन 'वरुण' नाम से किया जाता है। सूर्यदेव को गुड़ और तिल नैवेद्य के रूप में और मौसम में उपलब्ध फल अर्घ्य के रूप में अर्पित किए जाते हैं। इस मास में व्रतधारी को तीन मुट्ठी तिलों का भोजन करना चाहिए और देना चाहिए फलों का दान। वर्ष के अंतिम मास फाल्गुन में सूर्यदेव का पूजन 'सूर्य' नाम से करें। इस मास में भगवान को दही और घी का भोग तथा जम्भीरी का अर्घ्य प्रस्तुत करने का विधान है। व्रतधारक को स्वयं भी दही, शक्कर और चावल का भोजन करना चाहिए और ब्राह्मण को बिना पकाए हुए चावल दान में देने चाहिए।

सूर्य की आराधना से आत्मोन्नति होती है। सूर्य पूजन से विवेक जागृत होता है। विद्या की प्राप्ति के लिए भी सूर्य पूजन-आराधन का विधान है। रोगमुक्त एवं

स्वस्थ होने के लिए सूर्योपनिषद् के पाठ की चर्चा शास्त्रों में की गई है—[illegible] से मुक्ति के लिए सूर्य दर्शन-पूजन करना उपयोगी सिद्ध होता है।

रविवार व्रत कथा

एक बुढ़िया थी। उसका नियम था कि प्रति रविवार को सवेरे ही स्नान आदि कर घर को गोबर से लीपकर फिर भोजन तैयार कर भगवान को भोग लगा स्वयं भोजन करती थी। ऐसा व्रत करने से उसका घर अनेक प्रकार के धन-धान्य से पूर्ण था। श्रीहरि कृपा से घर में किसी प्रकार का विघ्न या दुख नहीं था सब प्रकार से घर में आनन्द रहता था। इस तरह कुछ दिन बीत जाने पर उसकी एक पड़ोसिन, जिसकी गौ का गोबर वह लाया करती थी, विचार करने लगी यह वृद्धा सर्वदा मेरी गौ का गोबर ले जाती है, इसलिए अपनी गौ को अपने घर के भीतर बांधने लग गई। इस कारण बुढ़िया गोबर न मिलने से रविवार के दिन अपने घर को न लीप सकी। तब उसने न तो भोजन बनाया और न भगवान को भोग लगाया तथा स्वयं भी उसने भोजन नहीं किया। इस प्रकार उसे निराहार व्रत किए रात्रि हो गई। वह भूखी-प्यासी सो गई। रात्रि में भगवान ने उसे स्वप्न दिया और भोजन न बनाने तथा भोग न लगाने का भेद पूछा। वृद्धा ने गोबर न मिलने का कारण सुनाया। तब भगवान ने कहा कि माता, हम तुमको ऐसी गौ देते हैं जिससे सभी इच्छाएं पूर्ण होती हैं। क्योंकि तुम हमेशा रविवार को गौ के गोबर से लीपकर भोजन बनाकर मेरा भोग लगाकर खुद भोजन करती हो, इससे मैं खुश होकर यह वरदान देता हूं। ऐसा करने से मैं अत्यन्त सन्तुष्ट होता हूं। निर्धन को धन और बांझ स्त्रियों को पुत्र देकर दुखों को दूर करता हूं तथा अंत समय में मोक्ष देता हूं। स्वप्न में ऐसा वरदान देकर भगवान सूर्यदेव अंतर्धान हो गए।

जब वृद्धा की आंख खुली तो वह क्या देखती है आंगन में एक अति सुन्दर गौ और बछड़ा बंधे हुए हैं। वह गौ और बछड़े को देखकर अति प्रसन्न हुई और उसको घर के बाहर बांध दिया और वहीं खाने को चारा डाल दिया। जब उसकी पड़ोसिन ने बुढ़िया के घर के बाहर एक अति सुन्दर गौ और बछड़े को देखा तो द्वेष के कारण उसका हृदय जल उठा और जब उसने देखा कि गौ ने सोने का गोबर किया है तब उस गौ का गोबर ले गई और अपनी गौ का गोबर उसकी जगह पर रख गई। वह नित्य प्रति ऐसा ही करती रही और सीधी-साधी बुढ़िया को इसकी खबर नहीं होने दी। तब सर्वव्यापी सूर्यदेव ने सोचा कि चालाक पड़ोसिन के कर्म से बुढ़िया ठगी जा रही है। उन्होंने संध्या के समय अपनी माया से बड़े जोर से आंधी चला दी। इससे बुढ़िया ने आंधी के भय से अपनी गौ को घर के भीतर बांध लिया। प्रात:काल उठकर जब वृद्धा ने देखा कि गौ ने सोने का गोबर दिया है तो उसके आश्चर्य की

सीमा न रही और वह प्रतिदिन गौ को घर के भीतर ही बांधने लगी। उधर, पड़ोसिन ने देखा कि गऊ घर के भीतर बांधने लगी है तो उसका सोने का गोबर उठाने को दांव नहीं चलता। वह ईर्ष्या और डाह से जल उठी।

कुछ और उपाय न देख पड़ोसिन ने उस देश के राजा की सभा में जाकर कहा—महाराज! मेरे पड़ोस में एक वृद्धा के पास ऐसी गौ है जो आप जैसे राजाओं के ही योग्य है, वह नित्य सोने का गोबर देती है। आप उस सोने से प्रजा का पालन करिए। वह वृद्धा इतने सोने का क्या करेगी। राजा ने यह बात सुन अपने दूतों को वृद्धा के घर से गऊ लाने की आज्ञा दी। वृद्धा प्रातः ईश्वर का भोग लगा भोजन ग्रहण करने ही जा रही थी कि राजा के कर्मचारी गऊ खोलकर ले गए। वृद्धा काफी रोई-चिल्लाई किन्तु राज्य-कर्मचारियों के समक्ष कोई क्या करता? उस दिन वृद्धा गौ के वियोग में भोजन न खा सकी। रात भर रो-रोकर सूर्यदेवजी से गऊ को पुनः पाने के लिए प्रार्थना करती रही। उधर, राजा गऊ को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। लेकिन सुबह जैसे ही वह उठा, सारा महल गोबर से भरा दिखाई देने लगा। राजा यह देख घबरा गया।

रात्रि में राजा को स्वप्न में भगवान सूर्यदेवजी ने कहा कि राजा यह गाय वृद्धा को लौटाने में ही तेरा भला है। उसके रविवार के व्रत से प्रसन्न होकर मैंने उसे यह गाय दी है। प्रातः होते ही राजा ने वृद्धा को बुला बहुत से धन के साथ सम्मान सहित गऊ-बछड़ा लौटा दिए। उसकी पड़ोसिन दुष्ट बुढ़िया को बुलाकर उचित दंड दिया। तब जाकर राजा के महल से गंदगी दूर हुई। उस दिन से राजा ने नगर निवासियों को आदेश दिया कि राज्य में सभी स्त्री-पुरुष अपनी समस्त मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए रविवार का व्रत किया करें। व्रत करने से नगर के लोग सुखी जीवन व्यतीत करने लगे। कोई भी बीमारी या प्रकृति का प्रकोप उस नगर पर नहीं होता था। सारी प्रजा सुख से रहने लगी।

॥ इति रविवार व्रत कथा ॥

❑❑

नमस्कार स्तुतियां एवं वन्दनाएं

भुवन भास्कर भगवान सूर्यदेव जहां सभी ग्रहों, राशियों और नक्षत्रों के स्वामी हैं, वहीं सर्वाधिक पूजनीय पांच प्रमुख देवों में भी एक हैं। प्रकाश और ताप के प्रदायक होने के कारण जहां आप जीवन का आधार हैं, वहीं अपने ताप से पानी को मेघों के रूप में परिवर्तित करके वर्षा लाने वाले देव भी। आपको साक्षात विष्णु माने जाने का कारण ही यह है कि आप इस भूमण्डल में जीवन के आधारों—अन्न, जल, प्रकाश आदि—को देने वाले हैं। यही नहीं, हमारे धर्म के सबसे महत्वपूर्ण मंत्र 'गायत्री-मंत्र' के प्रधान देवता सविता भी आप ही हैं। अन्न, जल, जीवन, ज्ञान और प्रकाश की प्राप्ति के लिए वैदिककाल से ही हमारे ऋषि-मुनि भांति-भांति से आपकी स्तुतियां, आरतियां, वन्दनाएं, प्रार्थनाएं आदि करते रहे हैं। उनमें से कुछ चुनी हुई आसान स्तुतियां, वन्दनाएं और प्रार्थनाएं इस अध्याय में संगृहीत की जा रही हैं।

प्रात: कालीन सूर्य-स्तुति

प्रातः स्मरामि खलु तत्संवितुर्वरेण्यं,
रूपं हि मण्डलमृचोऽथ तनुर्जयूंषि।
मायामि यस्य किरणाः प्रभवादि हेतुं,
ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्य रूपम्॥ 1॥
प्रातर्नमामि तरणिं तनुवाड्मनोभिः,
ब्रह्मेन्द्रपूर्वक सुरैर्नतमचितं च।
वृषिट प्रमोचनविनिग्रहहेतुभूतं,
त्रैलोक्यपालनपरं त्रिगुणात्मकं च॥ 2॥
प्रातर्भजामि सवितारमनन्तशक्तिं,
पापौघशत्रुभयरोग हरं परं च।
तं सर्वलोक कलनात्मक कालमूर्तिं,
गोकण्ठबन्धन विमोचनादि देवम्॥ 3॥

मध्याह्न (दोपहर) कालीन सूर्य-स्तुति

य उदगान् महतोऽर्णवात्,
विभ्राजमानः सलिलस्य मध्यात्।
स मा वृषभो लोहिताक्षः,
सूर्यो विपश्चिन्मनसा पुनातु॥

सायंकालीन सूर्य-स्तुति

ध्येयः सदा सवितृ मण्डल मध्यवर्ती,
नारायणः सरसिजासन सैनिविष्टः।
केयूरधान् मकरकुण्डलवान् किरीटी,
हारी हिरण्मय वपुर्धृत शंख चक्रः॥

सूर्य नमस्कार

नमो भास्करं विश्व पालं दयालम्।
नमो मार्तण्डम्, नमामी कृपालम्॥
नमो अर्क पूषा तपन चित्र भनु।
नमो हे दिनेशं तिमिर हर प्रकाशम्॥
नमो विघ्नहर्ता, नमो विश्व तारण।
नमो रक्त चन्दन दिपै नाथ भलम्॥
नमो द्युतिमणि स्वामी प्रभाकर दिवाकर।
नमो रवि विरोचन विकर्तन विशालम्॥
नमो सूर्य सविता अहस का पतंगा।
नमो मित्र गृहपति अरुण दैत्य द्यालम्॥
नमो हंस हरि दृश्य भास्वान तापन।
नमो अर्हपति विभावसु त्रिकालम्॥
नमो सहस्रासु मिहिर उष्ण रस्मिन्।
नमो तरणि तमाश्व करिये निहालम॥
नमो नाभ विवस्वान बन्दौ त्विषापति।
नमो नाथ अस्तुति करति भक्त आपम॥

सूर्यदेव की वंदना

जय कश्यप-नन्दन, ओ३म् जय अदिति-नन्दन।
त्रिभुवन-तिमिर-निकन्दन, भक्त-हृदय-चन्दन॥ टेक॥
सप्त-अश्वरथ राजित, एक चक्र धारी।
दुःखहारी, सुखकारी मानस-मल हारी॥ जय॥
सुर-मुनि-भूसुर वन्दित विमल विभवसाली।
अघ-दल-दलन दिवाकर दिव्य किरणमाली॥ जय॥
सकल सुकर्म प्रसविता सविता शुभकारी।
विश्व विलोचन मोचन भव बंधन हारी॥ जय॥
कमल समूह विकाशक, नाशक त्रय तापा।
सेवत सहज हरत मनसिज सन्तापा॥ जय॥
नेत्र व्याधि हर सुरवर भू पीड़ा हारी।
सृष्टि विलोचन परहित व्रतधारी॥ जय॥
सूर्यदेव करुणाकर अब करुणा कीजै।
हर अज्ञान मोह सब तत्व ज्ञान दीजै॥ जय॥

ज्ञान देने हेतु प्रार्थना

हे ज्ञानदाता विश्वपति, अज्ञान सब हर लीजिए।
हो नम्रता का भाव दृढ़, जिय मध्य शान्ती दीजिए।
ना दुःख देवें और को, सबके हितैषी हम रहें।
भय दूर हो संशय सभी, श्रद्धा निगम, आगम लहें॥
सन्तोष राखें चित्त में, अरु भजें प्रतिदिन नाम को।
जग दुःख सब ही दूर हों, ध्रुव तुल्य दो निज धाम को॥
तुम पतितपावन हो सदा, मुझ अधम को भी तारिए।
मैं दीन होकर शरण ली, प्रभु कृपादृष्टि धारिए॥
नित दम्भ त्यागें क्रूरता, भय दोष संकट दूर हों।
गुरु सीख को उर धार के, आनन्द से भरपूर हों॥
हे भक्तवत्सल दयाकर, सद्भक्ति में दृढ़ प्रीति दो।
सब नीच संगति त्याग के, सत्संगति शुभ नीति दो॥
हम शान्ति पावें रैन दिन, संसार से मन मोड़ के।
है याचना जन की यही, दो मुक्ति-बन्धन तोड़ के॥
बहु श्रेष्ठ साधन पुष्ट हो, नित एक आतम ध्याएं हम।
अब मिले ब्रह्मानन्द गति, निर्वाण शान्ति पाएं हम॥

भक्तिभाववर्द्धन हेतु प्रार्थना

हे सृष्टिनायक दयानिधि, यह प्रार्थना है आप से।
सन्मार्ग में आरूढ़ हों, बचते रहें बहु पाप से॥
सात्विक हमारे भाव हों, लवलीनता तुम में सदा।
कर्तव्य पालें धर्म युत, संतुष्ट रहवें सर्वदा॥
उत्साह मन में हो बहुत, शुभ बुद्धि आस्तिक धारकर।
सद्भाव होवें दास के, नित काम क्रोधहिं मारकर॥
हो त्याग मादक वस्तु का, सद्गुणों का नित बल रहे।
लखि एक रूप अनूप विभु, उर प्रेम-धारा जल बहे॥
अज्ञान होवे दूर सब, आगम निगम विश्वास हो।
उपकार में श्रद्धा बढ़े, दुर्भाव त्यागें दास हो।
करुणानिधे विनती यही, निज कृपादृष्टि धारिए।
मैं किए अत्याचार बहु, सम गज अजामिल तारिए॥
ममता अहंता नष्ट कर, सब ही दुराशा दाग दो।
हो नष्ट इच्छा भोग की, निज रूप में अनुराग दो॥
आनन्द पावें हम सभी, प्रभु आपका ही ध्यान हो।
लहि पूर्ण ब्रह्मानन्द तब, जब एक चेतन ज्ञान हो॥

❑❑

सूर्याष्टक एवं चालीसे

आप भगवान भुवन-भास्कर भगवान सूर्यदेव की मानसिक उपासना करें या विग्रह अथवा चित्र सम्मुख रखकर पूजा-आराधना, रविदेव के किसी मंत्र का जप करें अथवा सामान्य रूप से उन्हें अर्घ्य प्रदान करें, अंतिम चरण में इस अष्टक का पाठ अवश्य करें। आज सुबह, शाम और दोपहर तीनों संध्याएं कर पाना तो आम आदमी के लिए सहज सम्भव नहीं, वैसे यदि आप भगवान सूर्यदेव का ध्यान कर लेने के बाद इस अष्टक का पाठ कर लेंगे, तब भी भगवान भास्कर सहज ही आपको अपने सबसे प्रिय पुत्रों में से एक मान लेंगे। जहां तक चालीसों का प्रश्न है, पूजा-आराधना के अन्त में तो अष्टक के समान ही उच्च स्वर में चालीसे का पाठ किया ही जाता है, दिन में भी मन ही मन इसे निरन्तर दोहराते रहें। भगवान सूर्यदेव के श्रीचरणों में प्रीति बढ़ाने और दुष्कर्मों तथा कुविचारों से बचाए रखने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निबाहता है चालीसों, अष्टकों, प्रार्थनाओं, विनतियों और आरतियों का निरन्तर पाठ। यह आवश्यक नहीं कि उच्च स्वरों में ही इनका गायन किया जाए, कार्य करते हुए अथवा जब भी समय मिल जाए बारम्बार इन्हें मन ही मन दोहराते रहें।

सूर्यदेव की स्तुति

बन्धूक पुष्प सङ्काशं हारकुण्डल भूषितम्।
एकचक्रधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्॥ 1॥

तं सूर्य जगकर्तारं महातेजः प्रदीपनम्।
महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्॥ 2॥

तं सूर्य जगता नाथं ज्ञान विज्ञान मोक्षदम्।
महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्॥ 3॥

सूर्याष्टक

आदिदेव नमस्तुभ्यं प्रसीद मम भास्करं।
दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोऽस्तुते॥ 1 ॥
सप्ताश्वरथमारूढ़ प्रचंड कश्यपात्मजम्।
श्वेत पद्म धरं देवं तं सूर्य प्रणमाम्यहम्॥ 2 ॥
लोहितरथमारूढं सर्व लोक पितामहम्।
महापाप हरं देवं तं सूर्य प्रणमाम्यहम्॥ 3 ॥
त्रैगुण्यं च महाशूरं ब्रह्माविष्णु महेश्वरम्।
महापाप हरं देवं तं सूर्य प्रणमाम्यहम्॥ 4 ॥
वृहित्तेजः पूज्यं च वायुमाकाशमेव च।
प्रभुं च सर्व लोकानां तं सूर्य प्रणमाम्यहम्॥ 5 ॥
बधून्क पुष्प संकाश हार कुण्डल भूषिताम्।
एक चक्रधरं देवं तं सूर्य प्रणमाम्यहम्॥ 6 ॥
तं सूर्य जगत्कर्तारं महातेजः प्रदीपनाम्।
महापाप हरं देवं तं सूर्य प्रणमाम्यहम्॥ 7 ॥
तं सूर्य जगतां नाथं ज्ञान विज्ञान मोक्षकम्।
महापाप हरं देवं तं सूर्य प्रणमाम्यहम्॥ 8 ॥

सूर्य मण्डलाष्टकम्

नमः सवित्रे जगदेक चक्षुषे जगत्प्रसूति स्थिति नाश हेतवे।
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे विरञ्चिनारायण शङ्करात्मने॥ 1 ॥
यन्मण्डलं दीप्तिकरं विशालं रत्नप्रभं तीव्रमनादिरूपम्।
दारिद्रय दुःखं क्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 2 ॥
यन्मण्डलं देवगणैः सुपूजितं विप्रैः स्तुतं भावनमुक्ति कोविदम्।
तं देवदेवं प्रणमामि सूर्यं नमामि सर्वं शुचि देव देवम्॥ 3 ॥

सूर्यदेव का चालीसा

दोहा—जय दिनकर जय दिवाकर, दीन दयालु दिनेश।
जय जगपालक प्रभाकर, कीजे हरण कलेश।

चौपाइयां

जयति सूर्यनारायण स्वामी, करहु अनुग्रह अन्तर्यामी।
अगम कांतिधर गगन बिहारी, अनुपम ज्योति कला छवि न्यारी।
युग सहस्त्र योजन तनु राजै, माथे कनक मुकुट मणि साजै।
कुंडल कलत कपोलन सोहै, जिहि लखि तेज तेजपति मोहै।
षट्दश श्वेत वरण हय नाथे, अरुण सारथी रजुकर साधे।
नौ लक्ष योजन रथ चौड़ाई, जो बत्तीस लक्ष लम्बाई।
रत्नजड़ित रथ पर प्रभु राजित, जिन गति देख चंचला लाजित।
नौ करोड़ इक्यावन लाखा, परिक्रमा रवि की श्रुति भाखा।
अगणित दैत्य नित्य संहारैं, निज भक्तन के कष्ट निवारैं।
उदय होत निशितम अघ भाजै, जयति जयति जय डंका बाजै।
धनि-धनि भानु रूप भगवाना, तव महिमा प्रत्यक्ष बखाना।
अगम प्रताप अतुल बलधारी, महिमा वर्णत हैं त्रिपुरारी।
सुनहु उमा शुभ चरित दिनेशा, सकल हरण जन कष्ट कलेशा।
कुष्ठ वरण जेहिके तन होई, रवि पर ध्यान धरे यदि सोई।
व्रत बिनु लोन करै रविवारा, ब्रह्मचर्ययुत धारि विचारा।
द्विज सन रविकर सुनै पुराना, पूजन करै राखि उर ध्याना।
हवन कराइ धरे मन धीरा, सोइ भस्म लै मलै शरीरा।
निश्चय छूटै कष्ट कलेशा, ऐसे दीन दयाल दिनेशा।
अंधहु प्रभु महं ध्यान लगावै, निश्चय दिव्य दृष्टि को पावै।
जो निश्चय कर प्रेम प्रतीती, निश दिन रवि पर धारै प्रीती।
रवि दिन प्रेम सहित चितलाई, सूर्य पुराण सुनै सुखदाई।
करै नेम द्वादश रविवारा, रहै नमक बिनु एक अहारा।
करै शयन कुश कास चटाई, हर्षित सदा सूर्य गुण गाई।
जो अस प्रभु महं ध्यान लगावै, बन्ध्यहु नारि पुत्र सुख पावै।
कह शिव संशय करै न कोई, सत्य बचन मम वृथा न होई।
जग हित लागि प्रेम रस बानी, सुनि अस गौरि हृदय हर्षानी।
धन्य-धन्य सूरज अघनाशी, दीन दयानिधि मंगल राशी।
महा अगिन कहं तारण वाले, नारद शाप निवारण वाले।

सत्राजित के मान रखैया, मणि ते स्वर्ण मेह वर्षैया।
प्रातः रूप धरे चतुरानन, राजे विष्णु रूप मध्यानन।
शम्भु रूप धरि सायंकाला, त्रिभुवन माहिं करैं प्रतिपाला।
वर्ष बीच पुनि बारह नामा, धरि भक्तन कर पूजहिं कामा।
षट् ऋतु दिन तिथि वर्ष महीना, पलक मुहूर्त तुम्हें आधीना।
खग मृग जीव जन्तु नर नारी, घन गर्जत नभ वर्षत बारी।
वृक्ष लतादिक प्रभु तव जानत, फूलत फरत झरत पुनि जामत।
चंद्रादिक नवग्रह नभ तारे, ये सब तुम्हरहिं नाथ सहारे।
धन्य सूर्य नारायण स्वामी, दिव्य दृष्टि दै अन्तर्यामी।
करहु बेगि अब पूरण आशा, होइ हृदय मम ज्ञान प्रकाशा।
सूर्य चालीसा प्रेम से गावे, मस्तक बारम्बार नवावे।
सकल पदारथ सो नर पावे, दुख-दरिद्र जड़ से कट जावे।

दोहा—रवि चालीसा प्रेम युत, पाठ करै धरि ध्यान।
सुख सम्पति आयु बढ़ै, होय सदा कल्यान॥

सूर्यदेव का दूसरा चालीसा

दोहे—जगत् चक्षु जय दिवस मणि, विवस्वान् गतिमान।
जयति दिवाकर, कोटिकर, जय नक्षत्र प्रधान॥
तुम सविता जगदात्मतुम, मार्तण्ड गुणधाम।
कृपा करहु इस भक्त पर, हे प्रभु ज्योति ललाम॥

चौपाइयां

जय जय जय जगपति दिननायक, अदिति पुत्र सुन्दर सुखदायक।
नाम अनेकन देव तुम्हारे, पातक कोटि नसावन हारे।
रवि अर्यमा अरुण अम्बरमणि, अर्ह अहस्कर ग्रहपति दिनमणि।
उष्णरश्मि आदित्य दिवाकर, तपन ऋक्षंपति भानु प्रभाकर।
कर्मसाक्षि दिननाथ ग्रहेशा, अंशुमालि चंडाशु दिनेशा।
चक्रबन्धु दिवसाधिप पूषन, जगच्चक्षु जगदात्म विरोचन।
चित्रभानु पद्माक्ष प्रद्योतन, छायानाथ, सुनाम तपोधन।
द्वादशात्म भास्कर तुम स्वामी, वृहन् मरीची अन्तर्यामी।
मंहातेज सप्ताश्व कहाए, सविता हंस हेलि बतलाए।
मित्र विभावसु हरि जगजाने, सूर पतंग सवितृ बखाने।
द्युमणि तिमिरहर मिहिर विकर्तन, रवि दिनेश सब कहं शुभ दर्शन।
एक चक्ररथ अहै तुम्हारा, अरुण सारथी पंगु बिचारा।
सप्त अश्वरथ जुरे सयाने, त्रिभुवन भ्रमण करत सुखमाने।
द्वादश कला तुम्हारी सुन्दर, तपिनी और तापिनी मनहर।
धूम्रा अपर मरीची मानी, रुचि ज्वालिनी सुषुम्णा जानी।
विश्वा क्षमा बोधिनी प्यारी, पुनि भोगदा धारिणी सारी।
तुम्हरो नित प्रताप दरसावहिं, अगजग बीच तेज बरसावहिं।
तुम्हरे निकट चतुर्दिक रहहीं, ग्रह सो पारिपार्श्वक अहहीं।
माठर पिंगल दण्ड बखाने, पुनि चंडाशु सकलजग जाने।
नाम अनेक किरण तब लहहीं, अंशु मालि कर तिन कहं कहहीं।
गो गमस्ति घृणि ज्योति सुहाबनि, दीधिति गर्भरसा मनभावनि।
भा मयूख प्रद्योत कहाई, पुनि आलोक भर्ग बतलाई।
सबै एक ते एक सुहावन, करहिं सदा पावन कहं पावन।
प्रभानाम तब अमित बखाने, त्विष द्युति रोचि शोचि भा जाने।
छबि अरुं छटा आदि बहु नामा, दिव्यज्योति अतिरुचिर ललामा।
परिधि प्रभामंडल कहं कहहीं, उपसूर्यक मंडल सब अहहीं।

उच्चैः श्रवा सप्तहय नामा, गरुडाग्रज सारथी ललामा।
ताके नाम अनेक बखाने, सूरसूत काश्यपि सुखमाने।
अरुण अनूप कहे पुनि गाई, सुनत महा अघओध नसाई।
उदयाचल पर बास तुम्हारा, तव प्रकाश प्रभु अपरम्पारा।
अस्ताचलहिं करहु विश्रामा, तीनि लोक सुखप्रद अभिरामा।
ऋषिमुनि धरहिं तुम्हारो ध्याना, वेद विविध विधि सुयश बखाना।
तुम बिनु जगत रहै अंधियारा, कोउ न प्राण बचावनहारा।
प्रभु तुम त्रिभुवन के उजियारे, अगजग कृपा परम बिस्तारे।
बालरूप हनुमत तब देखा, लीलन चलेउ अनंद बिसेखा।
सुरपति नित कहं बज्रप्रहारा, हनु टूटी भो हाहाकारा।
निजसुत की यह दसा निहारी, पवनहिं क्रोध भयो उर भारी।
सो निज वेग रोकि तब लीन्हा, त्रिभुवन कहं दारुन दुख दीन्हा।
तब सब देव तिनहिं समुझावा, सुतकर 'हनुमत' नाम धरावा
यह वरदान दीन्ह सब देवा, हनुमत करहिं राम की सेवा।
शंकर अवतारी हनुमाना, तिनकर यश किमि जाई बखाना।
सुयश पवनसुत अति जगपावा, तुम्हरी मेटि दीन्ह दुख दावा।
पवन वेग पुनि चलेउ बहाई, त्रिभुवन बीच खुशी अति छाई।
नाथ तुम्हारे चरित सुहावन, एक एक तैं सब अति पावन।
जो कोउ ध्यान धरै नरनारी, पुजवहु मनोकामना सारी।
अर्घ्य चढ़ाइ करैं जो सेवा, अभिमत तिनहिं देहु तुम देवा।
रविव्रत जो नरनारी करहीं, सो निश्चय भवसागर तरहीं।
तुम कहं कछु अदेय नहिं स्वामी, घटघटवासी अन्तर्यामी।
प्रलय काल महं कोप तुम्हारा, भस्मीभूत करै संसारा।
तुम जीवन के जीवनदाता, अखिल भुवन के तुमहीं त्राता।
तुम्हरो भजन करै जो कोई, ता कहं अधिकाधिक सुख होई।
जो जन तुम्हरो ध्यान लगावैं, सो कर चारि पदारथ पावैं।
कृपा करहु सेवक पै नाथा, सब विधि कीजै मोहि सनाथा।
जो यह पाठ करै चालीसा, ता कहं दिनमणि देहु असीसा।

दोहा

जय रवि जय आदित्य जय दिनकर जयति दिनेश।
शरणागत 'राजेश' पै, कीजै कृपा विशेष॥

रविदेव का चालीसा

दोहा—कनक वदन कुण्डल मकर, मुक्ता माला अंग।
पद्मासन स्थित ध्याइए, शंख चक्र के संग॥

चौपाइयां

जय सविता जय जयति दिवाकर, सहस्त्रांशु समाश्य तिमिरहर।
भानु, पतंग, मरिची भास्कर, सविता हंश सुनूर विभाकर।
विवस्वमान, आदित्य, विकर्तन, मार्तण्ड, हरि रूप विरोचन।
अम्बर मणि खग रवि कहलाते, वेद हिरण्य गर्भ कह गाते।
सहस्त्रांशु, प्रद्योतन कहि-कहि, मुनिगन होत प्रसन्न मोदलहि।
अरुणा सदृश सारथी मनोहर, हांकत हय साता चढ़ि रथ पर।
मण्डल की महिमा अति न्यारी, तेज रूप केरी बलिहारी,
उच्चै:श्रवा सदृश हय जोते, देखि पुरन्दर लज्जित होते।
मित्र, मरीचि, भानु अरुण भास्कर, सविता, सूर्य, अर्क, खग कलिकर।
पूषा, रवि, आदित्य नाम लै, हिरण्य गर्भाय नमः कहिके।
द्वादश नाम प्रेम सो गावै, मस्तक बारंबार नवावै।
चार पदारथ जन सो पावै, दुख दारिद्रय अधपुंज नसावै।
नमस्कार को चमत्कार यह, विधि हरिहर की कृपा सार यह।
सेवै भानु तुमहिं मन लाई, अष्ट सिद्धि नव निधि तेहिं पाई।
बारह नाम उच्चारण करते, सहस जन्म के पातक टरते।
उपाख्यान जो करते तवजन, रिपु सौं जम लहते सो तेहि छन।
धन, सुत जुत परिवार बढ़तु हैं, प्रबल मोह को फंद कटतु है।
अर्क शीश को रक्षा करते, रवि ललाट पर नित्य बिहरते।
सूर्य नेत्र पर नित्य विराजत, कर्ण देश पर दिनकर छाजत।
भानु नासिका वासकर हुनित, भास्कर करत सदा मुखको हित।
ओंठ रहे पर्जन्य हमारे, रसना बीज तीक्ष्ण बस प्यारे।
कंठ सुवर्ण रेत की शोभा, तिग्म तेजसः कांधे लोभा।
पूषा बाहू मित्र पीठहिं पर, त्वष्टा-वरुण रहत सुउष्ण कर।
युगल हाथ पर रक्षा कारन, भानुमान उरसर्म सुउरघन।
बसत नाभि आदित्य मनोहर, कटि मंह हंस रहत मन मुधभर।

जंघा गोपति सविता बासा, गुप्त दिवाकर करत हुलासा।
विस्वमान पद की रखवारी, बाहर बसते निज तम हारी।
सहस्त्रांशु सर्वांग सम्हारै, रक्षा कवच विचित्र विचारे।
उस जोजन अपने मन माहीं, भय जग बीच कतहुं तेहि नाहीं।
दद्रु कुष्ट तेहि कबहुं न व्यापै, जोजन याको मन मंह जापै।
अंधकार जग का जो हरता, नव प्रकाश ते आनन्द भरता।
मन्द सदृश सुत जग में जाके, धर्मराज सम अद्भुत बांके।
धन्य-धन्य तुम दिनमनि देवा, किया करत सुरमुनि नर सेवा।
भक्ति भावयुत पूर्ण नियम सों, दूर हटत सो भयके भ्रम सों।
परम धन्य सों नर तन धारी, हैं प्रसन्न जोहि पर तम हारी।
वरुण माघ महं सूर्य फाल्गुन, मधु वेदांग नाम रवि उदयन।
भानु उदय बैसाख गिनावै, ज्येष्ठ इन्द्र आषाढ़ रवि गावैं।
यम भादों अश्विन हिम रेतां, कातिक होत दिवाकर नेता।
अगहन भिन्न विष्णु हैं पूसहि, पुरुष नाम रविहैं मलमासहिं।

दोहा

भानु चालीसा प्रेम युत, गावहिं जे नर नित्य।
सुख सम्पत्ति लहि विविध, होहिं सदा कृतकृत्य॥

❑❑

सूर्यदेव की अर्चना के स्वरूप

अधिकांश आस्तिक व्यक्ति नित्य प्रातः उदित होते हुए भगवान सूर्यदेव को अर्घ्य अर्पित करते हैं। यह वह कार्य है जो प्रत्येक आस्थावान व्यक्ति को करना ही चाहिए। परन्तु यह वास्तव में सूर्यदेवजी की उपासना तो क्या सामान्य पूजा तक नहीं। धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन-मनन, सत्संग और मन्दिरों में जाकर देव-दर्शन करने के समान ही सूर्यार्घ्य की यह प्रक्रिया भी एक ऐसा सहायक कर्म है, जो धर्म और भगवान सूर्यदेव के प्रति हमारी आस्था और भक्ति को दृढ़ तो करता है, परन्तु स्वयं में आराधना अथवा उपासना नहीं। जहां तक रविवार के व्रत का प्रश्न है, भगवान सूर्यदेव के निमित्त यह व्रत बुरे दिनों के निवारण और ग्रह-पीड़ाओं को कम करने के लिए ही प्रायः रखा जाता है। यही कारण है कि रविवार को व्रत रखना, कथा सुनना और सूर्यदेव की पूजा करना भी वास्तव में आपकी आराधना नहीं, बहुप्रचलित एक लौकिक कर्म ही अधिक है। वैसे आराधना-उपासना का पूर्ण स्वरूप न होने के बावजूद भगवान सूर्यदेव की कृपाएं प्राप्त करने का सबसे आसान मार्ग तो ये दोनों कार्य हैं ही। आप भगवान सूर्यदेवजी की आराधना अथवा उपासना करते समय प्रतिदिन उदित होते हुए सूर्यदेवजी को अर्घ्य तो समर्पित कीजिए ही, निष्काम भाव से सतत रूप से रविवार व्रत भी करते रहें। आपकी पूजा-आराधना को सफल बनाने और आपको मानसिक उपासना के स्तर तक पहुंचने में अन्य धार्मिक प्रक्रियाओं के समान ही ये दोनों कार्य प्रबल सहायता प्रदान करेंगे।

पंचोपचार एवं दशोपचार पूजा

भगवान सूर्यदेवजी अथवा अन्य किसी भी देवी-देवता की मानसिक उपासना प्रारम्भ करने के पूर्व कुछ मास तक उनकी सामान्य पूजा करनी ही होगी। इस पूजा के तीन रूप हैं, और क्रम से एक-एक को सफलतापूर्वक पूर्ण करने के पश्चात् ही हम भगवान सूर्यदेव की मानसिक उपासना प्रारम्भ कर पाएंगे। यह सत्य है कि भगवान सूर्यदेवजी के विग्रह, मूर्ति अथवा चित्र की पूजा हमारी मंजिल नहीं, परन्तु मानसिक उपासना के क्षेत्र में प्रवेश का द्वार तो है ही। जिस प्रकार छोटे बालक को वर्णमाला के अक्षरों से परिचित कराते समय चित्र दिखाए जाते हैं—'अ' से अनार और 'आ' से आम पढ़ाते हैं—ठीक उसी प्रकार अपने उपास्यदेव के रूप-स्वरूप

का झांकी हृदय में बसाने एवं उपासना में मन लगाने के लिए मूर्ति-पूजा भी प्रारम्भ में लगभग अनिवार्य ही है। यह सत्य है कि भक्ति और मुक्ति का अन्तिम चरण मूर्ति-पूजा नहीं, परन्तु यह ईश आराधना-उपासना की नींव और प्रथम चरण तो है ही। हमारा अन्तिम लक्ष्य संसार के प्रत्येक जीव और वस्तु में उपास्यदेव को साक्षात रूप में देखना, उन्हें हर समय अपने निकट अनुभव करना, अपने प्रत्येक कार्य को उनकी आराधना तथा सफलता को उनकी कृपा का प्रसाद मानना-समझना है। परन्तु भक्ति के इस मुकाम तक पहुंचने के लिए हमें अनेक धार्मिक क्रिया-कलापों के साथ-साथ प्रारम्भ में मूर्ति-पूजा भी करनी होगी। लौकिक वस्तुओं का प्रयोग करते हुए भगवान के विग्रह की सेवा-पूजा धर्म के प्रति हमारी आस्था और विश्वास जगाते हैं। भजन, चालीसों, आरतियों का गायन, मन्त्रों का सतत जप, सहस्त्रनाम तथा स्तोत्रों का स्तवन तथा धार्मिक साहित्य का अध्ययन-मनन इस विश्वास और आस्था को दृढ़ करते हैं। यही कारण है कि ये सभी क्रियाएं न तो एक-दूसरे की विरोधी हैं और न ही उपासना के मार्ग में बाधक। ये सभी उपास्यदेव से मिलन के वे मार्ग हैं, जो हमें उनके श्रीचरणों तक पहुंचाते हैं।

भगवान भास्कर अथवा किसी भी अन्य देवी-देवता अथवा अवतार के विग्रह या प्रतीक की पूजा के तीन रूप हैं। इसका सबसे छोटा रूप पंचोपचार पूजा है, जबकि विधि-विधान के साथ की जाने वाली पूर्ण पूजा को षोडशोपचार आराधना कहा जाता है। इन दोनों के मध्य की स्थिति है दशोपचार पूजा। पंचोपचार पूजा करते समय भगवान सूर्यदेव की मूर्ति अथवा चित्र के निकट चन्द बूंदें जल टपकाकर उन्हें स्नान कराया जाता है। इसके बाद मूर्ति को तिलक लगाने, पुष्पहार पहनाने, धूप-दीप जलाने, भोग लगाने और आरती उतारने की क्रियाएं की जाती हैं। जब इन पांच क्रियाओं के साथ ही, स्नान के पूर्व, भगवान सूर्यदेव के चरण पखारने, उन्हें अर्घ्य समर्पित करने, आचमन हेतु जल समर्पित करने और स्नान के बाद भगवान को वस्त्र समर्पित करने के कार्य भी जोड़ दिए जाते हैं, तब यह पूजा दशोपचार पूजा अथवा दशोपचार आराधना कही जाती है। दशोपचार पूजा करते समय अपने आराध्यदेव भगवान दिवाकर को आप अपनी दस सेवाएं इस क्रम में समर्पित करते हैं—

1. पाद्य—चरणों को पखारना
2. अर्घ्य अर्थात् चल चढ़ाना
3. आचमन
4. स्नान कराना
5. वस्त्र पहनाना
6. चन्दन लगाकर चावल चढ़ाना
7. पुष्प एवं पुष्पहार अर्पण
8. धूप जलाना
9. दीप जलाना व आरती
10. नैवेद्य अर्पण अर्थात् भोग लगाना।

शास्त्रीय विधान तो पंचोपचार और दशोपचार पूजा में भी मन्त्रों का स्तवन करते हुए आराध्यदेव को एक-एक वस्तु अर्पित करने का है। परन्तु व्यावहारिक

रूप में अधिकांश भक्त मन्त्रों का स्तवन करना तो दूर इस बारे में कुछ जानते तक नहीं। लेकिन आपका उद्देश्य इससे बहुत आगे उपासना की मंजिल तक पहुंचना है। दशोपचार पूजा में काम आने वाले सभी मन्त्र और पूजा का शास्त्रोक्त विधि-विधान आगे ग्यारहवें अध्याय में दिया गया है। आप उन सभी मन्त्रों को कण्ठस्थ कर लीजिए और फिर शास्त्रोक्त विधि से कुछ मास तक दशोपचार पूजा करने के पश्चात् षोडशोपचार आराधना प्रारम्भ कर दीजिए।

श्रीविष्णु सूर्यग्रह के स्वामी हैं, इसलिए सूर्योपासना में श्रीविष्णु के पूजन का विशेष महत्व है

षोडशोपचार पूजा अर्थात् आराधना

यह षोडशोपचार आराधना भी हमारी मंजिल नहीं, बल्कि मानसिक उपासना के विश्वविद्यालय में प्रवेश की अन्तिम परीक्षा है। मूर्तिपूजा की पराकाष्ठा और मानसिक उपासना का पूर्वाभ्यास है मन्त्रों का स्तवन करते हुए पूर्ण विधि-विधान के साथ की जाने वाली यह षोडशोपचार आराधना। यह षोडशोपचार आराधना करते समय आप भगवान सूर्यदेवजी के ध्यान एवं आह्वान से लेकर प्रदक्षिणा तक सोलह वस्तुएं अर्पित करेंगे। इसके साथ ही भगवान भास्कर के ध्यान से भी पहले कुछ अन्य कृत्य और गणेशजी का पूजन भी किया जाएगा। यद्यपि पंचोपचार और दशोपचार पूजा के समान ही षोडशोपचार आराधना में भी उपास्यदेव की मूर्ति अथवा चित्र और सभी लौकिक उपादानों का उपयोग किया जाता है, परन्तु सीधे ही

विग्रह की पूजा प्रारम्भ नहीं कर दी जाती। सभी धार्मिक कार्यों में अनिवार्य रूप से किए जाने वाले स्वस्तिवाचन, भूतशुद्धि, शान्तिपाठ और गणेशजी के पूजन के बाद ही भगवान सूर्यदेव का ध्यान किया जाता है। जब भावलोक में आप अपने आराध्यदेव को अपने निकट महसूस करने लगते हैं, तभी स्तवन करते हैं आसन-समर्पण के मंत्र का। स्नान कराने और वस्त्र समर्पण के पश्चात् उन्हें आभूषण भी समर्पित किए जाते हैं। तिलक में चन्दन के साथ-साथ केशर-कुंकुम आदि का प्रयोग भी होता है। धूप, दीप व नैवेद्य के बाद ताम्बूल और पूंगीफल अर्थात् पान-सुपारी के साथ दक्षिणा भी समर्पित की जाती है। धूप, दीप एवं आरती के बाद प्रदक्षिणा और क्षमा-याचना भी की जाती है। षोडशोपचार आराधना के अन्त में कुछ भक्त तो आराध्यदेव के चालीसे, भेंटों, भजनों, विनतियों और आरतियों आदि का गायन करते हैं, जबकि अधिकांश आराधक सहस्रनाम अथवा अष्टोत्तर शतनाम का पाठ तथा आराध्यदेव के किसी मंत्र का जप करते हैं। आराधना के मुख्य भाग के सोलह संस्कारों का क्रम इस प्रकार है—

1. ध्यान एवं आह्वान, 2. आसन, 3. पाद्य, 4. अर्घ्य, 5. आचमन, 6. स्नान अर्थात् अभिषेक, 7. वस्त्र, 8. शृंगार की वस्तुएं एवं आभूषण, 9. गन्ध-चन्दन, केशर, कुंकुमादि व अक्षत, 10. पुष्प समर्पण, अंग पूजा एवं अर्चना, 11. धूप, 12. दीप, 13. नैवेद्य, 14. तांबूल, दक्षिणा, नीरांजन, जल-आरती आदि, 15. प्रदक्षिणा तथा 16. पुष्पांजलि, नमस्कार, स्तुति, राजोपचार, जप, क्षमापन, विशेषार्घ्य और समर्पण।

मंत्रों का जप एवं ध्यान

पूजा-आराधना करते समय आप भगवान सूर्यदेव के विग्रह को सभी वस्तुएं समर्पित करने के बाद उनकी आरती उतारेंगे। अधिकांश भक्त इसके बाद चालीसे और भजनों व विनतियों का गायन करके आराधना की इतिश्री कर लेते हैं और इसी प्रकार जीवन भर पूजा-आराधना करते रहते हैं। परन्तु आपकी मंजिल तो भगवान सूर्यदेवजी की मानसिक उपासना है अतः आरती के बाद उनके किसी नाम और मंत्र का जप अवश्य कीजिए। आरतियों, भजनों, चालीसों तथा स्तुतियों के गायन से यद्यपि सम्पूर्ण वातावरण में भक्तिभाव का संचार होता है, परन्तु जहां तक व्यावहारिकता का प्रश्न है, मंत्रों का जप और भगवान सूर्यदेव का मन-ही-मन चिन्तन करते हुए उनके ध्यान में मग्न रहना ही वास्तविक भक्ति है। यही कारण है कि आप दशोपचार पूजा अथवा षोडशोपचार आराधना के अंतिम चरण में आरती के बाद चालीसों आदि का गायन करें अथवा नहीं, परन्तु उनके किसी भी एक मंत्र की कम से कम एक माला अनिवार्य रूप से जपें। इसके साथ ही भगवान सूर्यदेवजी के

अष्टोत्तर शतनाम अथवा सहस्त्रनाम का स्तवन तो करें ही, आदित्य हृदय स्तोत्र का पाठ भी प्रारम्भ कर दें। भगवान सूर्यदेवजी की मानसिक उपासना के ये अनिवार्य अंग हैं, अत: प्रारम्भ से ही इनका अभ्यास आपकी उपासना को सफल बनाने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निबाह सकता है। यह सत्य है कि चालीसों और भजनों के गायन के विपरीत इनका स्तवन नयन बन्द करके मन-ही-मन किया जाता है, अत: प्रारम्भ में हमारा मन स्थिर नहीं हो पाता। परन्तु कुछ मास तक निरन्तर यह जप और स्तवन करते रहने पर न केवल हमारा मन और मस्तिष्क स्थिर होकर इनमें रमने लग जाता है, बल्कि समय के साथ-साथ इनमें लगने वाले समय की मात्रा स्वयं ही बढ़ती चली जाती है।

भगवान सूर्यदेवजी परब्रह्म का साकार स्वरूप हैं। इस लोक में सभी सुख, धन-वैभव, पुत्र-पौत्र एवं मानसिक शांति की प्राप्ति और मृत्योपरांत मोक्ष प्राप्ति की आकांक्षा से ही आपकी आराधना-उपासना प्राय: की जाती है। जिस प्रकार भगवान सूर्यदेवजी स्वयं सर्वज्ञ एवं अनन्त हैं, ठीक उसी प्रकार आपकी कृपाएं प्राप्त करने के मार्ग भी अनेक हैं। इनमें से कोई भी व्यर्थ नहीं, सभी का अपना-अपना महत्व है। परन्तु वर्षों की कठोर तपस्या और विपुल धन से किए जाने वाले यज्ञ-हवन जैसे कार्य आज सहज सम्भव नहीं हैं। इसी प्रकार मन्दिर और धर्मशाला निर्माण जैसे धर्म-कर्म भी प्रत्येक व्यक्ति के वश की बात नहीं। जहां तक मन्दिर में जाकर देव दर्शन करना, तीर्थों की यात्रा, घर में मूर्ति रखकर पूजा-पाठ करना तथा भगवान सूर्यदेवजी के चालीसों, अष्टकों, भजनों और आरतियों के गायन का प्रश्न है, ये सभी कार्य भक्तिभाव में वृद्धि एवं मानसिक शांति तो प्रदान करते हैं, परन्तु वास्तव में मंजिल नहीं, रास्ते के पड़ाव मात्र हैं। यह सत्य है कि सूर्यदेव की वास्तविक भक्ति तो मानसिक उपासना ही है और हमारा लक्ष्य भी भगवान भास्कर की मानसिक उपासना करना है। परन्तु उपासना के शिखर पर पहुंचने में सफलता ऊपर वर्णित रास्तों पर चलकर ही प्राप्त की जा सकती है। जहां तक भगवान सूर्यदेवजी की मानसिक उपासना के सम्पूर्ण शास्त्रोक्त विधि-विधान का प्रश्न है, तो आइए अवलोकन करते हैं आगामी अध्याय का।

❑❑

अध्याय : नौ

सूर्योपासना की शास्त्रोक्त पद्धति

आज मूर्तिपूजा हमारे धर्म की सबसे बड़ी विशेषता ही नहीं, बल्कि एक प्रकार से आधार स्तम्भ ही बन चुकी है। अधिकांश व्यक्ति जीवन भर अपने आराध्यदेव के विग्रह अथवा चित्र को विभिन्न वस्तुएं समर्पित करते हुए पंचोपचार अथवा दशोपचार पूजा ही करते रहते हैं और इसे ही भक्ति की पराकाष्ठा भी समझते हैं। परन्तु यह एक ऐसा भ्रम है, जो आज लगभग सर्वमान्य हो चुका है। वैदिक काल में हमारे यहां मूर्तिपूजा का प्रचलन नहीं था। तपस्वी और हठयोगी तो अपने उपास्यदेव के नाम अथवा किसी मंत्र की वर्षों तक निरन्तर तपस्या करते थे, तो राजा-महाराजा और धन कुबेर बड़े-बड़े यज्ञों का आयोजन करते थे। उस वैदिक काल में भी गुरुकुलों में रहने वाले विद्यार्थी, अधिकांश गृहस्थ और ऋषि-मुनि भगवान के किसी स्वरूप अथवा अपने आराध्यदेव की मानसिक उपासना ही करते थे। हमारे वेदों तक में उपासना को सर्वोत्तम और शीघ्र फलदायी देवार्चना पद्धति कहा गया है। यह बात दूसरी है कि आज हम अपने धर्म और समाज की अनेक अन्य महान परम्पराओं के समान ही देवाराधना की इस सर्वोत्तम पद्धति उपासना को लगभग भूल चुके हैं और इस कारण ही इतने अधिक दुख एवं संताप भी पा रहे हैं।

उपासना का अर्थ एवं अभिप्राय

भाषा विज्ञान के दृष्टिकोण से यदि उपासना शब्द की व्याख्या की जाए, तो उपासना शब्द संस्कृत भाषा के तीन शब्दों उप + अस + नम के योग से बना है। प्राचीन ऋषियों और विद्वानों ने उपासना शब्द की व्याख्या करते हुए कहा है— 'उपगम्य असनम्—इति उपासना' अर्थात् समीप जाकर बैठने को 'उपासना' कहा जाता है। यहां ईश्वर और देवताओं के संदर्भ में होने के कारण इसका अभिप्राय हो जाता है, उन्हें निकट बुलाकर उनकी सेवा-पूजा आदि करना। यही कारण है कि वरिवस्या, शुश्रूषा, परिचर्या, आराधना, सेवा आदि शब्द 'उपासना' के पर्यायवाची हैं जबकि पूजा, भक्ति, तपस्या, अपचिति, सपर्या, अर्हणा, नमस्क्रिया, ध्यान और अनुष्ठान आदि शब्द इसके अत्यन्त निकटार्थक हैं। उपास्ति, उपासा और उपासना आदि भी इसी के रूप हैं। धर्म, संस्कृति और भाषा विज्ञान के शब्दों का अर्थ स्पष्ट करने वाले प्राचीन ग्रन्थ 'अमरकोष' में लिखा है—

पूजा नमस्यापचितिः सपर्याचर्हणाः समाः।
वरिवस्या तु शुश्रूषा परिचर्याप्युपासना॥

वैदिक काल में अधिकांश व्यक्ति उपासना करते थे, इसका प्रमाण हमें वेदों में अनेक स्थानों पर मिलता है। चारों ही वेदों में इसकी महिमा, विधि-विधान और उपयोगिता के बारे में अनेक ऋचाएं एवं श्लोक हैं। संसार के प्रथम और स्वयं ईश्वर द्वारा उद्भाषित ग्रन्थ ऋग्वेद में भी उपासना शब्द का प्रयोग पूजा, सेवा, उपस्थित होना, सामने प्रस्तुत रहना आदि अर्थों में हुआ है। कुछ अन्य ग्रंथों में उपासना शब्द 'सहवासार्थक' अर्थात् 'साथ रहना' के अर्थ में भी प्रयुक्त हुआ है। 'आपस्तम्बधर्मसूत्र' में उपासना का अर्थ 'सेवा' है। 'गौतमधर्म सूत्र' में उपासना का अर्थ 'प्रणाम करना' है। 'गीता' में उपासना शब्द को 'सेवा भक्ति' के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। 'वाल्मीकि रामायण' में उपासना का अर्थ 'समीप रहना' है तो 'मनुस्मृति' में उपासना का मतलब 'ध्यान' है। योगवाशिष्ट, ब्रह्मसूत्र आदि भाष्यों में भगवद्ध्यान को सर्वोपरि उपासना कहा गया है।

हमारे धर्मग्रन्थों में 'श्रीमद्भागवत' को सभी पुराणों, स्मृतियों और संहिताओं से अधिक महत्त्व प्राप्त है और इसे पांचवां वेद माना गया है। धर्म की दुरूह राहों और गूढ़ रहस्यों को सरलतम भाषा में समझाना श्रीमद्भागवत की प्रमुख विशेषता है। इस ग्रन्थ में कई स्थानों पर उपासना शब्द के अलग-अलग अर्थ बताए गए हैं, परन्तु वे परस्पर विरोधी नहीं, एक-दूसरे के पूरक हैं। एक स्थान पर कहा गया है कि पूजा भी उपासना ही है तो दूसरे स्थान पर लिखा है, सेवा भी उपासना है। ध्यान करना अर्थात् प्रभु के चरण-कमलों में अपने मन रूपी भ्रमर को अवस्थित करना ही सच्ची उपासना है और प्रेमपूर्वक ईश्वर के ध्यान एवं भजन में रम जाना उपासक का परम लक्ष्य। इन सभी तथ्यों के सार रूप में श्रीमद्भागवत में कहा गया है कि पूर्ण भक्ति भाव से अपने आराध्यदेव की सेवा और ध्यान करना तथा हर पल उन्हें अपने निकट महसूस करना ही उपासना है।

यद्यपि विभिन्न धर्मग्रंथों में उपासना शब्द की व्याख्या पृथक-पृथक शब्दों में की है, परंतु सभी का भाव लगभग एक और समान है। मूल भाव यही है कि किसी भी विधि से अपने इष्टदेव की प्रसन्नता के लिए जो भी क्रिया की जाए, वही उपासना है। इष्टदेव का ध्यान, प्रणाम, नमस्कार, पूजा, जप, होम, भक्ति, दास्य, सख्य, सामीप्य, सेवा, शुश्रूषा, परिचर्या, आराधना, चिन्तन, मनन आदि सभी क्रियाएं उपासना के अन्तर्गत ही आती हैं। वास्तविकता तो यह है कि जिस प्रकार हमारे भगवान सूर्यदेवजी अनन्त और सर्वव्यापी हैं, ठीक उसी प्रकार उपासना भी ईश-आराधना की एक बहुआयामी एवं सबसे शीघ्र फलदायी पद्धति है।

उपासना की शास्त्रोक्त विधि

उपासना को प्रायः मानसिक उपासना अथवा मानसिक आराधना भी कहा जाता है। इसका कारण यही है कि मंत्रों के जप और स्तोत्रों के स्तवन के समान ही उपासना भी एक मानसिक प्रक्रिया है, न तो इसमें किसी वस्तु का प्रयोग होता है और न ही मंत्रों का उच्चारण अथवा पाठ। परन्तु उपासना भजन और जप के समान एक सीधी-सादी प्रक्रिया नहीं है। इसका एक निश्चित एवं निर्धारित विधि-विधान है। इसमें षोडशोपचार आराधना के सभी मन्त्रों और सम्पूर्ण विधान का पालन किया जाता है, परन्तु उपास्यदेव के चित्र तक का प्रयोग अनिवार्य नहीं होता। कुछ काल तक निरन्तर सच्चे मन से उपासना करते रहने पर उपासक और उपास्यदेव के मध्य ऐसा सान्निध्य स्थापित हो जाता है कि वह उपासना करते समय अपने आराध्यदेव को एकदम निकट अनुभव करने लगता है तथा एक-एक कर सभी वस्तुएं समर्पित भी करता जाता है। यही कारण है कि उपासना करते समय किसी स्वच्छ और शान्त स्थान पर बैठकर एकाग्र भाव से सर्वप्रथम भूमि, अपने आसन और तन-मन की शुद्धि हेतु मन्त्रों का स्तवन किया जाता है। शान्तिपाठ के बाद गणेशजी की पूजा-वंदना की जाती है, और फिर अपने उपास्यदेव का ध्यान। इस समय उपासक भावनात्मक रूप में अपने उपास्यदेव को अपने सम्मुख साक्षात रूप में उपस्थित अनुभव करते हुए उनसे काल्पनिक आसन पर विराजमान होने के लिए प्रार्थना करता है। फिर अर्पित करता है एक-एक करके एक निश्चित क्रम में अपनी सभी सेवाएं। मूर्ति की षोडशोपचार आराधना करते समय तो ये सभी कार्य स्थूल रूप में भी किए जाते हैं। आराधक जब मुंह से मन्त्रों का स्तवन कर रहा होता है, उसी समय एक-एक कर सभी वस्तुएं भी मूर्ति को अर्पित करता रहता है।

प्राचीन धर्मग्रंथों में उपासना की व्याख्या एवं विधि-विधानों का वर्णन करते समय केवल उपासना शब्द का प्रयोग हुआ है। परन्तु हमने उपासना शब्द के पूर्व कई स्थानों पर मानसिक शब्द भी लगाया है। कारण स्पष्ट है। एक उपासक सूर्यदेव की आराधना की सभी प्रक्रियाएं केवल मानसिक रूप से ही करता है। उपासना करते समय किसी पूजन सामग्री अथवा लौकिक वस्तु तो क्या आराध्यदेव की प्रतिमा, चित्र अथवा प्रतीक तक का प्रयोग नहीं होता। किसी शान्त स्थान पर अविचल भाव से बैठकर बिना किसी उपादान के ही उपासना कर ली जाती है। परन्तु इसकी ये विशेषताएं ही उपासना के प्रचार-प्रसार और आम व्यक्ति द्वारा इसे अपनाए जाने के मार्ग में सबसे बड़ी बाधाएं हैं। हम जिस वस्तु को आंखों से देख रहे होते हैं, उसे सहज ही सत्य मान लेते हैं। दिखाई देने वाली वस्तु की उपस्थिति को स्वीकार करने के लिए न तो तर्क की आवश्यकता होती है और न ही विशेष ज्ञान

की। यही कारण है कि अधिकांश व्यक्ति जीवनभर मूर्तिपूजा में ही अटके रहते हैं, जो वास्तव में धर्म के मार्ग में प्रवेश की प्रथम सीढ़ी है, परन्तु मंजिल नहीं। जहां तक पुजारियों, धर्म प्रचारकों, कुलगुरुओं एवं पुरोहितों का प्रश्न है, अधिकांश, इस बारे में अधिक जानते ही नहीं, और जो जानते भी हैं वे अपने भक्तों-यजमानों का कुछ नहीं बताते। कारण स्पष्ट है। उपासना करते समय न तो किसी धर्माचार्य अथवा पुजारी की आवश्यकता पड़ती है और न ही इसमें दान-पुण्य, देवदर्शन व तीर्थाटन का कोई महत्व है। एक वाक्य में यही कहा जा सकता है कि अधिकांश व्यक्ति जिन कार्यों को धर्म का आधार और पूजा-पाठ में सफलता का रहस्य मानते हैं, उनका एक सच्चे उपासक की दृष्टि में कोई महत्व नहीं। यही कारण है कि इस विषय पर हमने पूरा एक अध्याय ही इस पुस्तक में दिया है, जिससे आप पूर्ण भक्तिभावपूर्वक और निर्दोष रूप से विधि-विधानपूर्वक भगवान सूर्यदेवजी की उपासना प्रारम्भ कर सकें।

उपासना हेतु स्थान एवं समय का चयन

मन्दिर और सार्वजनिक पूजा स्थल इष्टदेव के साकार रूप के दर्शन, नमन करने, अधूरे रूप में पूजा करने, सत्संग-प्रवचन सुनने, भजन-आरतियों के गायन तथा धर्म-चर्चा एवं विचार-विमर्श के सशक्त केन्द्र हैं, परन्तु मन्त्रों का जप और उपासना वहां सम्भव नहीं। उपासना मुख्य रूप से एक मानसिक प्रक्रिया है जिसमें आप हृदय की सम्पूर्ण गहराई से जुड़कर अपने तन-मन की सुध तक भूल जाते हैं। यह प्रक्रिया भीड़ में हो ही नहीं सकती। सामान्य पूजा-पाठ तथा उपासना में सबसे बड़ा अन्तर ही यह है कि पूजा मुख्य रूप से एक शारीरिक कर्म है, कीर्तन सामूहिक रूप से की जाने वाली क्रिया है, तो उपासना अपने उपास्यदेव से तादात्म्य स्थापित कर उन्हें अपने पास साक्षात रूप से उपस्थित अनुभव करते हुए उनका आदर-सत्कार तथा सेवा-पूजा करने की मानसिक प्रक्रिया। यही कारण कि इस कार्य के लिए प्रातः ब्रह्म मुहूर्त का समय और घर का एकान्त कमरा ही सर्वश्रेष्ठ रहता है। जहां तक स्थान व समय के चयन और मंत्रों के स्तवन की सही विधियों का प्रश्न है, कृपया पुस्तक के सत्रहवें अध्याय का अवलोकन कीजिए।

उपासना का जीवन पर प्रभाव

पूजा-आराधना, जप-तप, भजन-कीर्तन और सभी धार्मिक कृत्यों का अंतिम लक्ष्य तो मायामोह से मुक्ति और दिव्य आनन्द की प्राप्ति है। परंतु जीते-जी यह नैसर्गिक आनन्द हमको केवल नियमित उपासना करते रहने पर ही प्राप्त हो सकता है। भगवान श्रीकृष्ण ने श्रीमद्भगवद गीता में अर्जुन को उपदेश देते हुए स्वयं अपने श्रीमुख से कहा है कि उपासना ही ईश आराधना की एकमात्र वह पद्धति है, जो

उपासक को निष्काम कर्मयोग की भावना देती है। भगवान श्रीकृष्ण के अनुसार इष्टदेव की मानसिक उपासना एवं निष्काम कर्मयोग ही जीवन में सभी आनन्दों और अंत में मोक्ष प्राप्ति का द्वार हैं। इस बारे में भगवान श्रीकृष्ण का कहना है कि नियमित उपासना करने वाला व्यक्ति अपने सभी कार्यों को अपने इष्टदेव को अर्पित करके निष्काम भाव से कर्म करता है और अपने मन को अपने उपास्यदेव में लगाए रखता है। अत: उसकी सभी क्रियाएं उसके लिए उसके उपास्यदेव का आदेश होते हैं और उनसे प्राप्त होने वाले फल उपास्यदेव की कृपा का प्रसाद। इस प्रकार वह व्यर्थ के तनावों से सहज ही बचा रहता है। हमारे सभी धर्मग्रंथों तथा विद्वानों का एक मत से कथन है कि निरन्तर उपासना करते रहने पर उपासक के समस्त कार्य-व्यवहार और आचार-विचार में स्वयं ही शुचिता का संचार होने लगता है। इस प्रकार वह अनेक पाप कर्मों से स्वयं ही बचा रहता है। उसके कार्यों की यह पवित्रता धीरे-धीरे मोह एवं लोभ जैसी दुष्प्रवृत्तियों पर अंकुश लगाने में भी समर्थ हो जाती है। फिर वह लोभ, मोह और आकांक्षा से रहित होकर अपना कर्तव्य समझकर सभी कार्य करता है और उनका फल अपने उपास्यदेव पर छोड़ देता है। इस प्रकार उसके सभी कार्य ईश्वर अथवा उपास्यदेव के प्रति समर्पित हो जाते हैं, अत: उसका प्रत्येक कर्म उपासना का रूप ले लेता है। अब वह परिवार में रहते हुए पूर्णरूपेण क्रियाशील है, फिर भी आकांक्षा, मोह एवं लोभ से रहित होने के कारण उसका ध्यान हर समय अपने उपास्यदेव अथवा ईश्वर में लगा रहता है। वह अपने सभी कार्य उपास्यदेव की आज्ञा समझकर करता है और उनसे प्राप्त फलों को मानता है अपने आराध्यदेव की कृपा का प्रसाद। इस प्रकार उसके सभी क्रिया-कलाप स्वयं के लिए नहीं, बल्कि उपास्यदेव की प्रेरणा से, उनके निमित्त और उनके द्वारा ही होने लगते हैं। अब उसे न तो लाभ होने पर हर्ष होता है और न ही हानि होने पर विषाद। आकांक्षा, कामना और उपलब्धि की इच्छा से रहित होकर कर्म करने की इस भावना का विकास केवल उपासना से ही सम्भव है। यही कारण है कि शास्त्रों में उपासना को इस जीवन में सभी सुखों और अन्त में मोक्ष प्राप्ति का सबसे सुगम मार्ग कहा गया है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि जिस प्रकार उपासना देवाराधना की सर्वश्रेष्ठ पद्धति है, ठीक उसी प्रकार भगवान सूर्यदेव हैं, सबसे बड़े और शक्तिशाली देव तथा परब्रह्म का साक्षात साकार स्वरूप। यही कारण है कि भगवान सूर्यदेवजी की नियमित उपासना करने पर जहां हमें जीवनकाल में सभी देवी-देवताओं की अनुकम्पाएं प्राप्त होती रहती हैं, वहीं अन्त समय में मोक्ष के सहज अधिकारी भी बन ही जाते हैं।

❑❑

उपासना एवं साधनाओं का पूर्वार्द्ध

सूर्यदेव को जल चढ़ाने के समान ही, उनकी पंचोपचार पूजा करने वाले भक्त भी समर्पण के मंत्रों का स्तवन नहीं करते। अधिकांश भक्त तो दशोपचार पूजा भी प्रायः मंत्रों का स्तवन किए बगैर ही कर लेते हैं। यही नहीं, षोडशोपचार आराधना करने वाले अधिकांश व्यक्ति भी मंत्रों का स्तवन करने के बावजूद उपास्यदेव के विग्रह को सभी वस्तुएं सीधे ही अर्पित करना प्रारम्भ कर देते हैं। परन्तु यह उचित नहीं। हमारे धर्मशास्त्रों का कथन है कि किसी भी देवी-देवता की आराधना, उपासना अथवा मंत्रों का बड़ी संख्या में जप करते समय आराध्यदेव के ध्यान से पहले चन्द प्रारम्भिक क्रियाएं अवश्य पूर्ण की जानी चाहिए। इन प्रक्रियाओं में सबसे पहले स्वस्तिवाचन, उसके बाद भूतशुद्धि और फिर गणेशजी का ध्यान एवं पूजन किया जाता है। इसके बाद संकल्प वाक्य के स्तवन के बाद ही आप अपने उपास्यदेव भगवान भास्कर का ध्यान करें। इन प्रक्रियाओं को पूर्ण किए बगैर मानसिक उपासना, मंत्रों के बड़ी संख्या में जप तथा यंत्र, मंत्र अथवा तंत्र की किसी भी साधना में तो पूर्ण सफलता की आशा नहीं की जा सकती। शास्त्रों का कथन है कि कोई भी पूजा-आराधना, यज्ञ-हवन अथवा धार्मिक कृत्य करते समय ये प्रारम्भिक प्रक्रियाएं अवश्य की जानी चाहिए। मंदिरों में पुजारी अपने आराध्यदेव के विग्रह की षोडशोपचार आराधना करते समय प्रारम्भ में ये सभी प्रक्रियाएं करते हैं और आप भी ऐसा ही कीजिए।

षोडशोपचार आराधना और मानसिक उपासना एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। आराधना करते समय हम पूजा में प्रयुक्त होने वाली सभी वस्तुओं का प्रयोग करते हैं और अपने आराध्यदेव के विग्रह अथवा चित्र के निकट उन्हें रखते भी जाते हैं। इसके विपरीत उपासना करते समय कोई पूजन-सामग्री तो क्या, उपास्यदेव का कोई चित्र तक हमारे पास नहीं होता। परंतु इन दोनों में यह बाह्य अंतर होने के बावजूद समान मंत्रों का एक ही क्रम में स्तवन किया जाता है। यही कारण है कि इस तथा आगामी दोनों ही अध्यायों में हमने आराधना-उपासना के सभी मन्त्रों के साथ पूजन में प्रयुक्त सामग्री और उसे भगवान सूर्यदेव को अर्पित करने की विधियों

का विवेचन भी किया है। इसके दो कारण हैं। षोडशोपचार आराधना और तन्त्र सिद्धि करते समय आप मूर्ति एवं यन्त्र का पूजन और पूजा की सामग्रियों का अर्पण करेंगे। अत: यह जानकारी आपके काम आएगी। मानसिक उपासना करते समय यद्यपि कोई वस्तु तथा मूर्ति आपके सम्मुख नहीं होगी, परन्तु भावलोक में भगवान सूर्यदेव के साक्षात दर्शन करते हुए आप एक-एक कर उन्हें सभी वस्तुएं अर्पित करेंगे। मन्त्रों का मन-ही-मन स्तवन करते हुए अपने सामने दिव्य सिंहासन पर विराजमान भगवान सूर्यदेवजी को भावलोक में क्रमशः सभी वस्तुओं के अर्पण का दिव्यभाव ही वास्तव में उपासना है। अत: आप मन्त्रों को कण्ठस्थ करने के साथ ही इन सभी प्रक्रियाओं को भली प्रकार मन-मस्तिष्क में बैठा लीजिए। इस प्रकार सम्बन्धित मन्त्र के स्तवन के साथ ही समर्पण का भाव भी अनायास आपके हृदय पटल पर अंकित होता रहेगा।

स्वस्तिवाचन अर्थात् शान्तिपाठ

विधि-विधानपूर्वक पूर्ण षोडशोपचार आराधना, उपासना, मन्त्रों का जप अथवा कोई भी तान्त्रिक साधना करते समय सीधे ही इन्हें प्रारम्भ कर देना शास्त्रसम्मत नहीं। सबसे पहले स्वस्तिवाचन किया जाता है, जिसमें हम सभी देवताओं को नमस्कार और उनसे कृपाओं तथा विश्वशान्ति की प्राप्ति हेतु प्रार्थना करते हैं—

ॐ स्वस्ति नः इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्वदेवाः।
स्वस्तिनस्ताक्ष्र्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु॥ 1॥
ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः।
पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्॥ 2॥
ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः।
स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि वैष्णवमसि विष्णावेत्वा॥ 3॥
ॐ अग्निर्देवता वातोदेवता सूर्योदेवता चन्द्रमादेवता
वसवोदेवता रुद्रोदेवताऽऽदित्योदेवता मरुतोदेवता।
विश्वेदेवादेवता वृहस्पतिर्देवतेन्द्रोदेवता वरुणोदेवता॥ 4॥
ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षंश्ठ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः
शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म
शान्तिः सर्वंश्ठशान्तिः शान्तिरेवशान्तिः सामा शान्तिरेधि।
ॐ विश्वानिदेव सवितर्दुरितानिपरासुव यद्भद्रं तन्न आसुव॥ 5॥
शान्तिः शान्तिः शान्तिर्भवतु॥

विश्व कल्याण की कामना के इन पांच मन्त्रों का स्तवन आराधना, उपासना अथवा तन्त्र साधना का प्रथम चरण और एक महत्वपूर्ण क्रिया है। इस स्वस्तिवाचन में सभी देवताओं की आराधना है और यही अनेकता में एकता हमारे हिन्दू धर्म की सबसे बड़ी विशेषता है। स्वस्तिवाचन के मंत्र में जहां-जहां ꣳ चिह्न है, वहां 'ग्वं' की भांति उच्चारण करना चाहिए। स्वस्तिवाचन के बाद आगे लिखे तीन मन्त्रों का स्तवन करते हुए जल से आचमन करें तथा अपने मस्तक पर तीन बार जल छिड़कें। तत्पश्चात् दोनों हाथों को शुद्ध जल से धो लें। आचमन और जल छिड़कने की ये क्रियाएं वास्तविक रूप में आराधना अथवा तन्त्र साधना करते समय ही की जाएंगी। उपासना करते समय तो आप ये कार्य केवल भावनात्मक रूप में ही करेंगे और इन तीन मन्त्रों का स्तवन भी मन-ही-मन करेंगे—

ॐ केशवाय नमः स्वाहा।
ॐ नारायणाय नमः स्वाहा।
ॐ माधवाय नमः स्वाहा।

पवित्रीकरण एवं भूतशुद्धि

यद्यपि स्नानादि से निवृत्त होकर और धुले हुए स्वच्छ वस्त्र पहनकर शुद्ध एवं स्वच्छ वातावरण में उपासना की जाती है, फिर भी उपासना के पूर्व आराधना स्थल को पवित्र करने का शास्त्रीय विधान है। शायद यह दोहराने की तो आवश्यकता ही नहीं है कि उपासना करते समय आप केवल मन्त्रों का मन-ही-मन स्तवन करेंगे, जबकि षोडशोपचार आराधना अथवा तान्त्रिक सिद्धियां करते समय व्यावहारिक रूप में भी मन्त्रों के साथ वर्णित सभी क्रियाएं की जाती हैं—

ॐ अपवित्रः पवित्रोवा सर्वावस्थां गतोऽपिवा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स वाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

उपरोक्त मन्त्र का स्तवन करते हुए अपने सिर पर तीन बार जल छिड़ककर आचमन करें। फिर हाथ धोने के बाद नीचे दिए गए मन्त्र का स्तवन करते हुए भूत-शुद्धि की जाती है—

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिता।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥

गणेशजी का ध्यान एवं पूजन

कोई भी शुभ कार्य, किसी भी देवी-देवता की आराधना-उपासना, यज्ञ-हवन अथवा तान्त्रिक सिद्धि आदि करते समय सबसे पहले गणेशजी का पूजन करने का शास्त्रीय विधान है। अतः भगवान सूर्यदेवजी की आराधना-उपासना अथवा किसी प्रकार की यन्त्र-तन्त्र साधना करते समय भी सबसे पहले गणेशजी का ध्यान और

पूजन किया जाएगा। लौकिक वस्तुओं का प्रयोग करके पूजा करते समय मिट्टी की डली पर कलावा लपेटकर और उसे गणेशजी मानकर उन्हें सभी वस्तुएं अर्पित की जाती हैं। यद्यपि उपासना करते समय आपके पास कोई भी लौकिक वस्तु नहीं होगी, फिर भी मन में इस प्रकार के भाव रखें कि आपके दाएं हाथ में दूर्वा अर्थात् दूब नामक हरी घास, अक्षत अर्थात् चावल, कुछ फूल और थोड़ा-सा जल है। गणेशजी के पावन स्वरूप का मन में ध्यान करते हुए आप निम्नलिखित मन्त्रों से गणेशजी का ध्यान और पूजन कीजिए। मन्त्रों का स्तवन करने के पश्चात् इन वस्तुओं को भावनात्मक रूप में गणेशजी के सम्मुख रख दीजिए।

ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये॥

संकल्प वाक्य अर्थात् पूजा परिचय

संकल्प वाक्य गद्य रूप में अपना और पूजा-आराधना के दिन व समय का उपास्यदेव के चरणों में परिचय है। आराधना करते समय गणेशजी पर उपरोक्त वस्तुएं चढ़ाने के बाद, दाएं हाथ में तिल, कुशा या दूब, अक्षत अर्थात् चावल, यज्ञोपवीत और जल लेकर निम्न संकल्प वाक्यों का स्तवन किया जाता है। परन्तु उपासना करते समय कोई वस्तु आपके पास नहीं होती, अतः केवल भावलोक में ही ये वस्तुएं आप अपने हाथ में लेकर संकल्प के इन वाक्यों का मन-ही-मन स्तवन कीजिए—

हरिः ॐ तत्सत्। नमः परमात्मने श्री पुराणपुरुषोत्तमाय श्रीमद्भगवते महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्याद्य ब्रह्मणो द्वितीय प्रहरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टविंशतितमे कलियुगे कलि प्रथमचरणे जम्बूदीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्य्यावर्तान्तर्गत क्षेत्रे सृष्टिसंवत्सराणां मध्ये 'अमुक' नाम्नि संवत्सरे, 'अमुक' अयने, 'अमुक' ऋतौ, 'अमुक' मासे, 'अमुक' पक्षे, 'अमुक' तिथौ, 'अमुक' नक्षत्रे, 'अमुक' योगे, 'अमुक' वासरे, 'अमुक' राशिस्थे सूर्ये, चन्द्रे, भौमे, बुधे, वृहस्पतौ, शुक्रे, शनौ, राहो, कैतौ एवं गुण विशिष्टायां तिथौ, 'अमुक' गोत्रोत्पन्न, 'अमुक' नाम्निऽहं धर्मार्थकाममोक्षहेतवे श्रीगणपत्यादि सह भगवान् सूर्यदेव पूजनमहं करिष्यते।

इस संकल्प वाक्य में जहां-जहां 'अमुक' शब्द आया है, वहां क्रमशः विद्यमान संवत्सर, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, तिथि, नक्षत्र, योग, दिन, सूर्यादि नवग्रहों की स्थिति वाली राशियों के नाम, अपने गोत्र तथा अपने नाम का उच्चारण किया जाता है। अपना वर्ण बताने के लिए ब्राह्मण को 'शर्माऽहं', क्षत्रिय को 'वर्माऽहं', वैश्य को 'गुप्तोऽहं' तथा शूद्र को 'दासोऽहं' शब्द नाम के साथ लगाने का शास्त्रीय विधान है।

कोई भी धार्मिक कृत्य किया जाए अथवा ईश्वर के किसी भी रूप या अवतार अथवा देवी-देवता की पूजा-आराधना या मानसिक उपासना, संकल्प वाक्य तक की सभी क्रियाएं उपरोक्त विधि से ही की जाती हैं। सत्य तो यह है कि पूजा, आराधना और उपासना ही नहीं, बल्कि यज्ञ, हवन और विवाह-शादी आदि धार्मिक कृत्यों में भी वास्तविक पूजा से पूर्व यहां तक की सभी प्रक्रियाएं सम्पन्न होती हैं। इसके बाद ही हम जिस देव की आराधना-उपासना कर रहे होते हैं, उसका ध्यान करने के साथ ही प्रारम्भ कर दी जाती है उस देवता की आराधना-उपासना।

उपास्यदेव भगवान सूर्यदेव का ध्यान

भगवान सूर्यदेव के रूप-स्वरूप का मन-ही-मन चिन्तन करते हुए आप चार पंक्तियों के इस मंत्र के स्तवन द्वारा भगवान सूर्यदेव का ध्यान कीजिए—

जवाकुसुमसंकाशम् द्विभुजम् पद्माहस्तकम्।
सिन्दूराम्बरमाल्यम् च रक्तगन्धानुलेपनम्॥
माणिक्यरत्नखचित सर्वाभरणभूषितम।
सप्ताश्वरथवहन्तु मेरुम् चैव प्रदक्षिणम॥

अर्थात् जवाकुसुम के फूल के समान गहरे लाल रंग के शरीर और दो भुजाओं वाले, मस्तक पर सिन्दूर एवं लाल चंदन तथा कण्ठ में दिव्यहार से सुशोभित, रत्नों से जड़े सभी आभूषण पहने हुए और सात घोड़े जुते हुए अपने रथ पर निरन्तर परिक्रमा करते हुए भगवान सूर्यदेव को मैं नमस्कार करता हूं।

कुछ मास अथवा वर्षों तक निरन्तर उपासना करने पर स्थिति यह हो जाती है कि ध्यान के इन मन्त्रों का स्तवन पूर्ण होते-होते आप भावलोक में भगवान सूर्यदेवजी को अपने अत्यन्त निकट ही नहीं, बल्कि सम्मुख उपस्थित अनुभव करने लगते हैं। आप रविदेवजी की षोडशोपचार आराधना करें अथवा मानसिक उपासना, विधि-विधानपूर्वक बड़ी संख्या में किसी मन्त्र का जप करें अथवा कोई तान्त्रिक सिद्धि—सभी प्रक्रियाएं एक साथ एक ही बैठक में पूर्ण की जानी चाहिए। उपासना अथवा षोडशोपचार आराधना करते समय आप इस अध्याय के मन्त्रों के साथ ही आगामी अध्याय के मन्त्रों का भी स्तवन कीजिए। इस अध्याय को दो भागों में वर्गीकृत करने का एकमात्र कारण यही है कि मन्त्रों का बड़ी संख्या में जप अथवा तान्त्रिक साधनाएं करते समय भी इस अध्याय में वर्णित सभी क्रियाएं की जाती हैं। परन्तु तब आप आगामी अध्याय में संकलित मन्त्रों का स्तवन नहीं करेंगे, बल्कि पुस्तक के अन्तिम खण्ड में संकलित किसी मन्त्र का जप अथवा साधना करेंगे। इसी प्रकार दशोपचार पूजा करते समय इस अध्याय में वर्णित किसी प्रक्रिया को नहीं किया जाता, केवल आगामी अध्याय में वर्णित क्रियाएं की जाती हैं। शायद यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि सभी मन्त्रों को अच्छी प्रकार कण्ठस्थ कर लेने के पश्चात् ही आप उपासना प्रारम्भ करेंगे। पुस्तक में देखकर मन्त्र पढ़ने पर तो हमारा ध्यान शब्दों में ही अटका रहेगा, अपने उपास्यदेव भगवान सूर्यदेवजी से हमारा वह सान्निध्य स्थापित हो ही नहीं पाएगा, जो आराधना, उपासना, मंत्रसिद्धि और तांत्रिक साधनाओं में सफलता की पहली शर्त ही नहीं, बल्कि एकमात्र आधार है।

❑❑

सूर्योपासना का उत्तरार्द्ध

गत अध्याय में वर्णित सूर्यदेव का ध्यान करने के साथ ही इस अध्याय में वर्णित मंत्रों का स्तवन प्रारम्भ कर दिया जाता है। इस अध्याय में हमने प्रत्येक मंत्र के नीचे उसका हिन्दी भावार्थ भी दिया है। मंत्रों को कण्ठस्थ करते समय इन अर्थों को भी भली प्रकार समझ लीजिए। मंत्रों के अर्थ को समझे बगैर उनके स्तवन का कोई लाभ नहीं, मुख्य महत्व तो हमारी भावना का ही है। इसी प्रकार गत अध्याय के समान ही प्रत्येक मंत्र के साथ ही उसके साथ समर्पित की जाने वाली वस्तुओं तथा उन्हें अर्पित करने की विधि का विवेचन भी किया गया है। इसके दो कारण हैं। सूर्यदेव का विग्रह अथवा चित्र सम्मुख रखकर दशोपचार पूजा अथवा षोडशोपचार आराधना करते समय आप इन सभी वस्तुओं को वास्तविक रूप में भगवान के विग्रह अथवा चित्र के सम्मुख रखेंगे। इससे भी बड़ा कारण यह है कि मानसिक उपासना करते समय यद्यपि कोई वस्तु तो क्या सूर्यदेव का चित्र तक हमारे पास नहीं होता, परंतु हमारे मन में यह भाव तो होता ही है कि भगवान भास्कर हमारे सामने दिव्य सिंहासन पर साक्षात रूप में विराजमान हैं और हम एक-एक करके सभी वस्तुएं उन्हें समर्पित कर रहें हैं। वास्तव में समर्पण की इस भावना का नाम ही उपासना है, मंत्र तो इन भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम मात्र हैं। उपासना करते समय यह विश्वास अवश्य रखिए कि भगवान भास्कर आपकी सेवाओं को स्वीकार करने के लिए आते हैं और वे आपकी प्रत्येक सेवा को स्वीकार भी करते हैं। यह अटल विश्वास ही उपासना में सफलता की प्रथम शर्त है, और वास्तव में सच्ची उपासना की अनिवार्य आवश्यकता भी।

यद्यपि उपासना के प्रारम्भिक दिनों में यह स्थिति नहीं आ पाती। परन्तु कुछ समय तक निरंतर उपासना करते रहने पर आपका हृदय इतना पवित्र हो जाता है कि उपासना करते समय आप भगवान रविदेव को न केवल अपने सम्मुख साक्षात विराजमान देखते हैं, बल्कि यह भी अनुभव करने लगते हैं कि भगवान भास्कर आपके द्वारा अर्पित की गई प्रत्येक वस्तु और सेवा को सहर्ष स्वीकार भी कर रहे हैं। वैसे यह सभी मात्र भावलोक में ही होता है, स्थूल रूप में तो आप नयन बन्द किए

हुए मन-ही-मन मन्त्रों का स्तवन ही कर रहे होते हैं। एक सच्चा उपासक भावलोक में देखता है कि उसके द्वारा ध्यान के मंत्र का स्तवन पूर्ण होने के पूर्व ही भुवन भास्कर भगवान सूर्यदेव अपने रथ पर आरूढ़ उसके सम्मुख आकर खड़े हो गए हैं। अपनी भावना के अनुरूप ही वह उनके रूप-स्वरूप और वाहन आदि को देखता है। वह मन की आंखों से यह भी देखता है कि भगवान सूर्यदेव को वहां उपथित देखकर देवताओं ने स्वर्ग से एक अद्भुत दिव्य सिंहासन वहां लाकर रख दिया है। इसके साथ ही देवताओं ने स्वर्ग से स्वर्ण निर्मित और रत्न जड़ित दो चौकियां भी वहां लाकर रख दी हैं। सिंहासन उपासक के ठीक सामने रखा है और चौकियां दाईं एवं बाईं ओर। उपासक यह भी देखता है कि दाहिनी ओर की चौकी पर पूजा में काम आने और भगवान सूर्यदेव को समर्पित की जाने वाली सभी वस्तुएं रखी हुई हैं। आगामी प्रक्रियाओं में उपासक दाहिने हाथ की तरफ रखी चौकी से एक-एक वस्तु उठाकर सूर्यदेव को समर्पित करता रहता है और खाली पात्र बाईं ओर रखी चौकी पर रखता जाता है।

मूर्ति सम्मुख रखकर लौकिक वस्तुओं के समर्पण के साथ सूर्यदेव की आराधना करते समय ये सभी प्रक्रियाएं स्थूल रूप में भी की जाती हैं, परन्तु उपासना करते समय आप ये सभी कार्य केवल भावनात्मक रूप में ही करेंगे। मन में इस प्रकार के भाव अवश्य लाएं, परन्तु न तो हाथों को हिलाएं और न ही नयनों को खोलें। यही नहीं, मन्त्रों का स्तवन भी आप मन-ही-मन कीजिए। मन्त्रों का जप और उपासना करते समय किसी प्रकार के स्वर का निकलना तो दूर ओष्ठों का हिलना तक प्रभाव को क्षीण कर देता है।

आह्वान एवं आसन समर्पण

आप भावलोक में देख रहे हैं कि भगवान सूर्यदेव अपने दिव्य रथ पर सवार आपसे कुछ ही दूर खड़े हुए हैं। आप अनुभव करते हैं कि वे मुग्ध भाव से आपकी ओर देख रहे हैं और आप उनको देखकर गद्गद हो रहे हैं। इसी समय आपके हृदय में विचार आता है कि मेरी पूजा को स्वीकार करने हेतु पधारे हुए भगवान भास्कर की सेवा मुझे प्रारम्भ कर देनी चाहिए। सबसे पहले इस मन्त्र के मन-ही-मन स्तवन द्वारा रविदेवजी से अपने और अधिक निकट आने की प्रार्थना की जाती है—

ॐ सहस्त्र शीर्षाः पुरुषः सहस्त्राक्षः सहस्त्र पाक्ष।
स भूमि ٧ सब्येतस्तपुत्वा अयतिष्ठ दशांगुलम्॥
आगच्छ सूर्य देवःभो स्थाने चात्र स्थिरो भव।
यावत् पूजा करिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिरो भव॥

हे हजारों मुखों, हजारों हाथों और हजारों पैरों वाले दिव्य विराट पुरुष! आप और आपका तेज अत्यन्त दर्शनीय है। आपको मेरा नमस्कार है। आप अपने दिव्य रथ से उतरकर यहां दिव्य सिंहासन पर विराजमान हों, जिससे मैं आपकी सेवा और पूजा कर सकूं। भगवान से सिंहासन पर विराजमान होने की पुनः प्रार्थना इस मंत्र के स्तवन द्वारा कीजिए—

विचित्र रत्न खचितं दिव्या स्तरण संयुतम्।
स्वर्ण सिंहासन चारू गृहीष्व रवि पूजिता॥
रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्व सौख्यकरं शुभम्।
ॐ इदमासन समर्पयामि श्री देव सूर्याय नमः॥

हे भास्कर! यह सुन्दर स्वर्णमय सिंहासन ग्रहण कीजिए, इसमें विचित्र रत्न जड़े गए हैं तथा इस पर दिव्य बिछावन बिछा हुआ है।

पाद्य, अर्घ्य और आचमनीय

भावलोक में आप देखते हैं कि भगवान भास्कर देवताओं द्वारा लाकर रखे गए उस दिव्य सिंहासन पर विराजमान हो चुके हैं। रास्ते की थकान मिटाने और अतिथि-सत्कार करने के लिए सबसे पहले आप आसन पर बैठे हुए भगवान सूर्यदेव के चरण पखारें। भावलोक में आप अनुभव कर रहे हैं कि देवताओं द्वारा लाकर रखी गई चौकी से शीतल-सुगन्धित जल का पात्र बाएं हाथ में उठाकर आप सूर्यनारायणजी के चरणों में धार से जल डाल रहे हैं और दाहिने हाथ से प्रभु के चरण पखार रहे हैं। मक्खन से भी सुकोमल और कल्पना से भी अधिक सुन्दर हैं भगवान रविदेव के चरण-कमल। भावलोक में यह कार्य करते हुए आप इस श्लोक का मन ही मन स्तवन कीजिए—

ॐ सर्व तीर्थं समुद्भूतं पाद्य गन्धादिभिर्युतम्।
प्रचंड ज्योति गृहाणेद दिवाकर भक्त वत्सलम्॥

हे प्रचंड ज्योति के मालिक भगवान दिवाकर! यह सारे तीर्थों के जल से तैयार किया गया तथा गंध आदि से मिश्रित पाद्य जल (पैर धोने हेतु पवित्र जल) आप ग्रहण करें।

भगवान भास्कर के चरण धोने के पश्चात् आप कल्पना करते हैं कि उस बरतन को बाईं ओर की चौकी पर रखकर और हाथ धोकर आपने दूसरा सुगन्धयुक्त गंगाजल से भरा पात्र उठा लिया है। मन की आंखों से आप देख रहे हैं कि आप श्री सूर्यदेव को अर्घ्य दे रहे हैं और वे दोनों हाथों की अंजलि से उसे ग्रहण कर रहे हैं। दो हाथों की अंजलि बनाने के लिए उन्होंने अपने हाथों के आयुध अपने आसन के

निकट रख लिए हैं। वैसे ये सभी कार्य केवल भावलोक में होते हैं, वास्तव में तो आप मन-ही-मन इस मन्त्र का स्तवन करते हैं—

ॐ सूर्य देवं नमस्तेऽस्तु गृहाणं करुणा करम्।
अर्घ्यं च फलं संयुक्त गंध माल्याक्षतै युतम्॥

हे सूर्यदेव! आपको नमस्कार है। आप गन्ध, पुष्प, अक्षत और फल आदि रसों से युक्त यह अर्घ्य जल स्वीकार करें।

अर्घ्य देने अर्थात् भगवान के हाथ धुलाने के पश्चात् सूर्यदेवजी को पीने के लिए जल समर्पित किया जाता है। आचमनीय नामक इस प्रक्रिया का मन्त्र है—

तेजस्व रश्मि धारण नमस्तुभ्यं त्रिदशैरभिवन्ति।
गंगो दकेन देवेशि करुष्वाचमन देव॥

हे तेजस्वी रश्मियों के विधाता भगवान सूर्य आपको नमस्कार है। आप गंगा जल से आचमन करें।

मन्दिरों में ये सभी प्रक्रियाएं पुजारी करते हैं और हमारी भूमिका मात्र एक दर्शक की होती है। घर में लौकिक वस्तुओं के साथ पूजा-आराधना करते समय मूर्ति या चित्र के सम्मुख भूमि पर जल छिड़ककर ही पाद्य (पैर धुलवाने), अर्घ्य और आचमन के अर्पण की क्रियाएं सम्पन्न की जाती हैं। परन्तु उपासना करते समय यह सभी कार्य उपासक कल्पना में भावनात्मक रूप से तो कर रहा होता है, परन्तु स्थूल रूप से वह निश्चल बैठा हुआ मन्त्रों का स्तवन मात्र ही करता है। वह भी इतने मन्द स्वर में कि उसके होंठ तक नहीं हिलते। ठीक यही स्थिति आगे के सभी मन्त्रों और प्रक्रियाओं की भी है।

सात पदार्थों में स्नान और उनके मंत्र

जिस प्रकार आप नित्य कर्मों से निवृत्त होने के बाद स्नानादि करके उपासना कर रहे हैं, ठीक उसी प्रकार भगवान सूर्यदेव भी स्नानादि से निवृत्त होकर अपने सम्पूर्ण श्रृंगार में आपकी सेवा-उपासना स्वीकार करने के लिए आए हैं। फिर भी शास्त्रों की मान्यता के अनुसार आप उन्हें स्नान कराएंगे—एक नहीं, बल्कि छः बार—क्रमशः गौदुग्ध, दही, घी, शहद, शक्कर और अन्त में शुद्ध जल से। इनके निश्चित क्रम में इन सात वस्तुओं से आप भगवान रविदेव को स्नान कराएं। सर्वप्रथम इस श्लोक के स्तवन द्वारा उन्हें गाय के दूध से स्नान कराया जाता है—

कामधेनु समुद्भूतं सर्वेषां जीवन परम्।
पावनं यज्ञ हेतुश्य पयः स्नानार्थ समर्पितम्॥

हे दीनानाथ! कामधेनु के थनों से निकला, सबके लिए पवित्र, जीवनदायी तथा यज्ञ के हेतु यह दूध आपके स्नान के लिए समर्पित है।

गौदुग्ध स्नान के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र का मन ही मन स्तवन करते हुए सूर्यदेवजी को 'दधि स्नान' अर्थात् ताजा दही से स्नान कराइए—

पयस्तु समुद्भूतं मधु राम्लं शशि प्रभम्।
दध्या नीतं मया भास्कर स्नानार्थं प्रतिग्रह्यताम्॥

हे भगवान भास्कर! यह दूध से निर्मित मीठा और चन्द्र के समान उजला दही ले आया हूं, आप इससे स्नान कीजिए।

दही से स्नान कराने के पश्चात् इस मन्त्र का स्तवन करते हुए उन्हें शुद्ध देशी घी में 'घृत स्नान' कराया जाता है—

नवनीत समुत्पन्नं सर्व संतोष कारकम्।
घृत तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थ प्रतिग्रह्यताम्॥

हे सूर्यदेव! मक्खन से उत्पन्न तथा सबको संतुष्ट करने वाला यह घृत मैं आपको अर्पित करता हूं, इससे स्नान कीजिए।

अब इस मंत्र के मन-ही-मन स्तवन द्वारा भगवान सूर्यदेवजी को शुद्ध शहद में स्नान कराइए—

पुष्प रेणु समुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु।
तेज पुष्टि कर दिव्यं स्नानार्थ प्रतिग्रह्यताम॥

हे रविदेवजी! पुष्प के पराग से उत्पन्न तेज को पुष्टि करने वाला दिव्य स्वादिष्ट मधु आपके समक्ष प्रस्तुत है, इसे स्नान के लिए ग्रहण करें।

इसके पश्चात् भगवान भास्कर को शर्करा अर्थात् शक्कर में स्नान कराया जाता है। शर्करा स्नान के लिए आप इस मंत्र का मन-ही-मन स्तवन कीजिए—

इक्षु सार समुद्भूतां सर्करा पुष्टिवा शुभा।
मलाप हारिका दिव्या स्नानार्थ प्रतिग्रह्यताम्॥

भगवान रविदेवजी ईख के सार तत्व अर्थात् रस से यह शर्करा निर्मित है। यह पुष्टि कारक, शुभ तथा मैल को दूर करने वाली है। यह दिव्य शर्करा आपकी सेवा में प्रस्तुत है।

इसके पश्चात् आप भगवान सूर्यदेव के सम्पूर्ण शरीर पर सुगन्धित तेल लगाने हेतु इस मंत्र का स्तवन कीजिए—

चम्पका शोक षकु मालती मोगरा दिभिः।
बासिंत स्निग्धा हेतु चारू प्रतिग्रह्यताम्॥

हे प्रभाकर! चम्पा, मौलसिरी, मालती और मोगरा आदि से वासित तथा चिकनाहट के लिए यह तेल व इत्र आप ग्रहण करें।

उपरोक्त छह पदार्थों से स्नान कराने के पश्चात् अन्त में भगवान सूर्यदेवजी को शुद्ध जल से स्नान कराया जाता है। इस जल में सभी नदियों का जल मिश्रित है, इस भावना के साथ आप शुद्धोदक स्नान के लिए इस मंत्र का मन-ही-मन स्तवन कीजिए—

गंगा च यमुना गोदावरी सरस्वती।
नर्मदा सिन्धु कावेरी स्नानार्थ प्रतिग्रह्यताम्॥

इस शुद्ध जल के रूप में गंगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती, नर्मदा, सिन्धु और कावेरी नदियां यहां विद्यमान हैं। स्नान के लिए यह जल ग्रहण करें।

लौकिक वस्तुओं का प्रयोग करके पूजा-आराधना करते समय भी मूर्ति को इन वस्तुओं से नहीं नहलाया जाता। मात्र दो-चार बूंदें मूर्ति या चित्र के समीप भूमि पर डाल दी जाती हैं। परन्तु उपासना में किसी वस्तु का प्रयोग नहीं होता। केवल मंत्रों का ही स्तवन किया जाता है।

वस्त्र, यज्ञोपवीत, भस्म एवं गंध समर्पण

आप पूजा-आराधना करें अथवा मानसिक उपासना, स्नान के बाद भगवान सूर्यदेवजी को क्रमश: वस्त्र और यज्ञोपवीत अर्पित किए जाते हैं, तथा भगवान के मस्तक पर चन्दन का तिलक लगाया जाता है। वस्त्र समर्पण के लिए आप इस मंत्र का स्तवन कीजिए—

शीत वातोष्ण संत्राणं लज्जाया रक्षणं परम्।
देहालंकारणं वस्त्रमतः शांति प्रयच्छ मे॥

ये वस्त्र आपकी सेवा में समर्पित हैं। यह सर्दी-गरमी और हवा से बचाने वाला, लज्जा का उत्तम रक्षक तथा शरीर का अलंकार है। इसे ग्रहण कर मुझे शांति प्रदान करें।

वस्त्र समर्पण के पश्चात् इस मंत्र के स्तवन द्वारा भगवान भास्कर को यज्ञोपवीत अर्थात् जनेऊ समर्पित किया जाता है—

नवभि स्तन्तु भिर्युक्तं त्रिगुणं देवता मयम्।
उपवीतं मया दत्तं गृहाणा परमेश्वरः॥

नौ तंतुओं से बना त्रिगुण और देवता स्वरूप यह यज्ञोपवीत मैंने समर्पित किया है। आप इसे ग्रहण करें।

यज्ञोपवीत समर्पित करने के बाद रविदेवजी के मस्तक पर इस मंत्र का स्तवन करते हुए सुगन्धित और शीतलता प्रदायक चन्दन का तिलक लगाइए—

श्रीखंड चन्दनं दिव्यं गंधाढ्य सुमनोहरम्।
विलेपनं रश्मि दाता चन्दनं प्रतिग्रह्यताम्॥

हे रश्मि दाता! यह दिव्य चन्दन सुगंध से पूर्ण तथा मनोहर है। विलेपन के लिए यह चन्दन स्वीकार करें।

चन्दन अथवा रोली का तिलक लगाने पर उसे तभी पूर्ण माना जाता है, जब तिलक के ऊपर चन्द चावल भी चिपका दिए जाएं। इसलिए भगवान सूर्यदेव को गन्ध–समर्पण के बाद इस मंत्र के द्वारा आप अक्षत अर्पित करें—

अक्षताश्य देवः कंकु भाक्तां सुभोभिता।
मय निवेदिता भक्तया गृहाण परमेश्वरः॥

हे परमेश्वर! ये कुंकुम में रंगे हुए सुन्दर अक्षत हैं। मैं भक्ति भाव से इन्हें आपकी सेवा में अर्पित करता हूं, इन्हें ग्रहण कीजिए।

पुष्प, धूप व दीप समर्पण

आप भावलोक में देखते हैं कि सम्पूर्ण श्रृंगार के पश्चात् भगवान सूर्यदेवजी की अलौकिक छवि पहले से भी द्विगुणित हो गई है। आप निम्न मंत्रों के साथ उन्हें क्रमशः पुष्प, धूप एवं दीप समर्पित कीजिए। पूजा करते समय आराधक प्रभु के विग्रह पर माला तथा पुष्प चढ़ाने के बाद धूप और दीप भी प्रज्वलित करता है, जबकि उपासना करते समय तो सभी कार्य मात्र भावनात्मक रूप में ही किए जाते हैं। पुष्प तथा पुष्पमाला अर्पण हेतु आप इस मंत्र का स्तवन कीजिए—

माल्यदीनि सुगन्धीनि माल्यादिनी वै प्रभोः।
मया हृतानि पुष्पाणि सर्वाणि प्रतिगृह्यताम्॥

हे देव! मालती इत्यादि पुष्पों की मालाएं और पुष्प मैं आपके लिए लाया हूं, आप इन्हें पूजन के लिए ग्रहण करें।

आप भावलोक में देख रहे हैं कि भगवान सूर्यदेव के चरणों के निकट एक स्वर्णपात्र में पवित्र अग्नि जल रही है। आप दाहिने हाथ की चौकी से सुगन्धित धूप और हवन सामग्री की कटोरी उस अग्नि में डाल रहे हैं। पूजा करते समय वास्तव में धूपबत्ती जलाई जाती है, जबकि उपासना करते समय तो आप मात्र इस मंत्र के स्तवन द्वारा ही भगवान को धूप की सुगन्ध अर्पित करेंगे—

वनस्पति रसोद्भूतोगन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः।
आघ्रेयः सर्व देवानां धूपोढ्यं प्रतिग्रह्यताम्॥

हे आदित्य! वनस्पतियों के रस से निर्मित सुगन्धित उत्तम गंध, रूप और समस्त देवी–देवताओं के सूंघने योग्य यह धूप आपकी सेवा में अर्पित है, इसे ग्रहण करें।

उपासना करते समय तो दीपक भी भावनात्मक रूप में ही प्रज्वलित किया जाता है, जबकि पूजा करते समय वास्तव में दीपक जलाया जाता है। इस प्रक्रिया को दीप–दर्शन कहा जाता है। इसके लिए आप इस मंत्र का मन–ही–मन स्तवन कीजिए—

साज्यं च वर्ति सं बह्निणां योजितं मया।
दीप गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरा पहम्॥
भक्तयां दीप प्रचच्छामि देव परमेश्वरः।
त्राहि मां निरयाद घोरा दीपज्योतिर्नमोऽस्तुते॥

घी में डुबोई रूई की बत्ती को अग्नि से प्रज्वलित करके दीप आपकी सेवा में अर्पित किया है। इसे ग्रहण करें। यह दीप त्रिभुवन के अंधकार को मिटाने वाला है। मैं अपने इष्टदेव भगवान भास्कर को यह दीप अर्पित करता हूं। हे प्रभो! आप मुझे घोर कष्टों और आपदाओं से बचाइए।

नैवेद्य, फल एवं ताम्बूल समर्पण

भावनात्मक रूप में विविध वस्तुओं का समर्पण करते हुए सूर्यदेवजी की मानसिक उपासना की जाए अथवा लौकिक वस्तुओं का उपयोग करते हुए पूजा-आराधना, आपके हृदय में भाव आता है कि आराध्यदेव भगवान भास्कर को अब भोजन कराना चाहिए। पूजा करते समय प्रभु को नैवेद्य के रूप में प्रायः बताशे अथवा मावे की मिठाइयां अर्पित की जाती हैं, परन्तु उपासना करते समय ये सभी क्रियाएं मात्र भावनात्मक रूप में ही की जाएंगी। भगवान सूर्यदेव से इस मंत्र के स्तवन द्वारा नैवेद्य स्वीकार करने के लिए आप प्रार्थना कीजिए—

नैवेद्य ग्रह्यतां देव भक्ति मेह्याचलां कुरु।
ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च परां गतिम्॥
शर्करा खण्ड खाद्यानि दद्यक्षीर घृतानि च।
आहार भक्ष्य भोज्यं च नैवेद्यं प्रतिग्रह्यताम्॥

हे सविता! आप यह नैवेद्य ग्रहण करें तथा मेरी भक्ति को अविचल करें। मुझे मनवांछित वर दीजिए और परलोक में परम गति प्रदान कीजिए। शर्करा व खांड से तैयार किए गए पदार्थ दूध, घी एवं भक्ष्य भोज आहार नैवेद्य के रूप में अर्पित हैं, इन्हें स्वीकार कीजिए।

इस मन्त्र का स्तवन करते समय उपासक भावलोक में देखता है कि देवताओं ने स्वर्ग से लाकर एक चौकी और उस पर अलौकिक थाल में सभी भोज्य पदार्थ भगवान सूर्यदेवजी के सम्मुख रख दिए हैं। उस चौकी पर जल और फल आदि भी रखे हैं। भावलोक में ही उपासक यह भी देखता है कि भगवान भास्कर उस भोजन को बड़े प्रेम के साथ ग्रहण कर रहे हैं। थोड़ा-सा भोजन ग्रहण करने के बाद बाकी उन्होंने प्रसाद के रूप में भक्तों के लिए छोड़ दिया है। उन्होंने कुछ फल खाकर जल भी पी लिया है। अब आपके मन में भाव आता है कि प्रभु को सोने अथवा चांदी का वरक लगा हुआ सुगन्धित पान खिलाना चाहिए। इस भावना के आते ही आप देखते

हैं कि आपके निकट ही एक स्वर्ण थाल में चांदी के वरक लगे हुए बढ़िया पान देवताओं ने लाकर रख दिए हैं। सुपारी, इलायची, लौंग और अनेक सुगन्ध-प्रदायक मधुर मसालों से युक्त ये पान आप भगवान सूर्यदेवजी को इस मंत्र के स्तवन द्वारा प्रस्तुत कीजिए—

ॐ पूंगीफलं महद्दिव्यं नागवल्ली दलैर्युतम्।
एला चूर्णादिभिर्युक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्॥

हे आदित्य! महान दिव्य पूंगीफल, इलायची और चूना आदि से युक्त पान का बीड़ा आपकी सेवा में अर्पित है, इसे ग्रहण करें।

द्रव्य समर्पण, नीराजन तथा पुष्पांजलि

पान समर्पण के पश्चात् भगवान सूर्यदेवजी की सेवा-सत्कार का अन्तिम चरण प्रारम्भ होता है। उन्हें भेंट के रूप में कुछ धन अर्पित करने, इसके बाद उनकी आरती उतारने और तत्पश्चात् पुष्पांजलि समर्पित करने की प्रक्रियाएं आप इस चरण में करेंगे। भेंट के रूप में रुपए-पैसे, आभूषण आदि की कल्पना उपासक अपनी भावना के अनुरूप करता है। इनका समर्पण इस मन्त्र के द्वारा किया जाता है—

हिरण्यगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥

हे सूर्यदेव! सुवर्ण हिरण्य गर्भ में स्थित अग्नि का बीज है। यह अनन्त पुण्य फलदायक है। परमेश्वर, आपकी सेवा में यह अर्पित है, इसे ग्रहण कर मुझे शांति प्रदान करें।

किसी भी देवी-देवता की आराधना अर्थात् मूर्ति की पूजा करते समय थाली में दीप जलाकर विभिन्न आरतियों का गायन करते हुए उनकी आरती उतारी जाती है। परन्तु मानसिक उपासना करते समय आरती के लिए दीपक भी आपके पास नहीं होता। आप केवल इस श्लोक का मन-ही-मन स्तवन ही करेंगे—

अग्निर्ज्योतिरविर्ज्योति ज्योतिर्नारायणोविभुः।
नीराजयानि देवेशं पञ्चदीपे सुरेश्वर॥

आरती के बाद भगवान पर एक बार फिर फूल चढ़ाए जाते हैं। मन्दिरों में तो पुजारी आरती उतारते हैं और भक्त हाथ में फूलों की पंखुड़ियां लेकर खड़े रहते हैं। आरती समाप्त होते ही भक्तगण ये पुष्प भगवान के विग्रह पर चढ़ा देते हैं। परन्तु उपासना करते समय सभी क्रियाओं की तरह पुष्पांजलि का अर्पण भी आप केवल भावनात्मक रूप में करेंगे अर्थात् अविचल भाव से बैठे रहकर मन में इस मन्त्र का स्तवन करेंगे—

नाना सुगन्ध पुष्पाणि यथा कलोद अर्क च।
पुष्पांजलि मेया दत्तो ग्रहाण परमेश्वरः॥

हे भगवान सूर्यदेवजी, इस ऋतु में उत्पन्न होने वाले तरह-तरह के सुगन्धित पुष्प मैं पुष्पांजलि के रूप में अर्पित कर रहा हूं, इन्हें स्वीकार कीजिए।

प्रदक्षिणा, नमस्कार और क्षमा-प्रार्थना

सच्चे हृदय से उपासना करने वाला उपासक मन की आंखों से देखता है कि उसके उपास्यदेव भगवान भास्कर को उसके पास आए हुए पर्याप्त समय व्यतीत हो चुका है और अब वे जाना चाहते हैं। उनके आसन से उठने के पूर्व ही इस मन्त्र के स्तवन द्वारा रजनीतमहारी भगवान सूर्यदेवजी को आप प्रणाम कीजिए—

पार्थिवः पार्थ संपूज्य पार्थदः प्रणतः प्रभुः।
पृथिवीशः पृथातुन्द्रः धरणीनायको नमः॥

मन की आंखों से आप देख रहे हैं कि पुष्पांजलि ग्रहण करने के बाद भगवान भास्कर अपना आसन छोड़कर उठ खड़े हुए हैं और अब प्रस्थान करना चाहते हैं। उनके जाने से पूर्व आप इस मन्त्र के स्तवन द्वारा उनकी प्रदक्षिणा अर्थात् परिक्रमा कीजिए। यह प्रदक्षिणा भी क्रियात्मक रूप में नहीं की जाती। आप अपने स्थान पर बैठे रहकर इस मन्त्र का मन-ही-मन स्तवन कीजिए—

यानि कानि च पापानि ज्ञाता ज्ञात कृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे॥

हे प्रभो! मनुष्य से जाने-अनजाने में जो पाप हो जाते हैं, वे आपकी परिक्रमा करते समय पद-पद पर नष्ट हो जाते हैं, हे देव मेरी रक्षा करें।

कुछ वर्षों तक एकाग्र मन से निरन्तर उपासना करते रहने पर आपका हृदय इतना पवित्र हो जाता है कि अपने उपास्यदेव भगवान सूर्यनारायण से आपका सतत सान्निध्य बना रहता है। भावलोक में आप यह भी देखते हैं कि भगवान सूर्यदेवजी को आपके निकट देखकर अनेक देवी-देवता, यक्ष-गन्धर्व, ऋषि-मुनि, साधु-सन्त और सद्गृहस्थ वहां उपस्थित हो गए हैं। उनमें से कुछ भगवान सूर्यदेव की स्तुतियां कर रहे हैं, कुछ आरती उतार रहे हैं, कुछ प्रदक्षिणा अर्थात् परिक्रमा कर रहे हैं तो अनेक भक्त मस्त होकर भगवान के सामने नृत्य कर रहे हैं। आप यह भी अनुभव करते हैं कि सूक्ष्म रूप से आप अर्थात् आपकी आत्मा उन देवों एवं ऋषि-मुनियों के मध्य उपस्थित है और गायन-वादन अथवा नृत्य में आप भी उनके साथ तल्लीन हैं। इन भावों में आप कितनी देर डूबे रहते हैं यह आपकी भक्तिभावना, श्रद्धा और हृदय की पवित्रता के साथ ही आपके उपास्यदेव भगवान भास्कर की कृपा पर भी निर्भर करेगा। इसके बाद सहस्रनाम, अन्य स्तोत्रों और चालीसों आदि का पाठ करने के बाद भगवान सूर्यदेव से सेवा-पूजा में रह गई कमियों के लिए क्षमायाचना की जाती है। क्षमायाचना के इस मंत्र का स्तवन सबसे अन्त में आसन से उठते समय ही आप करेंगे—

अपराध शतम् देव मत्कृतं च दिने दिने।
क्षम्यतां पावने देव-देवेश नमोऽस्तु ते॥

जिस प्रकार पूजा-आराधना करते समय आरती के तत्काल बाद ही पूजा समाप्त नहीं हो जाती; भजनों, आरतियों और चालीसों का गायन चलता रहता है; ठीक उसी प्रकार उपासना करते समय भी प्रदक्षिणा के बाद भगवान सूर्यदेवजी के किसी मन्त्र का जप एवं अष्टकों, स्तोत्रों तथा सहस्रनाम अथवा शतनाम का पाठ किया जाता है। आप भगवान सूर्यदेवजी के सहस्रनाम, अष्टोत्तर शतनाम, स्तोत्रों और अष्टकों आदि का पाठ संस्कृत में करते हैं अथवा हिन्दी में या फिर अपनी स्थानीय भाषा में, इससे भगवान को कोई अन्तर नहीं पड़ता। हमारे भगवान सूर्यदेवजी ज्ञान के साक्षात स्वरूप हैं और सभी भाषाएं समान रूप से समझते हैं। अत: आप उनकी आराधना-उपासना और स्तोत्रों आदि का स्तवन संस्कृत में करें अथवा हिन्दी में चालीसों का पाठ, आपको समान फलों की प्राप्ति होगी। मुख्य महत्व आपके द्वारा प्रयोग की जाने वाली भाषा और उपासना में लगाए जाने वाले समय का नहीं, बल्कि उसकी निरन्तरता एवं आपके समर्पण, भक्तिभाव, आस्था तथा विश्वास का है। हमारे उपास्यदेव भगवान भास्कर हमारे पालक, रक्षक एवं स्वामी हैं और हम उनके अबोध बालक, यह भाव ही हमें उनके अधिक निकट ले जाता है। अत: व्यर्थ भ्रम में न पड़िए, जितना अधिक-से-अधिक सम्भव हो सके; उनकी चर्चा, चालीसों, भजनों, शतनाम और स्तोत्रों का मन-ही-मन स्तवन करते रहिए। यही सबसे बड़ा सत्कर्म है और इस जीवन में सभी उपलब्धियां तथा अन्त में मोक्ष प्राप्ति का सबसे सुगम मार्ग भी।

❑❑

सूर्यदेव की आरतियां व प्रार्थनाएं

सूर्यदेवजी की मानसिक उपासना करते समय तो दो पंक्तियों के मंत्र का स्तवन करके भावनात्मक रूप में आरती उतार ली जाती है। न तो आरती का गायन किया जाता है और न ही दीप जलाया जाता है। परन्तु भगवान सूर्यदेव के विग्रह अथवा चित्र की पूजा अथवा आराधना के अन्तिम चरण में तो अनिवार्य रूप से आरती उतारी ही जाएगी। इस बारे में हमारे धर्मशास्त्रों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि यदि उपास्यदेव की पूजा-आराधना, देवताओं के पूजन अथवा किसी भी अन्य धार्मिक कृत्य में अज्ञान या प्रमादवश कोई न्यूनता रह जाती है, तो विधि-विधानपूर्वक की गई आरती उस त्रुटि का परिमार्जन कर देती है। परन्तु यदि आरती का त्रुटिपूर्ण गायन किया जाए तो देवता कभी क्षमा नहीं करते और पूजा-आराधना का सम्पूर्ण फल समाप्त हो जाता है। शास्त्रों में लिखा है कि आरती की थाली को उपास्यदेव के चहुं ओर घुमाने और आरती का गायन करने पर जन्म-जन्मान्तर के पाप नष्ट हो जाते हैं। जो व्यक्ति आरती की ज्योति को भक्तिभावपूर्वक देखता, आरती के शब्दों को तन्मयतापूर्वक सुनता और दोनों हाथों से श्रद्धापूर्वक आरती लेता है, वह भी सहज ही मोक्ष का अधिकारी बन जाता है।

सामान्य रूप से घी का दीपक अथवा कपूर जलाकर आरती की जाती है। जहां तक शास्त्रीय विधान का प्रश्न है, आरती की थाली को सबसे पहले चार बार मूर्ति या विग्रह के चरणों के आसपास, दो बार नाभिप्रदेश अर्थात् घुटनों के ऊपर से वक्षस्थल तक और एक बार मुखमण्डल के चहुं ओर घुमाने के बाद सात बार आरती के थाल को सम्पूर्ण विग्रह के चारों ओर घुमाने का विधान है। परन्तु विग्रह अथवा चित्र आकार में छोटा होने पर इस प्रकार थाल घुमाना सम्भव नहीं होता, अतः सम्पूर्ण विग्रह की आरती ही कर ली जाती है। जहां तक इस अध्याय में संकलित प्रार्थनाओं का प्रश्न है, इनमें भगवान सूर्यदेवजी से अज्ञान दूर करने तथा ज्ञान एवं भक्ति देने की प्रार्थना की गई है। अपने प्रभु से यह मांग तो हम दिन में जितनी बार करें उतना ही कम है।

सूर्यदेव की आरती

जय कश्यप नंदन, ॐ जय कश्यप नंदन।
त्रिभुवन-तिमिर-निकंदन, भक्त हृदय चन्दन॥ ॐ जय॥
सप्त अश्व रथ राजित, एक चक्र धारी।
दुखहारी, सुखकारी, मानस मल हारी॥ ॐ जय॥
सुर-मुनि-भूसुर वन्दित, विनव विभवशाली।
अघ-दल-दलन दिवाकर, दिव्य किरण माली॥ ॐ जय॥
सकल सुकर्म प्रसविता, सविता सुख कारी।
विश्व विलोचन मोचन, भव बन्धन भारी॥ ॐ जय॥
कमल समूह विकासक, नाशक त्रय तापा।
सेवत सहज हरत अति, मनसिज संतापा॥ ॐ जय॥
नेत्र व्याधि हर सुरवर, भू पीड़ा हारी।
वृष्टि विमोचन संतत, परहित व्रत धारी॥ ॐ जय॥
सूर्यदेव करुणाकर, अब करुणा कीजै।
हर अज्ञान मोह सब, तत्व ज्ञान दीजै॥ ॐ जय॥

सूर्यदेव की मधुर आरती

ॐ जय सूर्य देवा, स्वामी जय सूर्य देवा।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव, सन्त करें सेवा॥
दु:ख हरता सुख करता, जय आनन्दकारी।
वेद पुराण बखानत, भय पातक हारी॥
स्वर्ण सिंहासन बिस्तर, ज्योति तेरी सारी।
प्रेमभाव से पूजें, जग के नर नारी॥
दीन दयाल दयानिधि, भव बन्धन हारी।
शरणागत प्रतिपालक, भक्तन हितकारी॥
जो कोई आरती तेरी, प्रेम सहित गावे।
धन सम्पति और लक्ष्मी, सहजे में पावे॥
सफल मनोरथ दायक, निर्गुण सुखराशी।
विश्व चराचर पालक, ईश्वर अविनाशी॥
योगीजन हिरदय में, तेरा ध्यान धरें।
सब जग के नर नारी, पूजा-पाठ करें॥

रविदेवजी की आरती

जय जय जय श्रीरविदेव, जय जय जय श्रीरविदेव।
रजनीपति मदहारी शतदल जीवनदाता।
षटपद मन मुदकारी हे दिनमणि ताता।
जग के हे रविदेव, जय जय जय श्री रविदेव।
नभमंडल के वासी, ज्योति प्रकाश देवा।
निज जनहित सुखरासी, हम करें तिहारी सेवा।
करते हैं रविदेव, जय जय जय श्रीरविदेव।
कनक बदन महं सोहत, रुचि प्रभा प्यारी।
निज मंडल से मंडित, अजर अमर छवि धारी।
हे सुरवर श्रीरविदेव, जय जय जय श्रीरविदेव।

आध्यात्मिक वन्दना

अजब हैरान हूं भगवन, तुम्हें क्यों कर रिझाऊं मैं।
कोई वस्तु नहीं ऐसी, जिसे सेवा में लाऊं मैं॥
करूं किस तरह आवाहन, हो तुम मौजूद हर जगह।
निरादर है बुलाने को, अगर घण्टी बजाऊं मैं॥
तुम्हीं हो मूर्तियों में भी, तुम्हीं व्यापक हो फूलों में।
भला भगवान को भगवान पर, क्यों कर चढ़ाऊं मैं॥
लगाना भोग कुछ तुमको, यह अपमान करना है।
खिलाता है जो सब जग को, उसे क्यों कर खिलाऊं मैं॥
तुम्हारी ज्योति से रोशन हैं, पृथ्वी-चांद और तारे।
महा अन्धेर है कैसे, तुम्हें दीपक दिखाऊं मैं॥
कहां खोजूं कहां पाऊं, यही है मेरी परेशानी।
चले आओ मेरे रविदेव, तुम्हारा दीदार पाऊं मैं॥

दर्शन देने हेतु प्रार्थना

कभी भूले से दर्शन आपका, सरकार हो जाता।
मैं चरणों में लिपट जाता, गले का हार हो जाता॥ टेक॥
अगर मेरे हृदय में प्रेम का, संचार हो जाता।
मेरा जीवन सफल होता, मेरा उद्धार हो जाता।
न पूछो मेरी अभिलाषा, मगर इतना समझता हूं।
तुम्हारी एक ठोकर से, भंवर से पार हो जाता॥
नसीबों में लिखा होता, मुकद्दर में बंधा होता।
तो हमको भी कभी तेरा, यूं ही दीदार हो जाता।
तसल्ली मुझको दे जाते, जो इच्छा थी वही करते।
यही मेरे लिए जीवन का, बड़ा आधार हो जाता॥
छुपे हो व्यर्थ नयनों में, उतरकर दिल में आ जाओ।
तुम्हारा पर्दा रह जाता, हमें दीदार हो जाता।
खड़ा है दर पे कब से दीन, याचक हाथ फैलाए।
भक्तों पर सदका कुछ तो, मेरे सरकार हो जाता॥

ज्ञान प्रदान करने हेतु विनती

हे ज्ञान दाता विश्वपति, अज्ञान सब हर लीजिए।
हो नम्रता का भाव दृढ़, जिय मध्य शान्ति दीजिए॥
ना दुख देवैं और को, सबके, हितैषी हम रहें।
भय दूर हो संशय सभी, श्रद्धा निगम आगम लहें॥
संतोष राखें चित्त में, अरु भजें प्रतिदिन नाम को।
जग दुख सबहिं दूर हों, ध्रुव तुल्य दो निज धाम को॥
तुम पतित पावन हो सदा, मुझ अधम को भी तारिए।
मैं दीन होकर शरण ली, प्रभु कृपा दृष्टि धारिए॥
नित दम्भ त्यागें क्रूरता, भय दोष संकट दूर हों।
गुरु सीख को उर धार के, आनन्द से भरपूर हों॥
हे भक्त वत्सल दया कर, सद्भक्ति में दृढ़ प्रीति हो।
सब नीच संगति त्याग कर, सत्संगति शुभ नीति दो॥
हम शांति पावें रैन दिन, संसार से मन मोड़कर।
हैं याचना जन की यही, दो मुक्ति बंधन तोड़कर॥
बहु श्रेष्ठ साधना पुष्ट हो, नित एक आतम ध्यान हम।
अब मिले ब्रह्मानन्द गति, निर्वाण शान्ति पाएं हम॥

भक्तिभाव वर्द्धन हेतु प्रार्थना

हे सृष्टि नायक दयानिधि, यह प्रार्थना है आप से।
सन्मार्ग में आरूढ़ हों, बचते रहें बहु पाप से॥
सात्विक हमारे भाव हों, लवलीनता तुम में सदा।
कर्तव्य पालन धर्म युत, संतुष्ट रहवें सर्वदा॥
उत्साह मन में हो बहुत, शुभ बुद्धि आस्तिक धारकर।
सद्भाव होवे दास के, नित काम क्रोधहिं मारकर॥
हो त्याग मादक वस्तु का, सद्गुणों का नित बल रहे।
लखि एक रूप अनूप विभु, उर प्रेम धारा जल बहे॥
अज्ञान होवे दूर सब, आगम-निगम विश्वास हो।
उपकार में श्रद्धा बढ़े, दुर्भाव त्यागें दास हो॥
करुणानिधि विनती यही, निज कृपा दृष्टि धारिए।
मैं किए अत्याचार बहु, सम गज अजामिल तारिए॥
ममता अहंता नष्ट कर, सब ही दुरासा त्याग दो।
हो नष्ट इच्छा भोग की, निज रूप में अनुराग हो॥
आनन्द पावें हम सभी, विभु आत्मा का ध्यान हो।
लहि पूर्ण ब्रह्मानंद तव जब एक चेतन ज्ञान हो॥

मुक्ति हेतु प्रार्थना

हे सूर्य बली मेरी नाव चली, जरा बल्ली कृपा की लगा देना।
मुझे रोग-शोक ने घेर लिया, मेरे पाप को नाथ मिटा देना॥ टेक॥
मैं दास आपका जन्म से हूं, बालक और शिष्य भी धर्म से हूं।
बेशर्म विमुख निज कर्म से हूं, चित से मेरा दोष भुला देना॥ 1॥
दुर्बल हूं गरीब हूं दीन हूं मैं, निज कर्म-क्रिया गति क्षीण हूं मैं।
मेरे प्रभु तेरे अधीन हूं मैं, मेरी बिगड़ी हुई को बना देना॥ 2॥
बल देके मुझे निर्भय कर दो, यश शक्ति मेरी अक्षय कर दो।
मेरे जीवन को सुखमय कर दो, अपनी भक्ति का जाम पिला देना॥ 3॥
करुणानिधि आपका नाम भी है, शरणागत आपका दास भी है।
सबसे बढ़कर यह काम भी है, भवसिन्धु से मुक्ति दिला देना॥ 4॥

❑❑

आदित्य हृदय स्तोत्र

दिवाकर और भास्कर के समान ही आदित्य भी भगवान सूर्यदेव का एक नाम है। जिस प्रकार भगवान रविदेवजी की शक्तियां अनन्त हैं, ठीक उसी प्रकार सभी स्तोत्रों से अधिक है इस स्तोत्र की महिमा। त्रेता युग में रावण से युद्ध करते-करते जब भगवान राम कुछ थक से गए थे, तब महर्षि अगस्त्य ने स्वयं युद्धभूमि में आकर इस आदित्य हृदय स्तोत्र का पाठ करने की सलाह भगवान राम को दी थी। इस आदित्य हृदय स्तोत्र के पाठ से प्रसन्न होकर भगवान भास्कर ने श्रीराम को अपना तेज प्रदान किया और भगवान श्रीराम राक्षसराज रावण को परास्त करने में सफल हुए थे। यह शक्तिशाली स्तोत्र जनसामान्य के लिए नहीं था, अत: बाद में लुप्त हो गया। द्वापर युग में भगवान श्रीकृष्ण ने इसको अर्जुन के समक्ष प्रकट किया था और कलियुग में शतानीक की प्रार्थना पर महर्षि सुमन्तुरु ने इस आदित्य हृदय स्तोत्र को लोकहित में जनसामान्य के लिए प्रकट किया। भविष्योत्तर पुराण में संकलित यह मूल स्तोत्र इसके प्रत्येक श्लोक के हिन्दी अनुवाद सहित नीचे दिया जा रहा है। आप सूर्यदेव की पूजा-आराधना करें अथवा मानसिक उपासना, उनके किसी मंत्र का जप करें अथवा यंत्र-मंत्र की कोई साधना, इस आदित्य हृदय स्तोत्र का नियमित पाठ अवश्य करें। शास्त्रों का कथन है कि सूर्यदेव की आराधना-उपासना के अंतिम चरण में यदि इस आदित्य हृदय स्तोत्र का पाठ न किया जाए तब उस साधना के पुण्यफलों में काफी न्यूनता आ जाती है। इसके विपरीत केवल इस स्तोत्र का नियमित पाठ करने वाले भक्त को भी भगवान भास्कर सहज ही अपने सबसे प्रिय पुत्रों में से एक मान लेते हैं।

आचम्य देशकालौ संकीर्त्य ममारोग्यावाप्तये।
श्रीसवितृसूर्यनारायणप्रीत्यर्थं द्वादशनमस्काराख्यं कर्म करिष्ये॥
आदित्यहृदयं शम्भोऽहृदयं परिकीर्तितम्।
सर्वबोधकरीं व्याख्यां तत्र कुर्वे सुखावहाम्॥ 1॥

आचमन करके देश और काल का उच्चारण करके संकल्प करें अर्थात् उपासना एवं साधनाओं का पूर्वाह्न नामक अध्याय में वर्णित संकल्प वाक्य तक के

सभी कार्य विधि-विधानपूर्वक पूर्ण करें। संकल्प में ऐसा कहें—आज अमुक देश में, अमुक मास में, अमुक पक्ष की अमुक तिथि में, अमुक दिन में रोगों के विनाश के लिए भगवान सूर्यनारायण को प्रसन्न करने के लिए द्वादश नमस्कारात्मक कर्म करूंगा।

सूर्यदेव का ध्यान

ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः।
केयूरवान्मकरकुण्डलवान् किरीटी हारी हिरणमयवपुर्धृतशङ्खचक्रः॥ 1॥
एकचक्ररथो यस्य दिव्यः कनकभूषितः।
स मे भवतु सुप्रीतः पद्महस्तो दिवाकरः॥ 2॥

मित्राय नमः॥ रवये नमः॥ सूर्याय नमः॥ भानवे नमः॥ खगाय नमः॥ पूष्णे नमः॥ हिरण्यगर्भाय नमः॥ मरीचये नमः॥ सवित्रे नमः॥ अर्काय नमः॥ भास्कराय नमः॥ 3॥

सूर्यदेव का ध्यान करते हुए आप अपने मन-मन्दिर में इस प्रकार उनकी झांकी सजाएं—

वे सूर्यमंडल के मध्य कमलासन पर बैठे हैं। उन्होंने भुजाओं में बाजूबन्द, कानों में मछली की आकृति के कुण्डल और सिर पर मुकुट धारण किया हुआ है। उनके कण्ठ पर हार सुशोभित है। उनके शरीर की चमक सुवर्ण जैसी है। हाथों में शंख और चक्र हैं॥ 1॥

जिनके सोने से सजे हुए रथ का एक ही पहिया है और जिनके हाथ में कमल है वे दिवाकर भगवान मुझ पर प्रसन्न हों॥ 2॥

1. मित्र को नमस्कार, 2. रवि को नमस्कार, 3. सूर्य को नमस्कार, 4. भानु को नमस्कार, 5. खग (आकाश में गमन करने वाला) को नमस्कार, 6. पूषा (पोषण करने वाला) को नमस्कार, 7. हिरण्य गर्भ (ब्रह्म रूप सूर्य) को नमस्कार, 8. मरीचि (किरणों वाला) को नमस्कार, 9. अदिति (अदिति के पुत्र) को नमस्कार, 10. सविता (पैदा करने वाला) को नमस्कार, 11. अर्क को नमस्कार, 12. भास्कर (प्रकाश करने वाला) को नमस्कार॥ 3॥

नमः सवित्रे जगदेकचक्षुषे जगत्प्रसूतिस्थितिनाशहेतवे।
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे विरिञ्चिनारायणशंकरात्मने॥ 4॥
नमोऽस्तु सूर्याय सहस्त्ररश्मये सहस्त्रशाखान्वितसंभवात्मने।
सहस्त्रयोगोद्भवभावभागिने सहस्त्रसंख्यायुगधारिणे नमः॥ 5॥
आदित्यस्य नमस्कारं ये कुर्वन्ति दिने दिने।
जन्मान्तरसहस्त्रेषु दारिद्र्यं नोपजायते॥ 6॥

उन सवितादेव को नमस्कार है जो पूरे संसार के अकेले नेत्र हैं, जो संसार को जन्म देने वाले, संसार की रक्षा करने वाले और संसार का नाश करने वाले हैं। वे सूर्यदेव ब्रह्मा-विष्णु और शंकर के रूप हैं। तीनों गुणों—सत, रज तथा तम को धारण करने वाले हैं ॥ 4 ॥

ब्रह्मा, विष्णु और शंकर के गुणों को धारण करते हैं अर्थात् जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और विनाश में रत हैं उन सूर्य भगवान को नमस्कार है जो सहस्त्र किरण वाले हैं, सहस्त्र शाखाओं से युक्त वेद का उत्पत्ति स्थान हैं, सहस्त्र योगों से उत्पन्न भोगों के भागीदार हैं और हजारों युगों को धारण करते हैं अर्थात् जिनकी आयु हजारों युगों की है ॥ 5 ॥ जो आदित्य को नित्य नमस्कार करते हैं उनके यहां हजारों जन्म-जन्मान्तर तक दरिद्रता नहीं होती है।

शतानीक उवाच—

कथमादित्यमुद्यन्तमुपतिष्ठेद्द्विजोत्तम।
इतन्मे ब्रूहि विप्रेन्द्र प्रपद्ये शरणं तव ॥ 1 ॥

शतानीक ने कहा—हे द्विजोत्तम मैं आपकी शरण में आया हूं। कृपया बताइए कि उदित होते हुए सूर्य की शरण में किस तरह जाया जाए।

सुमन्तुरुवाच—

इदमेव पुरा पृष्टः शङ्खचक्रगदाधरः।
प्रणम्य शिरसा देवमर्जुनेन महात्मनः ॥ 2 ॥

सुमन्तु ने कहा—पुराकाल में यही बात शंख, चक्र और गदा धारण करने वाले श्रीकृष्ण से उनको सिर झुकाकर अर्जुन ने प्रणाम करके पूछी थी।

कुरुक्षेत्रे महाराज निवृत्ते भरते रणे।
कृष्णनाथं समासाद्य प्रार्थयित्वाब्रवीदिदम् ॥ 3 ॥

हे महाराज! कुरुक्षेत्र में भारत-युद्ध की समाप्ति के पश्चात् प्रार्थना करते हुए अर्जुन ने श्री कृष्ण से कहा।

अर्जुन उवाच—

ज्ञानं च धर्मशास्त्राणां गुह्यादुह्यतरं तथा।
मया कृष्ण परिज्ञातं वाङ्मयं सचराचरम् ॥ 4 ॥

अर्जुन ने कहा—हे कृष्ण! मैंने गुप्त से भी गुप्त धर्मशास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर लिया। मैंने सभी स्थावर और जंगम (जड़ और चेतन) का सारा साहित्य समझ लिया है।

सूर्यस्तुतिमयं न्यासं वक्तुमर्हसि माधव।
भक्त्या पृच्छामि देवेश कथयस्व प्रसादतः ॥ 5 ॥

मैं सूर्य की भक्ति के साथ आपसे पूछता हूं—कृपया प्रसन्नता के साथ सूर्य स्तुति से युक्त न्यास को कहिए।

सूर्यभक्तिं करिष्यामि कथं सूर्यं प्रपूजयेत।
तदहं श्रोतुमिच्छामि त्वत्प्रसादेन यादव॥ 6॥

मैं सूर्य की भक्ति करूंगा। अत: हे यादव आपकी कृपा हो जाए तो मैं यह जानना चाहता हूं कि सूर्य की पूजा कैसे करनी चाहिए?

श्री भगवानुवाच

रुद्रादिदैवतैः सर्वैः पृष्टेन कथितं मया।
वक्ष्येऽहं सूर्यविन्यासं शृणु माण्डव यत्नतः॥ 7॥

श्रीभगवान ने कहा—रुद्र आदि सभी देवताओं के पूछने पर मैंने सूर्य विन्यास को कहा था। हे अर्जुन! वही तुम सावधान होकर सुनो, मैं कहता हूं।

अस्माकं यत्त्वया पृष्टमेकचित्तो भवार्जुन।
तदहं संप्रवक्ष्यामि आदिमध्यावसानकम्॥ 8॥

हे अर्जुन! जो तुमने पूछा है उसे आदि, मध्य और अन्त सहित कहूंगा। तुम एकाग्रचित्त होकर सुनो।

अर्जुन उवाच

नारायण सुरश्रेष्ठ पृच्छामि त्वां महायशाः।
कथमादित्यमुद्यन्तमुपतिष्ठेन्सनातनम् ॥ 9॥

अर्जुन ने कहा—हे महाकीर्ति से युक्त, देवताओं में श्रेष्ठ नारायण! मैं आपसे पूछता हूं कि उदित होते हुए सनातन सूर्य का साक्षात्कार कैसे किया जाए?

श्री भगवानुवाच—

साधु पार्थ महाबाहो बुद्धिमानसि पाण्डव।
यन्मां पृच्छस्युपस्थानं तत्पवित्रं विभावसोः॥ 10॥

श्री भगवान ने कहा—हे महाबाहु अर्जुन! तुम धन्य हो, तुम बुद्धिमान हो जो सूर्य के पवित्र साक्षात्कार के सम्बन्ध में पूछ रहे हो।

सर्वमाङ्गलमाङ्गल्यं सर्वपापप्रणाशनम्।
सर्वरोगप्रशमनमायुर्वर्धनमुत्तमम् ॥ 11॥

सूर्य का यह उपस्थान सभी मांगलिक विषयों को मांगलिक बनाने वाला है, सभी-पापों का विनाश करने वाला है, सभी रोगों को शान्त करता है तथा आयु को बढ़ाता है। यह बहुत उत्तम है।

अमित्रदमनं पार्थ सङ्ग्रामे जयवर्द्धनम्।
वर्द्धनं धनपुत्राणामादित्यहृदयं शृणु॥ 12॥

हे अर्जुन! अब तुम आदित्य हृदय को सुनो जो शत्रुओं का दमन करता है, युद्ध में विजय को बढ़ाता है, धन और पुत्रों की वृद्धि करता है।

यच्छ्रुत्वा सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः।
त्रिषु लोकेषु विख्यातं निःश्रेयसकरं परम्॥ 13॥

यह स्तोत्र कल्याणकारी है और तीनों लोकों में प्रसिद्ध है। इसे सुनकर श्रोता सभी पापों से मुक्त हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं है।

देवदेवं नमस्कृत्य प्रातरुत्थाय चार्जुन।
विघ्नान्यनेकरूपाणि नश्यन्ति स्मरणादपि॥ 14॥

हे अर्जुन! प्रातः उठकर देवदेव को नमस्कार करने और स्मरण करने से अनेक प्रकार के विघ्न नष्ट हो जाते हैं।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सूर्यमावाहयेत्सदा।
आदित्यहृदयं नित्यं जाप्यं तच्छृणु पाण्डव॥ 15॥

इसलिए सदा प्रयत्नपूर्वक सूर्य का आवाहन करना चाहिए और सुनो हे पाण्डव! नित्य आदित्य हृदय का जाप करना चाहिए।

यज्जपान्मुच्यते जन्तुर्दारिद्याद्दाशु दुस्तरात्।
लभते च महासिद्धिं कुष्ठव्याधिविनाशिनीम्॥ 16॥

इस आदित्य हृदय के जप से मनुष्य उस दरिद्रता से शीघ्र ही मुक्त हो जाता है जिसका पार पाना कठिन है और कुष्ठ रोग का नाश करने वाली श्रेष्ठ सिद्धि को प्राप्त कर लेता है।

अस्मिन्मन्त्रे ऋषिश्च्छन्दो देवता शक्तिरेव च।
सर्वमेव महाबाहो कथयामि तवाग्रतः॥ 17॥

हे महाबाहु! मैं तुम्हारे आगे यह सब बता रहा हूं कि इस मंत्र का ऋषि कौन है, इसका देवता कौन है और इसकी शक्ति कौन-सी है।

मया ते गोपितं न्यासं सर्वशास्त्रप्रबोधितम्।
अथ ते कथयिष्यामि ह्युत्तमं मन्त्रमेव च॥ 18॥

मैं तुम्हें सब शास्त्रों में जो गुप्त न्यास है, वह बता रहा हूं और मैं उत्तम मंत्र को भी तुमसे कहूंगा।

श्रीभगवानुवाच–

ॐ अस्य श्रीआदित्यहृदयस्तोत्रमन्त्रस्य॥ श्रीकृष्ण ऋषिः॥ श्रीसूर्यात्मा त्रिभुवनेश्वरो देवता॥ अनुष्टुप् छन्दः॥ हरितहयरथं दिवाकरं घृणिरिति बीजं॥ ॐ नमो भगवते जितवैश्वानरजातवेदसे इति शक्तिः॥ ॐ नमो भगवते आदित्याय नमः इति कीलकं॥ ॐ अग्निगर्भदेवता इत्यस्त्रम्॥ ॐ नमो भगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः॥ इति मंत्रः॥ श्रीसूर्यनारायणप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः॥

इस आदित्यहृदय स्तोत्र के ऋषि श्रीकृष्ण हैं। सूर्य जिनकी आत्मा है। ऐसे तीन लोक के स्वामी देवता हैं। इसका छन्द अनुष्टुप है। इसका बीज *'हरित हय रथं दिवाकरं घृणिः' 'ॐ नमो भगवते आदित्याय नमः'* यह इसका कीलक है। *'ॐ अग्निगर्भ देवता'* इसका अस्त्र है। मंत्र है—*'ॐ नमो भगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः'*। सूर्य नारायण की प्रसन्नता के लिए जप का यह विनियोग है।

अथ न्यास

ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः॥ ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः॥ ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः॥ ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः॥ ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः॥ ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः॥ ॐ ह्रां हृदयाय नमः॥ ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा॥ ॐ ह्रूं शिखायै वषट्॥ ॐ ह्रैं कवचाय हुम्॥ ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्॥ ॐ ह्रः अस्त्राय फट्॥ ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः॥ इति दिग्बन्धः॥

न्यास

ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः *(अंगूठों से)।*
ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः *(तर्जनी उंगलियों से)।*
ॐ ह्रूं मध्यमाभ्या नमः *(मध्यमा उंगलियों से)।*
ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः *(अनामिका उंगलियों से)।*
ॐ ह्रैं कनिष्ठिकाभ्यां नमः *(छोटी उंगलियों से)।*
ॐ ह्रः करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः *(हथेली और उलटे हाथों से)।*
ॐ ह्रां हृदयाय नमः *(हृदय से)।*
ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा *(मस्तक से)।*
ॐ ह्रूं शिखायै वषट *(शिखा से)।*
ॐ ह्रैं कवचाय हुम् *(दोनों कवचों से)।*
ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् *(नेत्र और ललाट को तीन उंगली लगाकर)।*
ॐ ह्रः अस्त्राय फट् *(हथेलियों को दो बार मिलाकर)।*
ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ऐसे दिशाओं को बांधना चाहिए।

अथ ध्यानम्—

भास्वद्रत्नाढ्यमौलिः स्फुरदधररुचा रञ्जितश्चारुकेशो,
भास्वान्यो दिव्यतेजाः करकमलयुतः स्वर्णवर्णः प्रभाभिः॥

विश्वाकाशावकाशग्रहपतिशिखरे भाति यश्चोदयाद्रौ,
सर्वानन्दप्रदाता हरिहरनमितः पातु मां विश्वचक्षुः॥ 1॥

हे संसार के नेत्र रूपी सूर्य! मेरी रक्षा कीजिए। आपको मुकुट में चमकते हुए रत्न जड़े हुए हैं। आपके स्फुरण करते हुए होंठों के रंग से आपके केश रंगे हुए हैं।

आप प्रकाश युक्त हैं, दिव्य तेज से युक्त हैं। आपने हाथ में कमल लिया हुआ है। आपकी कीर्ति (चमक) स्वर्ण के समान है। आकाश के शून्य स्थान को आपने ग्रहण किया हुआ है। आप उदय पर्वत के शिखर पर सुशोभित हैं। सबको आनन्द देने वाले ब्रह्मा, विष्णु और शिव आपको प्रणाम करते हैं॥

पूर्वमष्टदलं पद्मं प्रणवादिप्रतिष्ठितम्।
माया बीजं दलाष्टाग्रे यन्त्रमुद्धारयेदिति॥ 2॥

पहले आठ पत्तों वाला कमल बनाएं। उस पर प्रणव (ॐ) आदि प्रतिष्ठित करें। पत्तों के अग्र भाग में माया बीज का उल्लेख करें। इस प्रकार यंत्र बनाएं।

आदित्यं भास्करं भानुं रविं सूर्यं दिवाकरम्।
मार्तण्डं तपनं चेति दलेष्वष्टसु योजयेत्॥ 3॥

आठों पत्तों पर आदित्य, भास्कर, भानु, रवि, सूर्य, दिवाकर, मार्तण्ड और तपन नामों को लिखें।

दीप्ता सूक्ष्मा जया भद्रा विभूतिर्विमला तथा।
अमोघा विद्युता चेति मध्ये श्रीः सर्वतोमुखी॥ 4॥

उन आठों पत्तों पर क्रमशः दीप्ता, सूक्ष्मा, जया, भद्रा, विभूति, विमला, अमोघा और विद्युता—ये नाम लिखें। कमल के बीच में सर्वतोमुखी लिखे।

सर्वज्ञं सर्वगं चैव सर्वकारणदेवताम्।
सर्वेशं सर्वहृदयं नमामि सर्वसाक्षिणम्॥ 5॥

सब कुछ जानने वाले, सब जगह पहुंचने वाले, देवताओं के कारणभूत, सबके स्वामी, अन्तर्यामी और सबके साक्षी को मैं प्रणाम करता हूं।

सर्वात्मा सर्वकर्त्ता च सृष्टिजीवनपालकः।
हितः स्वर्गापवर्गश्च भास्करेश नमोऽस्तु ते॥ 6॥

हे स्वामी भास्कर! आप सबकी आत्मा हैं, सबके विधाता हैं, आप सबके जीवन हैं, सबका पालन करने वाले हैं, स्वर्ग और मोक्ष के कारण हैं। आपको नमस्कार है।

नमो नमस्तेऽस्तु सदा विभावसो सर्वात्मने सप्तहयाय भानवे।
अनन्तशक्तिर्मणिभूषणेन ददस्व भुक्तिं मम मुक्तिमव्ययाम्॥ 7॥

हे सूर्य देवता! आप सबकी आत्मा हैं। आप सात घोड़ों वाले हैं, आप दीप्ति से प्रशंसित हैं, आपकी शक्ति का अन्त नहीं है, आप मणियों से भूषित हैं। मुझे भुक्ति और अविनाशी मुक्ति दीजिए। आपको सदा बारम्बार नमस्कार है।

अर्कं तु मूर्ध्नि विन्यस्य ललाटे तु रविं न्यसेत्।
विन्यसेन्नेत्रयोः सूर्यं कर्णयोश्च दिवाकरम्॥ 8॥

अर्क को मस्तक पर, रवि को ललाट पर, सूर्य को दोनों नेत्रों पर, दिवाकर को दोनों कानों में न्यास करें।

नासिकायां न्यसेद्भानुं मुखे वै भास्करं न्यसेत्।
पर्जन्यमोष्ठयोश्चैव तीक्ष्णं जिह्वान्तरे न्यसेत्॥ 9॥

भानु को नासिका में, भास्कर को मुख में, पर्जन्य को दोनों होंठों में, तीक्ष्ण को जिह्वा के मध्य न्यास करें।

सुवर्णरेतसं कण्ठे स्कन्धयोस्तिग्मतेजसम्।
बाह्वोस्तु पूषणं चैव मित्रं वै पृष्ठतो न्यसेत्॥ 10॥

सुवर्णरेता को कण्ठ में, तिग्मतेज को कन्धों पर, पूषा को बांहों पर और मित्र को पीठ पर न्यास करें।

वरुणं दक्षिणे हस्ते त्वष्टारं वामतः करे।
हस्तावुष्णकरः पातु हृदयं पातु भानुमान्॥ 11॥

वरुण को दाएं हाथ में और मित्र को बाएं हाथ में न्यास करें। उष्णकर दोनों हाथों और भानुमान हृदय पर न्यास करें।

उदरे तु यमं विन्द्यादादित्यं नाभिमण्डले।
कट्यां तु विन्य सेद्धंसं रुद्रमूर्वोस्तु विन्यसेत्॥ 12॥

यम को उदर में, आदित्य को नाभि में न्यास करे। हंस को कटि में, रुद्र को दोनों जंघाओं में न्यास करें।

जान्वोस्तु गोपतिं न्यस्य सवितारं तु जङ्घयोः।
पादयोश्च विवस्वन्तं गुल्फयोश्च दिवाकरम्॥ 13॥

गोपति को घुटनों में, सविता को पिंडलियों में, विवस्वान् को पांवों पर और दिवाकर को टखनों पर न्यास करें।

बाह्यतस्तु तमोध्वंसं भगमभ्यन्तरे न्यसेत्।
सर्वाङ्गेषु सहस्रांशुं दिग्विदिक्षु भगं न्यसेत्॥ 14॥

इति दिग्बन्ध॥

तमोध्वंस को बाहर, भग को भीतर, सहस्रांशु को सब अंगों में, भग को दिशा और कोणों में न्यास करें।

एष आदित्यविन्यासो देवानामपि दुर्लभः।
इमं भक्त्या न्यसेत्पार्थ सयाति परमां गतिम्॥ 15॥

आदित्य का यह न्यास देवता भी मुश्किल से प्राप्त कर पाते हैं। हे अर्जुन! जो कोई भक्तिपूर्वक इन न्यासों को करता है वह उत्तम गति पाता है।

कामक्रोधकृतात् पापान्मुच्यते नात्र संशयः।
सर्पादपि भयं नैव सङ्ग्रामेषु पथिष्वपि॥ 16॥

काम और क्रोध से किए गए पापों से मुक्त कर देता है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। इससे न तो सर्प का भय रहता है, न मार्ग का, न संग्राम का।

रिपुसंघट्टकालेषु तथा चोरसमागमे।
त्रिसंध्यं जपतो न्यासं महापातकनाशनम्॥ 17॥

शत्रु से युद्ध करने पर और चोर से सामना होने पर भी भय नहीं होता। तीनों कालों—प्रातः, मध्याह्न एवं सायं—की सन्ध्या के समय इस न्यास को जपने पर महापातक से मुक्ति मिल जाती है।

विस्फोटकालमुत्पन्नं तीव्रज्वरसमुद्भवम्।
शिरोरोगं नेत्ररोगं सर्वव्याधिविनाशनम्॥ 18॥

चेचक निकलने पर, तीव्र ज्वर होने पर, सिर में कोई रोग होने पर और नेत्र सम्बन्धी रोग में यह कष्ट से छुटकारा दिलाता है।

कुष्ठव्याधिस्तथा दद्रुरोगाश्च विविधाश्च ये।
जप्यमाने विनश्यन्ति शृणु भक्त्या तदर्जुन॥ 19॥

हे अर्जुन, तुम इसे भक्ति के साथ सुनो! इसका जप करने पर कोढ़, दाद तथा अन्य बहुत से रोग नष्ट हो जाते हैं।

आदित्यो मंत्रसंयुक्त आदित्यो भुवनेश्वरः।
आदित्यान्नापरो देवो ह्यादित्यः परमेश्वरः॥ 20॥

आदित्य मंत्रों से संयुक्त है और आदित्य लोकों के ईश्वर हैं। आदित्य से श्रेष्ठ कोई देवता नहीं है, आदित्य परमेश्वर हैं।

आदित्यमार्चयद्ब्रह्मा शिव आदित्यमार्चयत्।
यदादित्यमयं तेजो मम तेजस्तदर्जुन॥ 21॥

ब्रह्मा ने आदित्य की पूजा की और शिवजी ने भी आदित्य की पूजा की। हे अर्जुन! आदित्य में जो तेज है वह मेरा ही तेज है।

आदित्यं मंत्रसंयुक्तमादित्यं भुवनेश्वरम्।
आदित्यं ये प्रपश्यन्ति मां पश्यन्ति न संशयः॥ 22॥

आदित्य मंत्रों से अभिषिक्त है और लोकों का स्वामी है। जो लोग सूर्य का दर्शन करते हैं वे मेरा ही दर्शन करते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

त्रिसंध्यमर्चयेत्सूर्यं स्मरेद्भक्त्या तु यो नरः।
न स पश्यति दारिद्र्यं जन्मजन्मनि चार्जुन॥ 23॥

हे अर्जुन! जो मनुष्य तीनों संध्याओं के समय सूर्य की पूजा करता है या भक्ति के साथ स्मरण करता है, जन्म-जन्मांतर में भी (कई जन्म लेने पर भी) दरिद्रता को नहीं देखता।

एतत्ते कथितं पार्थ आदित्यहृदयं मया।
शृण्वन्मुक्त्वा च पापेभ्यः सूर्यलोके महीयते॥ 24॥

हे पार्थ! मैंने यह आदित्य हृदय तुझे बताया। इसे सुनने से मनुष्य पापों से मुक्त होकर सूर्य लोक में महान पद पाता है।

ॐ नमो भगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः।
आदित्यः सविता सूर्यः खगः पूषा गभस्तिमान्॥ 25॥

हे भगवान आदित्य आपको बारम्बार प्रणाम है। आप अदिति के पुत्र, जन्मदाता सूर्य, आकाश में गमन करने वाले, पोषण करने वाले, किरणों वाले हैं।

सुवर्णः स्फटिको भानुः स्फुरितो विश्वतापनः।
रविर्विश्वो महातेजाः सुवर्णः सुप्रबोधकः॥ 26॥

आप सुवर्ण के समान, स्फटिक मणि के समान, प्रकाश करने वाले, विश्व को तपाने वाले, रवि, विश्वरूप, महान तेज वाले, सुन्दर रंग वाले और संसार को जानने वाले हैं।

हिरण्यगर्भस्त्रिशिरास्तपनो भास्करो रविः।
मार्तण्डो गोपतिः श्रीमान्कृतज्ञश्च प्रतापवान्॥ 27॥

आप सोने को गर्भ में धारण करने वाले, तीन सिरों वाले, तपाने वाले, प्रश्न करने वाले, रवि, मार्तण्ड, किरणों वाले, शोभाशाली कृतज्ञ और प्रतापशाली हैं।

तमिस्त्रहा भगो हंसो नासत्यश्च तमोनुदः।
शुद्धो विरोचनः केशीसहस्त्रांशुर्महाप्रभुः॥ 28॥

आप अन्धकार को नष्ट करने वाले हैं, सामर्थ्यशाली हैं, हंस के समान स्वच्छ, सत्य स्वरूप, अंधेरे को भगाने वाले, शुद्ध, सुन्दर, सिंह के समान और हजार किरणों वाले हैं।

विवस्वान्पूषणो मृत्युर्मिहिरोजामदग्यजित्।
धर्मरश्मिः पतङ्गश्च शरण्यो मित्रहा तपः॥ 29॥

आप विश्व पर छा जाने वाले, पोषण करने वाले, मृत्युरूप, अनुभवी, परशुराम को जीतने वाले, राम के समान हैं। आपकी किरणें गरम हैं। आप अस्ताचल गामी हैं, शरणागत के रक्षक हैं, जल को हरने वाले हैं और तप रूप हैं।

दुर्विज्ञेयगतिः शूरस्तेजोराशिर्महायशाः।
शंभुश्चित्राङ्गदः सौम्यो हव्यकव्यप्रदायकः॥ 30॥

आपकी गति को जानना कड़ा कठिन है। आप शूरवीर हैं। आप तेज के समूह हैं। आज यशस्वी हैं, कल्याणकारी हैं, विचित्र अनेक प्रकार के बाजूबन्द धारण करने वाले, सुन्दर और हव्य एवं कव्य को यथास्थान (जिसको देना है) देने वाले हैं।

अंशुमानुत्तमो देवऋग्यजुःसाम एव च।
हरिदश्वस्तमोदारः सप्तसप्तिर्मरीचिमान्॥ 31॥

आप किरणें धारण करते हैं, श्रेष्ठ देवता हैं। ऋक्, यजु और सामवेद रूप हैं, हरे घोड़ों वाले, अंधकार को फाड़ने वाले, सात घोड़ों वाले, किरणों वाले हैं।

अग्निगर्भोऽदितेः पुत्रः शंभुस्तिमिरनाशनः।
पूषा विश्वंभरो मित्रः सुवर्णः सुप्रतापवान्॥ 32॥

आप गर्भ में अग्नि को धारण करते हैं। अदिति के पुत्र कल्याण रूप, अंधकार का नाश करने वाले, पोषक, विश्व को भोजन देने वाले, मित्र, अच्छे रंग वाले और उत्कृष्ट प्रतापशाली हैं।

आतपी मण्डली भास्वांस्तपनः सर्वतापनः।
कृतविश्वो महातेजाः सर्वरत्नमयोद्भवः॥ 33॥

आप आतप से युक्त हैं, मण्डल वाले हैं, दीप्तिमान हैं, सबको तपाने वाले हैं, विश्वविधाता हैं, रत्नमय सभी वस्तुओं के जन्म स्थल हैं।

अक्षरश्च क्षरश्चैव प्रभाकरविभाकरौ।
चन्द्रश्चन्द्राङ्गदः सौम्योहव्यकव्यप्रदायकः॥ 34॥

आप क्षर, अक्षर, प्रकाश करने वाले, चमकीले, चन्द्र, चन्द्रमय अंगद (बाजूबन्द), सौम्य और हव्य (देवयज्ञ) और कव्य (पितृयज्ञ) की सामग्री को इष्ट देव तक पहुंचाने वाले हैं।

अङ्गारकोऽङ्गदोऽगस्ती रक्ताङ्गश्चाङ्गवर्द्धनः।
बुद्धो बुद्धासनो बुद्धिर्बुद्धात्मा बृहद्धात्मा बुद्धिवर्द्धनः॥ 35॥

आप अग्निमय हैं, बाहुभूषण से युक्त है, अगस्ति नाम नक्षत्र हैं। आपका अंग रक्त (लाल) है, अंग को बढ़ाने वाले, जागरूक, श्रेष्ठ ज्ञानवान, बुद्धिरूप, प्रबुद्ध और बुद्धि को बढ़ाने वाले हैं।

बृहद्भानुर्बृहद्भासो बृहद्धात्मा बृहस्पतिः।
शुक्लस्त्वं शुक्लरेतास्त्वं शुक्लाङ्गशुक्लभूषणः॥ 36॥

आप विशाल किरणों वाले, महाकान्ति वाले, महातेजस्वी बृहस्पति रूप आप स्वच्छ हैं, स्वच्छ किरणों वाले हैं, आपका अंग स्वच्छ है और आपके आभूषण भी स्वच्छ हैं।

शनिमान् शनिरूपस्त्वं शनैर्गच्छसि सर्वदा।
अनादिरादिरादित्यस्तेजोराशिर्महातपाः॥ 37॥

आप में शनि व्याप्त है, आप शनि रूप हैं, सदा धीरे चलते हैं। आपका कहीं आदि नहीं है, आप आदित्य रूप हैं, तेज समूह और महान तपस्वी हैं।

अनादिरादिरूपस्त्वमादित्यो दिक्पतिर्यमः।
भानुमान्भानुरूपस्त्वंस्व र्भानुभानुदीप्तिमान्॥ 38॥

आप अनादि रूप भी हैं और आदि रूप भी। आप अदिति के पुत्र हैं, दिशाओं के स्वामी हैं, सब पर नियन्त्रण रखने वाले, प्रकाश एवं दीप्ति रूप हैं।

धूमकेतुर्महाकेतुः सर्वकेतुरनुत्तमः।
तिमिरावरणः शंभुः स्त्रष्टा मार्तण्ड एव च॥ 39॥

आप अग्निरूप हैं, शिवरूप कल्याणकर्ता हैं, सर्वकेतु हैं, सर्वश्रेष्ठ हैं, अन्धकार को ढंकने वाले हैं, आनन्ददायक हैं, सृष्टिकर्ता और मार्तण्ड हैं।

नमः पूर्वाय गिरये पश्चिमाय नमो नमः।
नमोत्तराय गिरये दक्षिणाय नमो नमः॥ 40॥

पूर्व पर्वत को नमस्कार, पश्चिम पर्वत को नमस्कार उत्तर पर्वत को नमस्कार और दक्षिण पर्वत को नमस्कार।

नमो नमः सहस्त्रांशो ह्यादित्याय नमोः नमः।
नमः पद्मप्रबोधाय नमस्ते द्वादशात्मने॥ 41॥

हे सहस्त्र किरणों वाले सूर्यदेव! आपको नमस्कार है। अदिति के पुत्र रूप में आपको प्रणाम, कमलों को खिलाने को प्रणाम, आपके द्वादश रूपों को नमस्कार है।

नमो विश्वप्रबोधाय नमो भ्राजिष्णुजिष्णवे।
ज्योतिषे च नमस्तुभ्यं ज्ञानाकार्य नमो नमः॥ 42॥

विश्व को जगाने वाले को नमन, प्रकाशमान को नमन, जय की इच्छा रखने वाले सूर्यदेव को नमन, तेज स्वरूप और ज्ञान रूप सूर्य को नमन।

प्रदीप्राय प्रगल्भाय युगान्ताय नमो नमः।
नमस्ते होतृपतये पृथिवीपतये नमः॥ 43॥

प्रकाशमान, उत्साही, युगान्तकारी के लिए नमस्कार। होताओं के स्वामी और पृथ्वी पति सूर्य को नमस्कार।

नमोङ्कारवषट्कार सर्वयज्ञ नमोऽस्तु ते।
ऋग्वेदादियजुर्वेदसामवेद नमोस्तु ते॥ 44॥

हे ॐकार रूप, स्वाहारूप, सर्वयज्ञरूप सूर्यदेव हम आपको प्रणाम करते हैं। ऋग्वेद और सामवेद रूप सूर्यदेव आपको प्रणाम।

नमो हाटकवर्णाय भास्कराय नमो नमः।
जयाय जयभद्राय हरिदश्वाय ते नमः॥ 45॥

सुवर्ण के समान रंग वाले, प्रकाश करने वाले आपको बारम्बार प्रणाम। जयशील, जयभद्र और हरे घोड़ों वाले आपको नमस्कार है।

दिव्याय दिव्यरूपाय ग्रहाणां पतये नमः।
नमस्ते शुचये नित्यं नमः कुरुकुलात्मने॥ 46॥

चमक वाले दिव्य रूप धारी, ग्रहों के स्वामी आपको नमस्कार है। पवित्र और

अविनाशी आपको नमस्कार है। यज्ञकर्ता आपकी उपासना करते हैं, आपको नमस्कार है।

नमस्त्रैलोक्यनाथय भूतानां पतये नमः।
नमः केवल्यनाथाय नमस्ते दिव्यचक्षुषे॥ 47॥

तीनों लोकों के स्वामी आपको नमस्कार है। सभी प्राणियों के स्वामी आपको नमस्कार है। दिव्य नेत्रों वाले मोक्ष के स्वामी आपको नमस्कार है।

त्वं ज्योतिस्त्वं द्युतिर्ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं प्रजापतिः।
त्वमेव रुद्रो रुद्रात्मावायुरग्निस्त्वमेव च॥ 48॥

हे सूर्यदेव! आप प्रकाश रूप हैं, चमक युक्त हैं, आप ही सृष्टि के विधाता, रक्षक और संहारक हैं। आप ही वायु और अग्नि रूप हैं।

योजनानां सहस्त्रे द्वे द्वे शते द्वे च योजने।
एकेन निमिषार्द्धेन क्रममाण नमोस्तु ते॥ 49॥

हे सूर्यदेव! आपकी गति इतनी तीव्र रहती है कि केवल आधे पल में ही दो हजार दो सौ दो योजन पार कर लेते हैं। ऐसी गति वाले आपको नमस्कार है।

नव योजनलक्षाणि सहस्त्रद्विशतानि च।
यावद्धटीप्रमाणेन क्रममाण नमोस्तु ते॥ 50॥

नौ लाख, एक हजार दो सौ योजन को मात्र एक घड़ी में पार कर लेने वाले सूर्यदेव आपको नमस्कार है।

अग्रतश्च नमस्तुभ्यं पृष्ठतश्च सदा नमः।
पार्श्वतश्च नमस्तुभ्यं नमस्ते चास्तु सर्वदा॥ 51॥

हे सूर्यदेव! आपको आगे से, पीछे से, पार्श्व भाग से और सभी ओर से सदा नमस्कार है।

नमः सुरारिहन्त्रे च सोमसूर्याग्निचक्षुषे।
नमो दिव्याय व्योमाय सर्वतन्त्रमयाय च॥ 52॥

राक्षसों को मारने वाले, चन्द्रमा, सूर्य और अग्नि रूप नेत्रों वाले सूर्यदेव आपको नमस्कार है।

नमो वेदान्तवेद्याय सर्वकर्मादिसाक्षिणे।
नमो हरितवर्णाय सुवर्णाय नमो नमः॥ 53॥

हे सूर्यदेव! आपको वेदान्त के द्वारा जाना जा सकता है। आप सभी कर्मों के प्रमुख साक्षी हैं, आपको नमस्कार है। हरित एवं सुनहरे रंग वाले आपको नमस्कार है।

अरुणो माघमासे तु सूर्यो वै फाल्गुने तथा।
चैत्रमासे तु वेदाङ्गो भानुर्वैशाखतापनः॥ 54॥

माघ के महीने में अरुण, फाल्गुन में सूर्य, चैत्र में वेदांग और वैशाख में भानु तपता है।

ज्येष्ठमासे तपेदिन्द्र आषाढे तपते रविः।
गभस्तिः श्रावणे मासे यमो भाद्रपदे तथा॥ 55॥

ज्येष्ठ मास में इन्द्र, आषाढ़ में रवि, श्रावण में गभस्ति और भाद्रपद में यम नामक सूर्य तपता है।

इषे सुवर्णरेताश्च कार्तिके च दिवाकरः।
मार्गशीर्षे तपेन्मित्रः पौषे विष्णुः सनातनः॥ 56॥

आश्विन मास में सुवर्ण रेता, कार्तिक में दिवाकर, मार्गशीर्ष में मित्र और पौष में सनातन विष्णु नामक सूर्य तपता है।

पुरुषस्त्वधिके मासे मासाधिक्ये तु कल्येत्।
इत्येते द्वादशादित्याः काश्यपेयाः प्रकीर्तिताः॥ 57॥

जिस वर्ष में अधिक मास हो उसके अधिक मास को पुरुषोत्तम मास मानें। ये बारह आदित्य कश्यपजी के पुत्र बताए गए हैं।

उग्ररूपा महात्मानस्तपंते विष्णुरूपिणः।
धर्मार्थकाममोक्षाणां प्रस्फुटा हेतवो नृप॥ 58॥

हे राजन! ये विष्णु स्वरूप उग्र तप वाले महात्मा तपते हैं और ये धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के स्पष्ट हेतु हैं।

सर्वपापहरं चैवमादित्यं संप्रपूजयेत्।
एकधा दशधा चैव शतधा च सहस्त्रधा॥ 59॥

इस प्रकार आदित्य की एक, दस, सौ और सहस्त्रभूतियों में पूजा करें।

तपन्ते विश्वरूपेण सृजन्ति संहरन्ति च।
एष विष्णुः शिवश्चैव ब्रह्मा चैव प्रजापतिः॥ 60॥

ये आदित्य तपते हैं और विष्णु रूप से सृजन और संहार करते हैं। ये ही प्रजापति, ब्रह्मा, विष्णु और शिव हैं।

महेन्द्रश्चैव कालश्च यमो वरुण एव च।
नक्षत्रग्रहताराणामधिपो विश्वतापनः॥ 61॥

इन्द्र, काल, यम, वरुण, नक्षत्र, ग्रह और तारकों के स्वामी ये ही हैं। ये ही विश्व को तपाने वाले हैं।

वायुरग्निर्धनाध्यक्षो भूतकर्ता स्वयंप्रभुः।
एष देवो हि देवानां सर्वमाप्यायते जगत्॥ 62॥

वायु, अग्नि, कुबेर, प्राणियों के रचयिता स्वयंप्रभु ये ही हैं। ये देवताओं के भी देवता हैं और सम्पूर्ण संसार को तपाते हैं।

एष कर्ता हि भूतानां संहर्ता रक्षकस्तथा।
एष लोकानुलोकश्च सप्तद्वीपाश्च सागरा: ॥ 63 ॥

ये ही प्राणियों की रचना करते हैं, ये ही उनका संहार करते हैं और ये ही उनकी रक्षा करते हैं। ये ही लोक और अनुलोक हैं। ये ही सात द्वीप और समुद्र हैं।

एष पातालसप्तस्था दैत्यदानवराक्षसा: ।
एष धाता विधाता च बीजं क्षेत्रं प्रजापति: ॥ 64 ॥

ये ही सात पातालों में स्थित हैं। ये ही दैत्य, दानव और राक्षस हैं। ये ही रक्षक, रचयिता, बीजक्षेत्र और प्रजापति हैं।

एष एव प्रजा नित्यं संवर्धयति रश्मिभि: ।
एष यज्ञ: स्वधा स्वाहा ह्री: श्रीश्च पुरुषोत्तम: ॥ 65 ॥

यही आदित्य अपनी किरणों से नित्य प्रजा को बढ़ाता है। यही यज्ञ का स्वाहा और स्वधा रूप है। यही लज्जा, लक्ष्मी और पुरुषोत्तम है।

एष भूतात्मको देव: सूक्ष्मोऽव्यक्त: सनातन: ।
ईश्वर: सर्वभूतानां परमेष्ठी प्रजापति: ॥ 66 ॥

यही देवता, प्राणिरूप, सूक्ष्म, अव्यक्त, अविनाशी, सभी प्राणियों के स्वामी, ब्रह्मा और प्रजापति हैं।

कालात्मा सर्वभूतात्मा वेदात्मा विश्वतोमुख: ।
जन्ममृत्युजराव्याधिसंसारभयनाशन: ॥ 67 ॥

यही काल की आत्मा हैं। सभी प्राणियों की आत्मा हैं और वेदों की भी आत्मा हैं। इनका मुख सभी दिशाओं में है। ये ही जन्म, मृत्यु, बुढ़ापा, व्याधि और सांसारिक भयों का नाश करने वाले हैं।

दारिद्र्यव्यसनध्वंसी श्रीमान्देवो दिवाकर: ।
विकर्तनो विवस्वांश्च मार्तण्डो भास्करो रवि: ॥ 68 ॥

शोभाशाली, दिन के कर्ता (सूर्य), दरिद्रता और बुराइयों को नष्ट करने वाले हैं। ये ही विकर्तन हैं, प्रकाश कारक हैं, दीप्तियुक्त हैं और अण्डे के आकार वाले हैं।

लोकप्रकाशक: श्रीमाल्लोकचक्षुर्ग्रहेश्वर: ।
लोकसाक्षी त्रिलोकेश: कर्त्ता हर्ता तमि स्रहा ॥ 69 ॥

ये संसार को प्रकाश देते हैं, शोभा से युक्त हैं, संसार के नेत्र रूप हैं और सभी के स्वामी हैं। संसार के साक्षी तीनों लोकों के स्वामी, कर्ता, हर्ता और अंधकार के विनाशक हैं।

तपनस्तापनश्चैव शुचि: सप्ताश्ववाहन: ।
गभस्तिहस्तो ब्रह्मण्य: सर्वदेवनमस्कृत: ॥ 70 ॥

ये तपते भी हैं और तपाते भी हैं। ये पवित्र हैं और इनके रथ में सात घोड़े जुते

हैं। किरण ही इनके हाथ हैं। ये ब्राह्मणों पर कृपा करने वाले हैं और सब देवता इन्हें नमस्कार करते हैं।

आयुरारोग्यमैयश्वर्यं नरा नार्यश्च मन्दिरे।
यस्य प्रसादात्संतुष्टिरादित्यहृदयं जपेत्॥ 71॥

जिनके प्रसाद से नर और नारी घर में आरोग्य, आयु और ऐश्वर्य प्राप्त करते हैं उन आदित्य का जप करना चाहिए।

इत्येतैर्नामभिः पार्थ आदित्यं स्तौति नित्यशः।
प्रातरुत्थाय कौन्तेय तस्य रोगभयं न हि॥ 72॥

हे पार्थ! हे कुन्ती पुत्र! जो नित्य प्रात:काल उठकर इन नामों से आदित्य की स्तुति करता है उसको रोग और भय नहीं सताते हैं।

पातकान्मुच्यते पार्थ व्याधिभ्यश्च न संशयः।
एकसन्ध्यं द्विसन्ध्यं वा सर्वपापैः प्रमुच्यते॥ 73॥

हे अर्जुन! आदित्य की स्तुति से निस्सन्देह मनुष्य पातकों से मुक्त हो जाता है। एक सन्ध्या के समय या दो सन्ध्याओं के समय इसकी स्तुति करने से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

त्रिसन्ध्यं जपमानस्तु पश्येच्च परमं पदम्।
यदह्नात्कुरुते पापं तदह्नात्प्रतिमुच्यते॥ 74॥

यदि तीनों संध्याओं के समय इसकी स्तुति की जाए तो परम पद की प्राप्ति हो जाती है। दिन में जो पाप हो जाता है वह दिन में स्तुति करने से दूर हो जाता है।

यद्रात्र्यात्कुरुते पापं तद्रात्र्यात्प्रतिमुच्यते।
दद्रुस्फोटककुष्ठानि मण्डलानि विषूचिका॥ 75॥

रात में किया हुआ पाप रात में स्तुति करने से समाप्त हो जाता है। दाद, चेचक, कोढ़ों का समूह और हैजा।

सर्वव्याधिमहारोगभूतबाधास्तथैव च।
डाकिनी शाकिनी चैव महारोगभयं कुतः॥ 76॥

सब तरह की व्याधियां, बहुत बड़ी बीमारियां, भूतबाधा, डाकिनी और भयंकर रोगों का भय तो हो ही नहीं सकता।

ये चान्ये दुष्टरोगाश्च ज्वरातीसारकादयः।
जपमानस्य नश्यन्ति जीवेच्च शरदां शतम्॥ 77॥

इनके अतिरिक्त जो और अन्य बुरे रोग हैं जैसे ज्वर, अतिसार आदि वे भी इसका पाठ करने से नष्ट हो जाते हैं और पाठ करने वाला सौ वर्ष तक जीता है।

संवत्सरेण मरणं यदा तस्य ध्रुवं भवेत्।
अशीर्षां पश्यति च्छायामहोरात्रं धनंजय॥ 78॥

हे धनंजय! वह मनुष्य एक बरस में अवश्य ही मृत्यु को प्राप्त हो जाएगा जो रात-दिन में (चौबीस घंटों में) अपनी छाया में सिर नहीं देखता।

यस्त्विदं पठते भक्त्या भानोर्वारे महात्मनः।
प्रातः स्नाने कृते पार्थ एकाग्रकृतमानसः॥ 79॥

हे पार्थ! जो मनुष्य रविवार के दिन प्रातःकाल स्नान करके एकाग्रचित्त से भक्ति के साथ इसका पाठ करता है।

सुवर्णचक्षुर्भवति न चान्धस्तु प्रजायते।
पुत्रवान् धनसंपन्नो जायते चारुजः सुखी॥ 80॥

उसके नेत्र सुन्दर हो जाते हैं और वह अन्धा नहीं होता। वह पुत्रवान, धनसम्पन्न, नीरोगी और सुखी होता है।

सर्वसिद्धिमवाप्नोति सर्वत्र विजयी भवेत्।
आदित्यहृदयं पुण्यं सूर्यनामविभूषितम्॥ 81॥

सूर्य के नामों से भूषित पवित्र आदित्य हृदय के सुनने से सभी सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं, सर्वत्र विजय प्राप्त होती है।

श्रुत्वा च निखिलं पार्थ सर्वपापैः प्रमुच्यते।
अतः परतरं नास्ति सिद्धिकामस्य पाण्डव॥ 82॥

हे पाण्डव! सब पापों से मुक्ति हो जाती है। सिद्धि की कामना वाले के लिए इससे बढ़कर कोई साधन नहीं है।

एतज्जपस्व कौन्तेय येन श्रेयो ह्यवाप्स्यसि।
आदित्यहृदयं नित्यं यः पठेत्सुसमाहितः॥ 83॥

हे कुन्तीपुत्र! तुम इसका जप करो जिससे तुम्हारा कल्याण होगा। जो मनुष्य एकाग्रचित्त हो आदित्य हृदय को पढ़ेगा—

भ्रूणहा मुच्यते पापात्कृतघ्नोब्रह्मघातकः।
गोघ्नः सुरापो दुर्भोजी दुष्प्रतिग्रहकारकः॥ 84॥

उसे भ्रूणहत्या, कृतघ्नता, ब्रह्महत्या, गोहत्या, सुरापान, अशुद्ध भोजन, खोटा दान लेने आदि का पाप नहीं लगेगा।

पातकानि च सर्वाणि दहत्येव न संशयः।
य इदं श‍ृणुयान्नित्यं जपेद्वापि समाहितः॥ 85॥

जो इसको एकाग्रचित्त होकर नित्य जपता या सुनता है उसके सभी पाप जल जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं है।

सर्वपापविशुद्धात्मा सूर्यलोके महीयते।
अपुत्रो लभते पुत्रान्निर्धनो धनमाप्नुयात्॥ 86॥

इसके सुनने या जपने से मनुष्य सब पापों से शुद्ध हो जाता है और सूर्य लोक में प्रतिष्ठा पाता है। पुत्र हीन को पुत्र प्राप्त होता है और निर्धन को धन मिलता है।

कुरोगी मुच्यते रोगाद्भक्त्या यः पठते सदा।
यस्त्वादित्यदिने पार्थ नाभिमात्रजले स्थितः॥ 87॥
उदयाचलमारूढं भास्करं प्रणतः स्थितः।
जपते मानवो भक्त्या शृणुयाद्वापि भक्तितः॥ 88॥

जो इसे सदा भक्तिपूर्वक पढ़ता है, वह भयंकर रूप से बीमार हो तो भी रोगमुक्त हो जाता है। हे पार्थ! जो रविवार के दिन नाभिपर्यन्त जल में खड़ा होकर उदयाचल पर उदय होते हुए सूर्य को प्रणाम करके इसको सुनता है अथवा इसका पाठ करता है—

स याति परमं स्थानं यत्र देवो दिवाकरः।
अमित्रदमनं पार्थ! यदा कर्तुं समारभेत्॥ 89॥

वह उस परम स्थान को प्राप्त होता है जहां सूर्य भगवान सूर्यदेव हैं अर्थात् उसे बहुत उच्च पद प्राप्त होता है। हे पार्थ! जब शत्रु का दमन करना शुरू करें,

तदा प्रतिकृतिं कृत्वा शत्रोश्चरणपांसुभिः।
आक्रम्य वामपादेन आदित्यहृदयं जपेत्।
एतन्मन्त्रं समाहूय सर्वसिद्धिकरं परम्॥ 90॥

तब शत्रु की मूर्ति बनाकर बाएं पैर से उस पर आनुषण करके आदित्य हृदय का जप करें। उस मूर्ति में शत्रु का आवाहन करें। शत्रु प्राणों का आवाहन करके नीचे लिखे मंत्र का जप करें तो सभी सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं। मंत्र यह है—

ॐ ह्रीं हिमालीढं स्वाहा॥ ॐ ह्रीं निलीढं स्वाहा॥
ॐ ह्रीं मालीढं स्वाहा॥ *इति मंत्रः॥*
त्रिभिश्च रोगी भवति ज्वरी भवति पञ्चभिः।
जपैस्तु सप्तभिः पार्थ राक्षस्तनुमाविशेत्॥ 91॥

ॐ ह्रीं हिमालीढं स्वाहा। ॐ ह्रीं निलीढं स्वाहा। ॐ ह्रीं मालीढं स्वाहा।

हे पार्थ इस मंत्र को तीन बार जपने से शत्रु रोगी हो जाता है। पांच बार जपने से उसे ज्वर हो जाता है और सात बार जपने से राक्षस उसके शरीर में प्रवेश कर जाते हैं।

राक्षसेनाभिभूतस्य विकारान् शृणु पाण्डव।
गीयते नृत्यते नग्न आस्फोटयति धावति॥ 92॥

हे पाण्डव! सुनो, जब राक्षस शरीर में प्रवेश कर जाता है तब ये विकार हो जाते हैं—वह गाता है, नाचता है, नंगा होकर ताल (जंघा पर हाथ मारना) ठोंकता है और दौड़ता है।

शिवारुतं च कुरुते दशते क्रन्दते पुनः।
एवं संपीड्यते पार्थ यद्यपि स्यान्महेश्वरः॥ 93॥

श्रृगाल की तरह रोता है, हंसता है, ऐसा होने पर शत्रु चाहे महादेव ही क्यों न हो, पीड़ित होता है।

किं पुनर्मानुषः कश्चिच्छौचाचारविवर्जितः।
पीडितस्य न संदेहो ज्वरो भवति दारुणः॥ 94॥

फिर शौच और आचार से रहित मनुष्य के बारे में तो कहना ही क्या है। इस प्रकार पीड़ित होते हुए शत्रु को दुख देने वाला महाज्वर हो जाता है। इसमें सन्देह नहीं है।

यदा चानुग्रहं तस्य कर्तुमिच्छेच्छुभकंरम्।
तदा सलिलमादाय जपेन्मन्त्रमिमं बुधः॥ 95॥

जब उसके कल्याण के लिए अनुग्रह करना चाहे तो जल लेकर बुद्धिमान इस मंत्र का जप करें।

नमोभगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः।
जयाय जयभद्राय हरिदश्वाय ते नमः॥ 96॥

हे भगवान आदित्य आपके लिए बारम्बार नमस्कार है! हे जय रूप! जय भद्र! हे हरित अश्वों वाले! आपको नमस्कार है।

स्नापयेत्तेन मन्त्रेण शुभं भवति नान्यथा।
अन्यथा च भवेद्देषो नश्यते नात्र संशयः॥ 97॥

उस अभिमन्यिल उसे स्नान कराने पर शुभ फल मिलता है और किसी उपाय से नहीं। ऐसा न कराने से निश्चय ही दोष नहीं रहेगा।

अतस्ते निखिलः प्रोक्तः पूजां चैव निबोध मे।
उपलिप्ते शुचौ देशे नियतो वाग्यतः शुचिः॥ 98॥

मैंने तुमसे सब कह दिया। अब मुझसे पूजा की विधि भी जान लो। लिपे हुए शुद्ध स्थान पर नियमपूर्वक मौन और पवित्र होकर—

वृत्तं वा चतुरस्त्रं वा लिप्तभूमौ लिखेच्छुचिः।
त्रिधा तत्र लिखेत्पद्ममष्टपत्रं सकर्णिकम्॥ 99॥
अष्टपत्रं लिखेत्पद्मं लिप्तगोमयमण्डले।
पूर्वपत्रे लिखेत्सूर्यमाग्नेय्यां तु रविं न्यसेत्॥ 100॥

गोल या चार कोनों वाली तीन रेखाएं उस लिपी हुई भूमि पर बनाएं। गोबर से लिपे मण्डल में अष्टदल कमल अंकित करें। पूर्व दिशा के पत्ते पर सूर्य और अग्निकोण में रवि लिखें।

याम्यायां च विवस्वन्तं नैर्ऋत्यां तु भगं न्यसेत्।
प्रतीच्यां वरुणं विद्याद्वायव्यां मित्रमेव च॥ 101 ॥

दक्षिण दिशा के पत्ते पर विवस्वान् लिखें, नैर्ऋत्य में भग लिखे। पश्चिम दिशा में वरुण, वायव्य में मित्र को अंकित करें।

आदित्यमुत्तरे पत्रे ईशान्यां विष्णुमेव च।
मध्ये तु भास्करं विद्यात्क्रमेणैवं समर्चयेत्॥ 102 ॥

उत्तर में पत्र पर आदित्य और ईशान में विष्णु लिखें। मध्य में भास्कर स्थित करें और क्रमानुसार पूजन करें।

अतः परतरं नास्ति सिद्धिकामस्य पाण्डव।
महातेजसमुद्यन्तं प्रणमेत्सकृताञ्जलिः॥ 103 ॥

हे पाण्डव, सिद्धि चाहने वाले के लिए इससे बढ़कर कुछ नहीं है! उदित होते हुए सूर्य को हाथ जोड़कर प्रणाम करें।

सकेसराणि पद्मानि करवीराणि चार्जुन।
तिलतण्डुलसंयुक्तं कुशगन्धोदकेन च॥ 104 ॥

हे अर्जुन! केसर सहित कमल के फूल, कनेर के फूल, तिल और चावल सहित कुश और सुगन्धित जल के साथ।

रक्तचन्दनमिश्राणि कृत्वा वै ताम्रभाजने।
धृत्वा शिरसि तत्पात्रं जानुभ्यां धरणीं स्पृशेत्॥ 105 ॥

लाल चन्दन मिलाकर तांबे के पात्र में भरें। उस पात्र को सिर पर रखकर घुटनों से पृथ्वी का स्पर्श करें।

मन्त्रपूतं गुडाकेश! चार्घ्यं दद्याद्गभस्तये।
सायुधं सरथं चैव सूर्यमावाहयाम्यहम्॥ 106 ॥

हे गुडाकेश! मंत्र बोलते हुए उस जल से सूर्य को अर्घ्य दें। मैं शस्त्र और रथ सहित सूर्य का आवाहन करता हूं। ऐसा कहें।

स्वागतो भव॥ सुप्रतिष्ठो भव॥ सन्निधो भव॥
सन्निहितो भव॥ संमुखो भव॥ इति पञ्च मुद्राः॥
स्फुटयित्वार्हयेत् सूर्यं भुक्तिं मुक्तिं लभेन्नरः॥ 107 ॥

स्वागतो भव! सुप्रतिष्ठो भव! सन्निधो भव! सन्निहितो भव! संमुखो भव! ये पांच मुद्रा हैं। इन्हें दिखाकर मनुष्य सूर्य की पूजा करें और मुक्ति को प्राप्त करें।

ॐ श्रीं विद्यां किलिकिलिकटकेष्टसर्वार्थसाधनाय स्वाहा॥
ॐ श्रीं ह्रीं हः हंसः सूर्याय नमः स्वाहा॥
ॐ श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रं ह्रैं ह्रौं ह्रः सूर्यमूर्तये स्वाहा॥
ॐ श्रीं ह्रीं खं खः लोकाय सर्वमूर्तये स्वाहा॥
ॐ ह्रूं मार्तण्डाय स्वाहा॥

नमोऽस्तु सूर्याय सहस्त्रभानवे नमोऽस्तु वैश्वानरजातवेदसे॥
त्वमेव चार्घ्यं प्रतिगृहण देव देवाधिदेवाय नमो नमस्ते॥ 108॥

ॐ श्रीं विद्यां किलिकिलिकटकेष्टसर्वार्थसाधनाय स्वाहा॥ ॐ श्रीं ह्रीं हः हंसः सूर्याय नमः स्वाहा॥ ॐ श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः सूर्यमूर्तये स्वाहा॥ ॐ श्रीं ह्रीं खं खः लोकाय सर्वमूर्तये स्वाहा॥ ॐ ह्रूं मार्तण्डाय स्वाहा।

सहस्त्र किरणों वाले सूर्य को नमस्कार है, वैश्वानर और जातवेदस् को नमस्कार हैं। देवों के भी देव को नमस्कार है! हे देव आप अर्घ्य को ग्रहण करें।

नमो भगवते तुभ्यं नमस्ते जातवेदसे।
दत्तमर्घ्यं मया भानो त्वं गृहाण नमोऽस्तु ते॥ 109॥

हे भगवान आपको नमस्कार है! जातवेद (अग्नि) रूप आपको नमस्कार है। हे भानो, आप मेरे द्वारा दिए हुए अर्घ्य को ग्रहण कीजिए। आपको नमस्कार है।

एहि सूर्य सहस्त्रांशो तेजोराशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां देव गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते॥ 110॥

हे संसार के स्वामी, तेज की राशि, सहस्त्र रश्मियों वाले सूर्य! आइए! हे देव मुझ पर कृपा करके अर्घ्य ग्रहण कीजिए। आपको नमस्कार है।

नमो भगवते तुभ्यं नमस्ते जातवेदसे।
ममेदमर्घ्यं गृहण त्वं देवदेव नमोऽस्तु ते॥ 111॥

हे अग्नि रूप भगवान सूर्य आपके लिए नमस्कार है! हे देवाधिदेव आपको नमस्कार है, मेरे इस अर्घ्य को ग्रहण कीजिए!

सर्वदेवाधिदेवाय आधिव्याधिविनाशिने।
इदं गृहाण मे देव सर्वव्याधिर्विनश्यतु॥ 112॥

हे सब देवताओं के अधिदेवता, शारीरिक और मानसिक व्याधियों के विनाशक इसे ग्रहण कीजिए और सब व्याधियों का विनाश कीजिए!

नमः सूर्याय शान्ताय सर्वरोगविनाशिने।
ममेप्सितं फलं दत्वा प्रसीद परमेश्वर॥ 113॥

सर्व रोगों के विनाशक शान्त रूप सूर्य आपको नमस्कार है। मुझे इच्छानुसार फल देकर प्रसन्न हो जाइए।

ॐ नमो भगवते सूर्याय स्वाहा। ॐ शिवाय स्वाहा।
ॐ सर्वात्मने सूर्याय नमः स्वाहा॥ ॐअक्षय्यतेजसे नमः स्वाहा॥
सर्वसंकष्टदारिद्र्यं शत्रुं नाशय नाशय।
सर्वलोकेषु विश्वात्मन्सर्वात्मन्सर्वदर्शक॥ 114॥

ॐ नमो भगवते सूर्याय स्वाहा। ॐ शिवाय स्वाहा। ॐ सर्वात्मने सूर्याय

नमः स्वाहा। ॐ अक्षय्यतेजसे नमः स्वाहा॥

सब संकटों, दरिद्रता और शत्रु को नष्ट कीजिए। आप विश्वव्यापक, सर्वव्यापक और सब लोकों में सब कुछ देखने की सामर्थ्य रखते हैं।

नमो भगवते सूर्य कुष्ठरोगान्विखण्डय।
आयुरारोग्यमैश्वर्यं देहि देव नमोऽस्तु ते॥ 115॥

हे देवाधिदेव सूर्य भगवान आपको नमस्कार है! आप कोढ़ के रोगों को नष्ट कर दीजिए और आयु, आरोग्य एवं ऐश्वर्य प्रदान कीजिए।

नमो भगवते तुभ्यमादित्याय नमो नमः।
ॐ अक्षय्यतेजसे नमः॥ ॐ सूर्याय नमः॥ ॐ विश्वमूर्तये नमः॥

हे भगवन आदित्य आपको नमस्कार है! ॐअक्षय्यतेजसे नमः॥ ॐ सूर्याय नमः॥ ॐ विश्वमूर्तये नमः॥

आदित्यं च शिवं विन्द्याच्छिवमादित्यरूपिणम्।
उभयोरन्तरं नास्ति आदित्यस्य शिवस्य च॥ 116॥

आदित्य को शिव समझो और शिव को आदित्य रूप जानो। सूर्य और शिव के बीच अन्तर नहीं है।

एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं पुरुषो वै दिवाकरः।
उदये ब्रह्मणो रूपं मध्याह्ने तु महेश्वरः॥ 117॥

मैं यह सुनना चाहता हूं—सूर्य परमात्मा का ही रूप है। उदय होता हुआ सूर्य ब्रह्मा रूप है, मध्याह्न में महेश्वर का।

अस्तमाने स्वयं विष्णुस्त्रिमूर्तिश्च दिवाकरः।
नमो भगवते तुभ्यं विष्णवे प्रभविष्णवे॥ 118॥

अस्त होते समय सूर्य स्वयं विष्णु है। इस प्रकार दिवाकर त्रिमूर्ति है। शक्तिमान विष्णु भगवान रूप आपको नमस्कार है।

ममेदमर्घ्यं प्रतिगृह्ण देव देवाधिदेवाय नमो नमस्ते॥ 119॥

देवाधिदेव आपको नमस्कार है। हे देव! मेरे इस अर्घ्य को ग्रहण कीजिए।

श्रीसूर्याय साङ्गाय सपरिवाराय श्रीसूर्यनारायणायेदमर्घ्यम्॥
हिमघ्नाय तमोघ्नाय रक्षोघ्नाय च ते नमः।
कृतघ्नघ्नाय सत्याय तस्मै सूर्यात्मने नमः॥ 120॥

अंगों सहित एवं परिवार सहित श्री सूर्यनारायण के लिए यह अर्घ्य है। ठंड को नष्ट करने वाले, अन्धकार को नष्ट करने वाले और राक्षसों का नाश करने वाले सूर्यदेव! आपको नमस्कार है। अकृतज्ञ को नष्ट करने वाले सत्य रूप के लिए नमस्कार है।

जयो जयश्च विजयो जितप्राणो जितश्रमः।
मनोजवो जितक्रोधो वाजिनः सप्त कीर्तिताः॥ 121॥

जय, अजय, विजय, जितप्राण, जितश्रम, मनोजव और जितक्रोध—सूर्य के सात घोड़े कहे गए हैं।

हरितध्यरथं दिवाकरं कनकमयाम्बुजरेणुपिञ्जरम्।
प्रतिदिनमुदये नवं नवं शरणमुपैमि हिरण्यरेतसम्॥ 122॥

हरे घोड़ों के रथ वाले, स्वर्ण के कमल की रज के समान, पीले रंग के अग्नि स्वरूप नवोदित सूर्य की शरण प्राप्त करता हूं।

न तं व्यालाः प्रबाधन्ते न व्याधिभ्यो भयं भवेत्।
न नागेभ्यो भयं चैव न च भूतभयं क्वचित्॥ 123॥

जो इसका जप करता है उसे सर्प कष्ट नहीं देते और न ही रोगों का भय रहता है। न उसे कभी हाथी का डर रहता है और न भूत का।

अग्निशत्रुभयं नास्ति पार्थिवेभ्यस्तथैव च।
दुर्गतिं तरते घोरां प्रजां च लभते पशून्॥ 124॥

उसे न अग्नि और शत्रु का भय होता है और न राज भय। घोर दुर्गति पर विजय पाकर पुत्र और पशुओं को प्राप्त करता है।

सिद्धिकामो लभेत् सिद्धिं कन्याकामस्तु कन्यकाम्।
एतत् पठेत् स कौन्तेय भक्तियुक्तेन चेतसा॥ 125॥

हे कौन्तेय! भक्ति में मन लगाकर इसे पढ़ने से सिद्धि के इच्छुक को सिद्धि मिलती है और कन्या चाहने वाले को कन्या प्राप्त होती है।

अश्वमेधसहस्रस्य वाजपेयशतस्य च।
कन्याकोटिसहस्रस्य दत्तस्य फलमाप्नुयात्॥ 126॥

हजार अश्वमेध और सौ वाजपेय (एक प्रसिद्ध यज्ञ जो श्रौतयज्ञों में पांचवां है) का तथा हजार करोड़ कन्याओं के दान द्वारा फल प्राप्त होता है।

इयमादित्यहृदयं योऽधीते सतत नरः।
सर्वपापविशुद्धात्मा सूर्यलोके महीयते॥ 127॥

जो मनुष्य इस आदित्य हृदय को सदा पढ़ता है वह सभी पापों से मुक्त होकर सूर्यलोक में महानता प्राप्त करता है।

नास्त्यादित्यसमो देवो नास्त्यादित्यसमा गतिः।
प्रत्यक्षो भगवान्विष्णुर्येन विश्वं प्रतिष्ठितम्॥ 128॥

आदित्य के समान कोई देवता नहीं है। सूर्य के समान गति देने वाला अन्य कोई नहीं है। विश्व की प्रतिष्ठा करने वाले सूर्य प्रत्यक्ष विष्णु भगवान हैं।

नवतिर्योजनं लक्षं सहस्राणि शतानि च।
यावद्घटीप्रमाणेन तावच्चरति भास्करः॥ 129॥

भास्कर (सूर्य) की गति नब्बे लाख एक हजार एक सौ योजन प्रति घड़ी है।

गवां शतसहस्रस्य सम्यग्दत्तस्य यत्फलम्।
तत्फलं लभते विद्वान् शान्तात्मा स्तौति यो रविम्॥ 130॥

जो विद्वान शान्तचित्त होकर सूर्य की स्तुति करता है उसे वही फल प्राप्त होता है जो विधिपूर्वक एक लाख गौओं का दान करने से मिलता है।

योऽधीते सूर्यहृदयं सकलं सफलं भवेत्।
अष्टानां ब्रह्मणानां च लेखयित्वा समर्पयेत्॥ 131॥

जो आदित्य हृदय का पाठ करता है वह पूर्णरूपेण सफल होता है। इसे लिखवाकर आठ ब्राह्मणों को समर्पित करें।

ब्रह्मलोके ऋषीणां च जायते मानुषोऽपि वा।
जातिस्मरत्वमाप्नोति शुद्धात्मा नात्र संशयः॥ 132॥

ऐसा करने से मनुष्य या तो ऋषियों के मूल में जन्म लेता है या ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है। यदि वह मनुष्य का भी जन्म ले तो शुद्धात्मा होता है और कामदेव के समान सुन्दर होता है, इसमें सन्देह नहीं।

अजाय लोकत्रयपावनाय भूतात्मने गोपतये वृषाय।
सूर्याय सर्वप्रलयान्तकाय नमो महाकारुणिकोत्तमाय॥ 133॥

जन्म न लेने वाले, तीन लोकों को पवित्र करने वाले, प्राणियों में व्यापक गौओं के स्वामी, धर्म रूप, सम्पूर्ण प्रलय का अन्त करने वाले, महाकरुणाकरों में उत्तम सूर्य को नमस्कार है।

विवस्वते ज्ञानभृदन्तरात्मने जगत्प्रदीपाय जगद्धितैषिणे।
स्वयंभुवे दीप्तसहस्रचक्षुषे सुरोत्तमायामिततेजसे नमः॥ 134॥

ज्ञानियों के अन्तरात्मा, जगत के प्रकाशक, संसार का हित चाहने वाले, स्वयंभू, प्रकाशमान हजार नेत्रों वाले, सुरश्रेष्ठ, अमित तेजस्वी सूर्य के लिए नमस्कार।

सुरैरनेकैः परिसेविताय हिरण्यगर्भाय हिरण्मयाय।
महात्मने मोक्षप्रदाय नित्यं नमोऽस्तु ते वासरकारणाय॥ 135॥

अनेक देवताओं द्वारा परिसेवित, हिरण्यगर्भ (सोने से जन्म लेने वाले-ब्रह्मा) सुनहरे वर्णवाले, मोक्ष देने वाले महात्मा, दिन के कर्ता सूर्य! आपको नित्य नमस्कार है।

आदित्यश्चार्चितो देव आदित्यः परमं पदम्।
आदित्यो मातृको भूत्वा आदित्यो वाङ्मयं जगत्॥ 136॥

आदित्य पूजा के योग्य देवता हैं। आदित्य परम पद के दाता हैं। आदित्य अक्षर होकर वाणी का विषय हैं। संसार आदित्य रूप है।

आदित्यं पश्यते भक्त्या मां पश्यति ध्रुवं नरः।
आदित्यं पश्यतेऽभक्त्या न स पश्यति मां नरः॥ 137॥

जो मनुष्य भक्ति के साथ आदित्य के दर्शन करता है वह निश्चित रूप से मुझे ही देखता है। जो आदित्य को भक्ति से नहीं देखता वह मनुष्य मेरे दर्शन नहीं करता।

त्रिगुणं च त्रितत्त्वं च त्रयो देवास्त्रयोऽग्नयः।
त्रयाणां च त्रिमूर्तिस्त्वं तुरीयस्त्वं नमोऽस्तु ते॥ 138॥

हे सूर्यदेव! आप तीनों गुणों (सत, रज, तम) से युक्त हैं। तीन तत्वों (प्रकृति, पुरुष, ईश्वर) से युक्त हैं। तीनों देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) से युक्त हैं। तीनों अग्नियों से युक्त हैं। तीनों कालों (भूत, वर्तमान, भविष्यत्) में त्रिमूर्ति धारण करने वाले हैं और परब्रह्म हैं। आपको नमस्कार है।

नमः सवित्रे जगदेकचक्षुषे जगत्प्रसूतिस्थितिनाशहेतवे।
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे विरिञ्चिनारायणशंकरात्मने॥ 139॥

संसार के अकेले नेत्र, संसार के जन्म, स्थिति और संसार के हेतु, ब्रह्मा, विष्णु, महेश मय, तीनों गुणों को धारण करने वाले, शंकरात्मा सूर्य को नमस्कार है।

यस्योदयेनेह जगत्प्रबुध्यते प्रवर्तते चाखिलकर्मसिद्धये।
ब्रह्मेन्द्रनारायणरुद्रवन्दितः स नः सदा यच्छतु मङ्गलं रविः॥ 140॥

वह सूर्य सदा हमें मंगल (आनन्द) दें जिनके उदय होने पर यह संसार जागता है और सब कर्मों की सिद्धि के लिए प्रवृत्त होता है तथा ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु और रुद्र जिनकी वन्दना करते हैं।

नमोऽस्तु सूर्याय सहस्त्ररश्मये सहस्त्रशाखान्वितसंभवात्मने।
सहस्त्रयोगोद्भवभावभागिने सहस्त्रसंख्यायुगधारिणे नमः॥ 141॥

उन सूर्यदेव के लिए नमस्कार है जिनकी हजार किरणें हैं, सहस्त्र शाखाओं वाले वेद के उत्पत्ति-स्थान हैं, हजारों योग-साधनाओं से जो उत्पन्न हुए हैं, भक्ति भागी हैं और सहस्त्र संख्यक युगों को धारण करते हैं।

यन्मण्डलं दीप्तिकरं विशालं रत्नप्रभं तीव्रमनादिरूपम्।
दारिद्र्यदुःखक्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 142॥

वह श्रेष्ठ सूर्यदेव मुझे पवित्र करें जिनका मण्डल प्रकाश करता है, विशाल है, रत्नों की तरह चमकता है जो तीव्र है, जिसका रूप अभूतपूर्व है और दरिद्रता, दुख के क्षय का हेतु है।

यन्मण्डलं देवगणैः सुपूजितं विप्रैः स्तुतं भावनमुक्तिकोविदम्।
तं देवदेवं प्रणमामि सूर्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 143॥

वह श्रेष्ठ सूर्य मुझे पवित्र करें जिसके मण्डल की देवतागण पूजा करते हैं, ब्राह्मण स्तुति करते हैं। जो भक्तों को मुक्ति प्रदान करते हैं। मैं उन देवाधिदेव को प्रणाम करता हूं।

यन्मण्डलं ज्ञानघनं त्वगम्यं त्रैलोक्यपूज्यं त्रिगुणात्मरूपम्।
समस्ततेजोमयदिव्यरूपं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 144॥

वे श्रेष्ठ सूर्यदेव मुझे पवित्र करें जिनका मण्डल ज्ञान रूप धन है, अगम्य है, तीनों लोकों में पूज्य है, सत, रज, तम तीन गुणों की आत्मा है, सम्पूर्ण तेज का दिव्य रूप है।

यन्मण्डलं गूढमतिप्रबोधं धर्मस्य वृद्धिं कुरुते जनानाम्।
तत्सर्वपापक्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 145॥

वह श्रेष्ठ सूर्यदेव मुझे पवित्र करें जिनका मण्डल गूढ़ है और शुद्ध बुद्धि से ज्ञात होता है। जो मनुष्यों में धर्म की वृद्धि करता है तथा जो सभी पापों को नष्ट करने का हेतु है।

यन्मण्डलं व्याधिविनाशदक्षं यदृग्यजुस्सामसु संप्रगीतम्।
प्रकाशितं येन च भूर्भुवः स्वः पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 146॥

वह श्रेष्ठ सूर्यदेव मुझे पवित्र करें जिनका मण्डल व्याधियों का विनाश करने में दक्ष है, ऋक् यजु और सामवेद जिसकी स्तुति गान करते हैं तथा भू, भुव, स्व, तीनों लोकों को प्रकाशित करता है।

यन्मण्डलं वेदविदो विदन्ति गायन्ति यच्चारणासिद्धसंघाः।
यद्योगिनो योगजुषां च संघाः पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 147॥

वह श्रेष्ठ सूर्यदेव मुझे पवित्र करें जिनके मण्डल की वेदज्ञ प्रशंसा करते हैं, चारण और सिद्धियों का समूह जिनका गायन करता है, जिनका योगसाधक और योग सेवियों का समूह बखान करता है।

यन्मण्डलं सर्वजनेषु पूजितं ज्योतिश्च कुर्यादिह मर्त्यलोके।
यत्कालकालादिमनादिरूपं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 148॥

वह श्रेष्ठ सूर्यदेव मुझे पवित्र करें जिनके मण्डल की सब मनुष्य पूजा करते हैं, जो इस मनुष्य लोक में प्रकाश करते हैं, जो काल के काल के भी आदि हैं और जिनका रूप आदि है।

यन्मण्डलं विष्णुचतुर्मुखाख्यं यदक्षरं पापहरं जनानाम्।
यत्कालकल्पक्षयकारणं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 149॥

वह श्रेष्ठ सूर्यदेव मुझे पवित्र करें जिनके मण्डल का विष्णु भगवान चार गुणों से आख्यान करते हैं, जो अविनाशी हैं, मनुष्यों के पापों को दूर करता है, जो काल और कल्प का नाश करने वाला है।

यन्मण्डलं विश्वसृजां प्रसिद्धमुत्पत्तिरक्षाप्रलयप्रगल्भम्।
यस्मिञ्जगत् संहरतेऽऽखिलं च पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 150॥

वह श्रेष्ठ सूर्यदेव मुझे पवित्र करें जिनका मण्डल संसार के रचयिताओं में श्रेष्ठ है, संसार की उत्पत्ति, रक्षण और प्रलय में कुशल है और जिसमें सम्पूर्ण संसार का समाहार हो जाता है।

यन्मण्डलं सर्वगतस्य विष्णोरात्मा परं धाम विशुद्धतत्त्वम्।
सूक्ष्मान्तरैर्योगपथानुगम्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 151॥

वह श्रेष्ठ सूर्यदेव मुझे पवित्र करें जिनका मण्डल सर्वव्यापी विष्णु की आत्मा है, जिसका तेज उत्कृष्ट है, जो शुद्ध तत्व है और जो सूक्ष्म आन्तरिक योगों से जाना जाता है।

यन्मण्डलं ब्रह्मविदो वदन्ति गायन्ति यच्चारणसिद्धसंघाः।
यन्मण्डलं वेदविदः स्मरन्ति पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 152॥

श्रेष्ठ सूर्यदेव का वह मण्डल मुझे पवित्र करे जिसका ब्रह्मवेत्ता वर्णन करते हैं, चारणों और सिद्धों का समूह जिसका यशोगान करता है तथा वेदज्ञ जिसका स्मरण करते हैं।

यन्मण्डलं वेदविदोपगीतं यद्योगिनां योगपथानुगम्यम्।
तत्सर्ववेदं प्रणमामि सूर्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥ 153॥

जिनके मण्डल का वेदज्ञ गान करते हैं, जो योगियों को योगमार्ग के द्वारा प्राप्त होता है उन श्रेष्ठ वेदज्ञ सूर्य को मैं प्रणाम करता हूं, वे मुझे पवित्र करें।

मङ्गलाष्टमिदं पुण्यं यः पठेत्सततं नरः।
सर्वपापविशुद्धात्मा सूर्यलोके महीयते॥ 154॥

जो मनुष्य इस पवित्र मंगलाष्ट को नित्य पढ़ता है, वह सब पापों से मुक्त हो विशुद्ध होकर सूर्य लोक में परम पद प्राप्त करता है।

ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः।
केयूरवान्मकरकुण्डलवान् किरीटी हारी हिरणमयवपुर्धृतशङ्खचक्रः॥ 155॥

सूर्यमण्डल के बीच में स्थित, कमलासन पर बैठे, बाहुभूषण और मकर की आकृति के कुण्डल धारण किए हुए, मालाधारी, सोने की कान्ति से युक्त शरीर वाले, शंख और चक्र धारी का ध्यान करें।

सशङ्खचक्रं रविमण्डले स्थितं कुशेशयाक्रान्तमनन्तमच्युतम्।
भजामि बुद्धया तपनीयमूर्तिं सुरोत्तमं चित्रविभूषणोज्ज्वलम्॥ 156॥

शंख और चक्र धारण किए रवि मण्डल में स्थित कमल पर बैठे अनन्त, अविनाशी, तपनीय मूर्ति वाले, अनेक आभूषणों से सुशोभित सुरश्रेष्ठ विष्णु भगवान का बुद्धि से भजन करता हूं।

एवं ब्रह्मादयो देवा ऋषयश्च तपोधनाः।
कीर्तयन्ति सुरश्रेष्ठं देवं नारायणं विभुम्॥ 157॥

इस प्रकार ब्रह्मादि देवता, तपस्वी, ऋषि सुरश्रेष्ठ प्रभु नारायण देव का कीर्ति-गान करते हैं।

वेदवेदाङ्गशारीरं दिव्यदीप्तिकरं परम्।
रक्षोघ्नं रक्तवर्णं च सृष्टिसंहारकारकम्॥ 158॥

उन श्रेष्ठ सूर्य को मैं प्रणाम करता हूं—वेद और वेद के अंग ही जिनका शरीर है, अत्यन्त दिव्य प्रकाश करने वाले हैं, राक्षसों के हन्ता हैं, जिनका रंग लाल है और सृष्टि का संहार करने वाले हैं।

एकचक्रो रथो यस्य दिव्यः कनकभूषितः।
स मे भवतु सुप्रीतः पद्महस्तो दिवाकरः॥ 159॥

जिनका दिव्य स्वर्ण भूषित एक पहिए का रथ है और वो जिनके हाथ में कमल है वह दिन के कर्ता सूर्य मुझ पर प्रसन्न हों।

आदित्यः प्रथमं नाम द्वितीयं तु दिवाकरः।
तृतीयं भास्करः प्रोक्तं चतुर्थं तु प्रभाकरः॥ 160॥

जिनका प्रथम नाम अदिति पुत्र (आदित्य) है, दूसरा नाम दिवाकर है, तीसरा भास्कर और चौथा प्रभाकर नाम है।

पञ्चमं तु सहस्रांशुः षष्ठं चैव त्रिलोचनः।
सप्तमं हरिदश्वश्च ह्यष्टमं च विभावसुः॥ 161॥

जिनका पांचवां नाम सहस्रांशु और छठा त्रिनेत्र है, सातवां नाम हरितअश्व और आठवां विभावसु है।

नवमं दिनकृत् प्रोक्तं दशमं द्वादशात्मकः।
एकादशं त्रयीमूर्तिर्द्वादशं सूर्य एवं च॥ 162॥

जिनका नौवां नाम दिनकर और दसवां द्वादशात्मा है। ग्यारहवां नाम त्रयीमूर्ति और बारहवां सूर्य है।

द्वादशादित्यनामानि प्रातःकाले पठेन्नरः।
दुःस्वप्ननाशनं चैव सर्वदुःखं च नश्यति॥ 163॥

जो मनुष्य सूर्य के इन बारह नामों को प्रातःकाल पढ़ता है उसके दुःस्वप्न और दुःखों का प्रभाव नष्ट हो जाता है।

दद्रुकुष्ठहरं चैव दारिद्र्यं हरते ध्रुवम्।
सर्वतीर्थप्रदं चैव सर्वकामप्रवर्धनम्॥ 164॥

इन बारह नामों का पाठ दाद और कोढ़ को निश्चय ही दूर कर देता है। सब तीर्थों का फल देता है और सब इच्छाओं को पूर्ण करता है।

यः पठेत्प्रातरुत्थाय भक्त्या नित्यमिदं नरः।
सौख्यमायुस्तथारोग्यं लभते मोक्षमेव च॥ 165॥

जो मनुष्य प्रात:काल उठकर भक्ति के साथ इसको पढ़ता है उसे सुख, आयु, आरोग्य और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

अग्निमीले नमस्तुभ्यमिषेत्वोर्जे स्वरूपिणे।
अग्न आयाहिवीतिस्त्वं नमस्ते ज्योतिषां पते॥ 166॥

हे ज्योतिषों के स्वामी ऋग्वेद के 'अग्निमीले पुरोहितं...', यंत्र के रूप में आपको प्रणाम है, यजुर्वेद के 'इषेत्वोर्जे...' मंत्र के रूप में आपको प्रणाम है और सामवेद के अग्न आयाहि वीतये... मंत्र के रूप में आपको प्रणाम है।

शन्नो देवि नमस्तुभ्यं जगच्चक्षुर्नमोऽस्तु ते।
पञ्चमायोपवेदाय नमस्तुभ्यं नमो नमः॥ 167॥

अथर्ववेद के 'शन्नो देवीरभिष्टय...', आदि मंत्र के रूप में आपको नमस्कार है। पांचवें उपवेद के रूप में आपको नमस्कार है।

पद्मासनः पद्मकरः पद्मगर्भसमद्युतिः।
सप्ताश्वरथसंयुक्तो द्विभुजः स्यात् सदा रविः॥ 168॥

सूर्य भगवान का कमल का आसन है, हाथ में कमल है, कमल के गर्भ के समान सुशोभित हैं। रथ में सात घोड़े जुते हैं और उनके दो हाथ हैं।

आदित्यस्य नमस्कारं ये कुर्वन्ति दिने दिने।
जन्मान्तरसहस्त्रेषु दारिद्र्यं नोपजायते॥ 169॥

जो मनुष्य प्रतिदिन सूर्य को प्रणाम करते हैं उन्हें हजारों जन्म-जन्मान्तरों तक दरिद्रता नहीं सताती।

उदयगिरिमुपेतं भास्करं पद्महस्तं निखिलभुवननेत्रं रक्तरत्नोपमेयम्।
तिमिरकरिमृगेन्द्रं बोधकं पद्मिनीनां सुरवरमभिवन्दे सुन्दरं विश्ववन्द्यम्॥ 170॥

उदयाचल पर स्थित, हाथ में कमल लिए हुए, सम्पूर्ण भूमण्डल के नेत्र रूप, लाल रत्न के समान, अन्धकार रूपी हाथी के लिए सिंह रूप, कमलों को खिलाने वाले, विश्ववन्द्य सुन्दर श्रेष्ठ सूर्यदेव को मैं प्रणाम करता हूं।

इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे आदित्यहृदयस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

❑❑

श्रीसूर्य सहस्रनामस्तोत्र

हमारे उपास्यदेव भगवान सूर्यदेवजी प्रत्यक्ष रूप में सृष्टि के सभी जीवों और वनस्पतियों के जीवनाधार और पालन-पोषणकर्ता हैं। शास्त्रों में आपको सभी जीवों का प्राण एवं निराकार ब्रह्म का साकार स्वरूप कहा गया है। वे सृष्टि की सभी वस्तुओं के स्वामी हैं और कण-कण में विराजमान भी। यही कारण है कि एक सच्चा भक्त त्रैलोक्य की हर वस्तु में अपने उपास्यदेव भगवान सूर्यदेव के अंशरूप में दर्शन करता है और सभी वस्तुओं को उनका स्वरूप ही मानता है। इस रूप में संसार के सभी नाम प्रकारान्तर से भगवान सूर्यदेव के ही नाम हैं। उनकी कृपाओं, शक्तियों, महिमाओं, गुणों, कार्यों और स्वरूपों की कोई सीमा नहीं है। यही कारण है कि प्राचीन धर्मग्रंथों में जहां भगवान विष्णु, भगवान श्रीकृष्ण और हनुमानजी के एक-एक तथा भगवान शिवजी के दो सहस्रनाम हैं, वहीं भगवान सूर्यदेवजी के आधा दर्जन से भी अधिक सहस्रनाम एवं कई अष्टोत्तर शतनाम उपलब्ध हैं। ये सभी सहस्रनाम समान रूप से महत्वपूर्ण हैं और इनमें से किसी का भी जप किया जा सकता है।

इस अध्याय में स्कन्दपुराण से सूर्यसहस्रनामस्तोत्र का संकलन करके दिया गया है। प्रखर सूर्य उपासक महर्षि सूर्यवर्चा द्वारा देवगुरु बृहस्पति से प्रार्थना करने पर देवताओं के गुरुदेव बृहस्पतिजी ने इस सहस्रनाम का ज्ञान महर्षि सूर्यवर्चा को प्रदान किया था। भगवान सूर्यदेवजी की आराधना-उपासना करते समय तो अन्तिम चरण में इस सहस्रनाम का जप लगभग सभी उपासक करते ही हैं, आदित्यहृदय स्तोत्र के समान ही स्वतन्त्र रूप में भी इसका नियमित जप अनन्त फल प्रदायक है। यहां संकल्प वाक्य, विभिन्न न्यासों तथा भगवान सूर्यदेवजी के ध्यान सहित यह सहस्रनाम दिया जा रहा है। वैसे स्वतंत्र रूप से इस सहस्रनाम का जप करते समय ही ये समस्त कार्य किए जाते हैं, आराधना-उपासना के अंतिम चरण में तो भगवान सूर्यदेवजी की प्रदक्षिणा करने के तत्काल बाद ही सहस्रनाम के मुख्य भाग का स्तवन प्रारम्भ कर दिया जाता है।

भगवान से प्रार्थना

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये॥

चन्द्रमा के समान नील कान्तियुक्त वर्ण वाले एवं श्वेत वस्त्रों को धारण करने वाले चतुर्भुज भगवान विष्णु का मैं ध्यान करता हूं। वे प्रसन्न होकर मेरे विघ्नों का नाश करें।

विनियोग व संकल्प वाक्य

अस्य श्रीसूर्यसहस्त्रनामस्तोत्रमहामन्त्रस्य। आदित्योपासकः श्रीसूर्यवर्चा ऋषिः। श्रीमदादित्यनारायणो देवता ब्रह्मवर्चस्विता मूलमिति बीजम्। सर्वपापविनाशक इतिशक्तिः। अग्निश्च जातवेदाश्चेति परमो मंत्रः। हृद्रोगहारीति कीलकम्। निषङ्गी कवचीत्यस्त्रम्। भक्तरक्षणतत्पर इति कवचम्। श्रीमदादित्यप्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः॥

सूर्यसहस्त्रनामस्तोत्र नामक इस महामंत्र के देवता भगवान आदित्य अर्थात् सूर्यदेवजी हैं। महर्षि सूर्यवर्चा इसके ऋषि हैं। यह सभी पापों का विनाश करने वाला और अनेक रोगों से रक्षा करने वाला है। इसकी शक्ति महान है।

विभिन्न न्यास

आदित्योऽदितिदेव इत्यंगुष्ठाभ्यां नमः मंत्रो यंत्रं तथा क्षेत्रमिति तर्जनीभ्यां स्वाहा। गायत्रीवल्लभः प्राशुरिति मध्यमाभ्यां वौषट्। छन्दोमयः शास्त्रमय इत्यनामिकाभ्यां हुम्। सुब्रह्मण्यश्च सूरीन्द्र इति कनिष्ठिकाभ्यां वषट्।

सुरभूसुर दत्तार्घ्य शुद्धाम्बुग्रहणेरतइति करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। हृदयादिन्यासं च एवं कुर्यात्॥

सूर्यदेव का ध्यान

आदित्यस्त्वादिदेवोऽयं भास्करो भवनाशनः।
विश्वमूर्तिर्विश्वनेता चिन्मूर्तिश्चिन्तितार्थदः॥

इति त्रिवारं पठेत्—

तत्सहस्त्रनामपारायणं कृत्वा। उत्तरन्यासं कृत्वा। आदित्यायार्पयेत्॥

मण्डलस्य च विस्तारं नमस्कारविधिं ततः।
पूजाक्रमविशेषेण श्रुत्वा पुनरभाषत॥

सूर्यवर्चा उवाच—

भगवन् सर्वतत्वज्ञ सर्वकर्मप्रवर्तक।
नाम्नां सहस्त्रं दिव्यानां श्रोतुमिच्छाम्यहं रवेः॥

महर्षि सूर्यवर्चा ने कहा—हे प्रभु! सभी तत्वों को जानने वाले और सभी कर्मों के प्रवर्तक भगवान सूर्यदेवजी के एक हजार दिव्य नामों को जानने की मेरी आकांक्षा है। कृपया मुझे बतलाइए।

बृहस्पतिरुवाच—

सूर्यवर्चः शृणु परं सूर्यस्य च महात्मनः।
उत्तमं नामसाहस्त्रं यत्तमस्ते निकृन्तति॥
बृहस्पतिस्सभगवानित्युक्तसूर्यवर्चसम् ।
ध्यात्वा नारायणं देवं भानु मण्डलमध्यगम्॥

देवगुरु बृहस्पति ने कहा—हे सूर्यवर्चा! ध्यानपूर्वक सुन। मैं भगवान सूर्यदेवजी के एक हजार उत्तम नामों का वर्णन कर रहा हूं। इनका ध्यान और नित्य पाठ करने से भगवान सूर्यदेव प्रसन्न होते हैं और इसका स्तवन करने वाले को उनकी अनन्त कृपाएं मिलती रहती हैं और भगवान भास्कर उसे इस भवसागर से पार लगा देते हैं।

जहां तक व्यावहारिकता का प्रश्न है आराधना, उपासना अथवा किसी मंत्र के जप के बाद सहस्त्रनाम का पाठ करते समय तो यहां तक का कोई पाठ किया ही नहीं जाता। सीधे ही सहस्त्रनाम का पाठ प्रारम्भ कर दिया जाता है। किसी विशिष्ट प्रयोजन की आपूर्ति हेतु अधिक संख्या में इस सहस्त्रनाम का जप करते समय भी आप यदि उपरोक्त सभी प्रक्रियाएं न कर पाएं, तब उपासना एवं साधना का पूर्वार्द्ध नामक अध्याय में वर्णित प्रारम्भ से सूर्यदेवजी के ध्यान तक की सभी प्रक्रियाएं पूर्ण करने के बाद नीचे संकलित इस मूल सहस्त्रनाम का पाठ प्रारम्भ कर सकते हैं। आपको समान फलों की प्राप्ति होगी, हमारे भगवान सूर्यदेवजी कर्मकाण्डों को नहीं, भक्त के भावों को देखते हैं।

अथ श्रीसूर्यसहस्त्रनामस्तोत्रम्

ओं आदित्यश्चादिदेवोऽयं भास्करो भवनाशनः।
विश्वमूर्तिर्विश्वनेता चिन्मूर्तिश्चिन्तितार्थदः॥ 1॥
सद्योजातो वामदेवस्सर्वपापविनाशकः।
वेद्यो वैद्यस्सदायोगी विश्वकर्मा विभावसुः॥ 2॥
विरिञ्चिर्विश्रुतात्मा च विश्वसर्गप्रवर्तकः।
विद्यात्मा विषयज्ञश्च विश्वात्मा विश्वपापहा॥ 3॥
विदुषामीश्वरो विद्वान्विश्वनेता विशेषवित्।
वीरहा विषयश्शून्यो बालखिल्यादिवन्दितः॥ 4॥
वामनो वरदः प्रांशुर्वासुदेवस्सनातनः।
बालखिल्यपुरोगश्च वारिदो वसुमान्वसुः॥ 5॥

वरेण्यो वसुदेवश्च वसुरेता वसुप्रदः।
वायुर्वाचस्पतिर्विश्वं विष्णुर्विश्वामरेश्वरः ॥ 6 ॥
ओङ्कारश्च वषट्कारः सोमग्रहपुरोगमः।
ग्रहनक्षत्रमाली च शिंशुमारशरीरवान् ॥ 7 ॥
शरण्यश्शङ्करश्शम्भुः कालात्मा कान्तिवर्धनः।
कामदेवः कामहर्ता विराड्वीरासनस्थितः ॥ 8 ॥
विस्तारभूमा भूतेशो विश्वगुप्तनुरीश्वरः।
मन्देहरिपुरिन्दुश्च बिन्दुस्सुन्दरविग्रहः ॥ 9 ॥
सामगानप्रियस्साधुस्सत्यसन्धस्सदाशिवः ।
समात्मासन्धिरव्यक्तं साम्बस्सारसवर्धनः ॥ 10 ॥
सूदस्सूक्ष्मस्सूक्ष्मकायस्सूक्ष्मदृक्सुदृगव्ययः ।
रथाङ्गहेतिरम्भोजवर्धनः सर्वसम्मतः ॥ 11 ॥
वज्रभृद्वत्सलो वाग्मी वागीशो वायुवाहनः।
धर्मात्माऽधर्मशत्रुश्च कर्मसाक्षी परन्तपः ॥ 12 ॥
पञ्चाननः पञ्चमूर्त्तिः पञ्चाङ्गी पापभञ्जनः।
पराशरः पुण्यमूर्तिः पुरुहूतानुजः परः ॥ 13 ॥
सनात्सर्वं सहस्सर्वस्सर्वगस्सर्वपोषकः।
सप्ताश्वस्सप्तरज्जुश्च सप्तैधास्सप्तसारथिः ॥ 14 ॥
सप्तप्रियस्सप्तदोग्धा मुञ्जिकेशो मुरान्तकः।
शुकश्शुद्धश्शुभाचारस्सर्वबीजमनायकः ॥ 15 ॥
कर्त्ता विकर्त्ता गहनो कारणं करणं महत्।
अकुण्ठविक्रमश्शौरिर्वैकुण्ठो भगवान्भवः ॥ 16 ॥
भानुर्हंसस्सहस्रांशुस्तपनस्सविता पिता।
जातुकर्णो जयी ज्यायान् मीनाङ्गी सिंहपालकः ॥ 17 ॥
एकोच्चस्सप्तनीचश्च षट्पतिर्मानवल्लभः।
ऋतुस्सुदर्शनः कालः कुञ्जराननपूजितः ॥ 18 ॥
द्विजो द्विजश्शुचिर्धीरः श्रीमान् मूर्तित्रयात्मकः।
शिवंकरः श्रीभूतेशस्सिन्धुरुच्चैश्श्रवा हरिः ॥ 19 ॥
पद्मप्रबोधकः पद्मी पद्मगर्भः प्रभाकरः।
अह्नांप्रभुर्दिनमणिदैतेयकुलमृत्युकृत् ॥ 20 ॥
कला काष्ठा मुहूर्तात्मा दिनरात्रिशरीरवान्।
पद्मापतिः परंधाम परमात्मा परायणम् ॥ 21 ॥
निदानं नित्यमद्वैतं केवलं मुक्तिकारणम्।
सर्वभूतशरीरस्थं चैतन्यं ब्रह्मनिर्गुणम् ॥ 22 ॥

एको नैकः कृतिश्शान्तिर्मतिर्बुद्धिर्धृतिस्स्मृतिः।
मन्त्रो यंत्रं तथाक्षेत्रं क्षेत्रज्ञोऽक्षरसंज्ञिकः ॥ 23 ॥
इन्द्रियाणामधिष्ठाता तत्त्वं तत्पुरुषाग्रणीः।
अमायी मायिनामग्र्यो लोकस्वामी स्वराड्गुरुः ॥ 24 ॥
प्राणदः प्रणवः प्राणो प्राप्तिसाधनमम्बरम्।
जगन्मित्रं पवित्रं च देवानामपि दैवतम् ॥ 25 ॥
सिन्धुनिद्राद्धिरण्याङ्गो सैंहिकेयविशोधितः।
विषुवच्चायनं कान्तिश्चन्द्रोत्पत्त्ययनं ग्रहः ॥ 26 ॥
दिगीशो देववृन्देशो नक्षत्रेशो धनेश्वरः।
सूर्यवर्चास्सूरिराद्यस्सूर्यापतिरुमाधवः ॥ 27 ॥
विभाकरो द्वादशात्मा कपिलः कपिशिक्षकः।
कपितातः कपिः पिङ्गः पंगुकालपिता हरः ॥ 28 ॥
विविक्तस्सागरस्सेतुस्ताम्रस्ताम्ररथो रथी।
मेरुप्रभस्सुमेरुश्च बुधनुन्नरथो भवः ॥ 29 ॥
सहस्रप्रग्रहो धन्वी मेधावी श्रुतिसागरः।
भिषक्पिता भिषक्सारो भैषजं भवरोगहृत् ॥ 30 ॥
जन्मादिश्शास्त्रयोनिश्च विज्ञानं ज्ञानमेव च।
ज्ञाता ज्ञेयं स्फुटस्फूर्तिरनीशो नाहविर्नृपः ॥ 31 ॥
अविच्छिन्नान्वयश्शास्ता रामो राजीवलोचनः।
गायत्रीवल्लभः प्रांशुर्गेयो गाता गुणार्णवः ॥ 32 ॥
सत्यमेधास्समाम्नायस्सन्धाता कश्यपात्मजः।
सर्वधर्ममयस्साक्षी चित्कूटनिलयोऽनलः ॥ 33 ॥
चिरन्तनश्चिदात्मा च वैशाखशिखिवाहनः।
अश्वत्थः कुशनाभश्च साम्राज्यं जगदीश्वरः ॥ 34 ॥
दीप्तमूर्तिर्महामूर्तिस्सुतपाः ऋतुभुक्पशुः।
यज्वा जाज्वल्यदेहश्च शत्रुमण्डलखण्डनः ॥ 35 ॥
शरारुध्वंसकश्शास्ता शास्त्रयोनिर्निरञ्जनः।
अनिन्द्यो निन्द्यविध्वंसी विश्वामित्रवरप्रदः ॥ 36 ॥
विध्यर्थबोधको भानुर्विन्ध्यवीथी प्लवङ्गमः।
तत्पदार्थोऽहंपदार्थस्तत्त्वमस्यर्थबोधकः ॥ 37 ॥
त एते त्वमहं देवयक्षरक्षोभयङ्करः।
मृत्युञ्जयः पाकभेदी सुषुम्नातालशोभितः ॥ 38 ॥
सहस्राराम्बुजारूढो कर्णिकामध्यमण्डपः।
गुहाशयश्शिवस्स्थाणुर्गोप्ता गणपतिर्गिरिः ॥ 39 ॥

गोमूर्तिस्सर्वदेवात्मा सर्वसन्ध्याप्रवर्तकः।
जेतिष्मानिन्द्रशर्मा च चिदानन्दो दिगम्बरः ॥ 40 ॥
किरीटी कवची खड्गी शङ्खी शार्ङ्गी च पद्मकः।
वेत्री शूली निषङ्गी च तापनस्तपतां वरः ॥ 41 ॥
शङ्करश्चारुसर्वाङ्गस्सर्वबन्धविमोचकः।
महात्मा चारुसर्वाङ्गस्सर्वभूषणभूषितः ॥ 42 ॥
भक्तेप्सितार्थसन्धानकल्पवृक्षः ककुत्पतिः।
बन्धूककुसुमप्रख्यस्सर्वशस्त्रभृतां वरः ॥ 43 ॥
ब्रह्मण्यो ब्राह्मणो ब्राह्मी राजर्षिरमितप्रभः।
सनातनवरस्सोमस्सर्वतत्त्वावलम्बनः ॥ 44 ॥
महापातालसम्मान्यो मानिनामग्रणीर्महान्।
सिद्धार्थकृत्सिद्धगुह्यः सिद्धानामुत्तमागतिः ॥ 45 ॥
लोकनाथो विभानाथो माठरो मधुवल्लभः।
तीक्ष्णांशुस्तीर्थगर्भश्च श्वेतलोहितवाहनः ॥ 46 ॥
कर्म कर्मविदां नेता सदावरणमण्डलः।
सहस्रगुरनन्तात्मा विशिष्टश्शिष्टपोषकः ॥ 47 ॥
दिव्यमूर्तिर्देवसिंहो दिविषत्प्रवरो दमः।
विशालाक्षश्श्रीमूर्तिर्विश्वभ्मरविभावसुः ॥ 48 ॥
मूर्धन्वदिष्टदायी च कृतिचिन्तानिवर्तकः।
गन्धर्वगणगोप्ता च वस्वादिगणवन्दितः ॥ 49 ॥
ग्रहपो ग्रहनेता च ग्रन्थिबन्धविभञ्जनः।
ग्रसिष्णुर्ग्रहगोप्ता च ग्राही ग्राह्यशरीरभाः ॥ 50 ॥
तपस्वी तापसश्शोच्यो तरणिर्द्युमणिर्मणिः।
चिन्तामणिर्दिनमणिर्ज्योतिर्मणिरजेश्वरः ॥ 51 ॥
छन्दोमयश्शास्त्रमयस्सर्वकान्तिखनिर्मनुः।
अनूरुसारथिः पीलो पैप्पलो त्रिविलोचनः ॥ 52 ॥
त्रिशिखी ब्राह्मणमयो ज्योतिस्सिद्धान्तबोधनः।
त्रिनामा त्रिशरीरश्च त्रिकाण्डश्चण्डदीधितिः ॥ 53 ॥
मुक्तिद्वारं मुनिवरो महोरस्को महामनाः।
अन्नपात्रप्रदाता च विष्णुचिन्तापरः पुमान् ॥ 54 ॥
आपदामपहर्त्ता च रोगकाण्डदवानलः।
निवृत्तात्मा समावृत्तो चक्षुरिन्द्रियदेवता ॥ 55 ॥

तपोमयस्तप्ततनुः पूषा पूषादिवन्दितः ।
सर्वजन्तुशरण्यश्च बह्वृचो बहुदायकः ॥ 56 ॥
कृष्णात्मा कमनीयश्च सर्ववेदविभागकृत् ।
कर्णो विकर्णः कान्तश्च बहुभोजी बहुप्रियः ॥ 57 ॥
दक्षिणो दक्षिणामूर्तिर्दयावान् दम्भवर्जितः ।
सद्गतिः कोशगः कोशी सर्वसिद्धिपरायणः ॥ 58 ॥
शिवदेहश्शिवात्मा च शिवदेहश्शिवप्रदः ।
वाराणसीवासपरो हंसतीर्थप्रवर्तकः ॥ 59 ॥
सूर्यलिङ्गप्रतिष्ठाता सोमकान्तिर्विवर्धनः ।
सुग्रहस्सुखदस्सूक्ष्मस्खरस्स्वारित एवच ॥ 60 ॥
संख्यावान्सर्वसंसारी सूरिः परपुरञ्जयः ।
कृतागमः कृतविधिः कृतशास्त्रः कृताह्निकः ॥ 61 ॥
राजा राजद्वितीयश्च ग्रहराजः प्रमाणवित् ।
बाडबो बाडवामूलं हव्यं कव्यं पितृप्रियः ॥ 62 ॥
समाधिवेत्ता सारार्थस्सारदृक्शारदाप्रियः ।
रक्तपुष्पार्चनीयश्च रक्तगन्धाक्षतप्रियः ॥ 63 ॥
परार्ध्यार्थ्यः पूर्णकान्तिः कृततत्त्वार्थनिर्णयः ।
निखिलप्राणनिलयो नित्यमेरुप्रदक्षिणः ॥ 64 ॥
पूर्णः पूर्णयिता पूज्यः परमान्नकृतादरः ।
परहिंसादिरहितो गुरुमूर्तिर्गतिप्रदः ॥ 65 ॥
गोपालो लोकपालश्च सर्वस्सर्वस्वमच्युतः ।
मरुदीशो मरुच्चक्षुर्मित्रो हृत्तापनाशकः ॥ 66 ॥
हृद्रोगहारी कौमारी हरिमादिविनाशकः ।
उत्तरां दिवमारूढो हारिद्रः कोकनायकः ॥ 67 ॥
ह्रीं बीजमध्यनिलयो नवनाथविवर्धनः ।
योगिनीवन्द्यचरणो बलिग्रहणतत्परः ॥ 68 ॥
नित्यकल्याणनिलयो कल्याणाचलसेवकः ।
कल्याणदानः कल्यात्माऽत्युग्रो रिपुभयङ्करः ॥ 69 ॥
भूतिकृद्भूतिभृद्भूतिर्भूतभावनपूर्वजः ।
त्रियुगश्च त्रिपृष्ठश्च त्रिपान्मूर्तित्रयात्मकः ॥ 70 ॥
सर्वविघ्नविनाशी च सर्वबन्धविमोचकः ।
त्रिशिरास्त्रिप्रलम्बश्च त्रिदंष्ट्रस्त्रिचतुर्गतिः ॥ 71 ॥

कुजमित्रं पितृपतिः पितृकारक एव च।
शुभाङ्गो लोकसारङ्गस्सारङ्गोऽरुणसारथिः ॥ 72 ॥
पुण्यश्लोकः पुण्यदायी पुण्यकारी पुरातनः।
विजयो विष्णुराजश्च विष्णुरातो भवादिहृत् ॥ 73 ॥
वदान्यश्च विराड्रूपी विद्यानाथो विधिर्विधुः।
प्रशस्तगुणसिन्धुश्च बन्धुर्वेदान्तवेदिनाम् ॥ 74 ॥
तत्त्वार्थमाता ताम्राश्वस्तरुणस्तडिदुज्ज्वलः।
तीर्णदुःखस्तीव्रवेगो चन्दनद्युतिरात्मवान् ॥ 75 ॥
अर्कपर्णस्नानतोषी वीतिहोत्रादिदैवतः।
एकाक्षश्चैकचक्रश्च स्वतेजोभास्स्वयंप्रभः ॥ 76 ॥
परागतिः पिण्डजानामण्डजानां भयावहः।
क्रूरव्रतः क्रूरकल्पो तामसः परवीरहा ॥ 77 ॥
षट्पल्लवविधानज्ञष्षट्पल्लववरप्रदः ।
श्रुतिपादपसञ्चारी कोकिलः कमलाश्रयः ॥ 78 ॥
कुष्ठव्याधिविनाशी च दुष्टपीडानिवर्हणः।
धृतपद्मद्वयो योद्धा तेजोमण्डलमध्यगः ॥ 79 ॥
सर्वाधिव्याधिशमनो सर्वतापालितापनः।
सर्वसाक्षी सदुदयः स्वाष्टाक्षर्यधिदेवता ॥ 80 ॥
स्फोटादिदोषहारी च गुल्मदुःखप्रभञ्जनः।
योजनार्बुदसञ्चारी सालोक्यादिप्रदः पिता ॥ 81 ॥
खेटः कृपीटदायी च नग्नो नलिनवल्लभः।
कुन्तीप्रसन्नः कौबेरः श्रीवक्षाः श्रीनिकेतनः ॥ 82 ॥
अरुणोऽरुणकेतुश्च युद्धप्रेतगतिप्रदः।
संज्ञामनोनुकूलश्च महेन्द्रकृतपूजनः ॥ 83 ॥
गरुडाग्रजसूतश्च सस्यालिसुहृदूर्मिकृत्।
गोधूमधान्यनाथश्च वर्तुलाकारमण्डलः ॥ 84 ॥
रुद्रप्रत्यधिदेवश्च हस्तनक्षत्रनायकः।
गुञ्जापुञ्जप्रतीकाशः पवित्रीकृतवृत्रहा ॥ 85 ॥
कालिंदीजनकश्चैव गोब्राह्मणहिते रतः।
इन्द्रो वृद्धश्रवाः पूषा विश्ववेदाः प्रजापतिः ॥ 86 ॥
अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च वाय्वश्वो रश्मिपालकः।
मरीच्यात्मा भुवनसूरद्रोही पुत्रदायकः ॥ 87 ॥

महानाम्नीव्रतहितो महामानोपराक्षसः।
आदित्योऽदितिदेवश्च दितिदेवो दिवस्पतिः॥ 88॥
व्योमसंदृग्विमानस्थो सुमृडीकस्सरोविभुः।
स्मृतिप्रत्यक्षमैतिह्यमनुमानं विधायकः॥ 89॥
सतैस्सर्वैस्समाविष्टोऽणुर्महानधिवत्सरः।
पटरो विक्लिधः पिंगः प्रदर्शी चोपदर्शकः॥ 90॥
नानामुखश्चैव शीर्षो ऋतुलक्षणलक्षितः।
शुक्लात्मा दक्षिणः पक्षः कृष्णात्मा वामपक्षकः॥ 91॥
अहोद्यौर्विषुरूपी च विश्वावनविशेषवित्।
अपशुश्चापशुघ्नश्च नपशुः पशुपालकः॥ 92॥
संवत्सरप्रियतमः प्रत्यक्षज्ञेयमण्डलः।
षडुद्यमस्सप्तयात्रो विनादी चाभिधावकः॥ 93॥
षष्टिवल्गस्सार्ष्टिकश्च प्रैषकृत्प्रथमस्स्मृतः।
अघोराक्षस्सदोनादी वाक्प्रयोजक एव च॥ 94॥
संवत्सरीणः कर्मफलपद्मापीत इवोज्ज्वलः।
कनकोज्ज्वलवासाश्च अहताम्बर एव च॥ 95॥
कपर्दी विशिखश्चैव वातवान्मरुतां मुखम्।
क्षपणो योत्स्यमानश्च हेमचक्षुरकोपनः॥ 96॥
अपध्वस्तश्च सन्नद्धस्सहदृग्जीवनप्रदः।
न देवो न मनुष्यश्च नाग्निर्नेन्द्रो न मारुतः॥ 97॥
नोपमो रुद्रधन्वा च कर्मब्रह्मप्रपञ्चकः।
ऋतुभिस्सन्नुतस्स्वामी सर्वकामधुगव्ययः॥ 98॥
आरोग्यस्थानभा भ्राजः पटरस्थानभा अपि।
सप्तसूर्यार्पितश्चैव कश्यपो मेर्वमोचकः॥ 99॥
वात्स्यायनः पञ्चकर्णो सप्तहोता च ऋक्पतिः।
तस्थिवाञ्जगदात्मा च वैशम्पायन एव च॥ 100॥
अनम्भा अम्भसां मूलमग्निवायुपरायणम्।
कश्यपस्यातिथिश्चैव सिद्धागमन एव च॥ 101॥
नम उक्तिप्रियः पुण्यो अजिराप्रभुरेव च।
नर्यापाः पंक्तिराधाश्च विसर्पी नीललोहितः॥ 102॥
नीलार्चिः पीतकार्चिश्च वायुरेकादशात्मकः।
वासुकिर्वैद्युतश्चैव रजतः परुषादिकः॥ 103॥

नासत्यजनकश्चैव शाम्बरश्चापपूरुषः।
सुब्रह्मण्यश्च सूरीन्द्रो गौतमः कौशिकीपतिः॥ 104॥
अग्निश्च जातवेदाश्च सहोजा अजिराप्रभुः।
कः किं कं तत्सत्यमन्नममृतो जीव एव च॥ 105॥
व्ययजन्मानुजन्मोऽग्रस्सप्तसप्तकदृष्टिभाक् ।
भानुर्विधुश्च भौमश्च चन्द्रसूनुश्च गीष्पतिः॥ 106॥
उशना सूर्यसूनुश्च तमः केतुस्तथाद्रिभृत्।
अर्धप्रहारो गुलिको यमकण्टक एव च॥ 107॥
कारको मारकश्चापि पोषकस्तोषकस्तथा।
पश्चाल्लत्तः पुरोलत्तः पार्श्वलत्तस्तथैव च॥ 108॥
आकाशग्रहसंसेव्यो धूमकेतुविजृम्भणः।
भूकम्पनादिहेतुश्च रक्तवृष्टिविधायकः॥ 109॥
गर्जन् पर्जन्यरूपी च दुर्जयो दुरतिक्रमः।
निर्जराराध्यचरणो जरामरणवर्जितः॥ 110॥
वियद्गमनजंघालो वीतिहोत्रसमप्रभः।
विरिञ्चिगर्भसम्भूतो विषव्यालविनाशकृत्॥ 111॥
श्रीपुष्टिकीर्तिसन्दायी नमतां नमनप्रियः।
वेदाध्ययनसम्पन्नो वेदान्तेषु च निष्ठितः॥ 112॥
शब्दशास्त्रप्रणेता च शब्दब्रह्ममयः परः।
अर्थब्रह्ममयोऽर्थार्थी स्वार्थिनामर्थदायकः॥ 113॥
जपयज्ञस्तपोयज्ञो दानयज्ञस्तथैव च।
स्वाध्याययज्ञो धर्मज्ञो नीतिज्ञो विज्ञ एव च॥ 114॥
गुहाशायी गुहाभेदी साक्षान्मन्मथमन्मथः।
मञ्जुदेहो मञ्जुकान्तिर्महिमातिशयोज्ज्वलः॥ 115॥
मित्रविन्दावन्द्यपादो मुनिवृन्दावने हितः।
ब्रह्मचारी सुमेधाश्च ऊर्ध्वरेतास्तपोमयः॥ 116॥
ऐंकारनिलयो वाग्मी वागर्थप्रद एव च।
ह्रींकारनिलयो मायी इन्द्रजालादितत्त्ववित्॥ 117॥
श्रींकारनिलयश्श्रीमान् धनदो धनवर्धनः।
श्रीचक्रराजनिलयः श्रीदेवीकर्णभूषणम्॥ 118॥
क्लींकारमध्यनिलयः कामराजवशंकरः।
सौश्शक्तिसहितो ज्ञानदानदक्षः प्रकाशकः॥ 119॥

परमात्मान्तरात्मा च जीवात्मा च नियामकः।
हृदयग्रन्थिभेत्ता च सर्वसंशयनाशनः ॥ 120 ॥
ब्रह्मव्याख्याननिपुणो यज्ञदीक्षाधुरन्धरः।
दौर्भाग्यतूलवातूलो जराध्वान्तनिवर्तकः ॥ 121 ॥
द्वैतमोहविनाशी च भेदवादिविभेदनः।
वीरभद्रमतध्वंसी वीराराध्यनिबर्हणः ॥ 122 ॥
कापालिमतकोपी च मीमांसान्यायतत्परः।
कार्तान्तिकवरस्सर्वकार्तान्तिकपरायणः ॥ 123 ॥
जङ्गमाजङ्गममयो जानकीपूजितः पुरा।
इक्ष्वाकुवंशनाथश्च इन्दिरास्थानसुन्दरः ॥ 124 ॥
विद्याविनयविज्ञान त्रयीताण्डवमण्डपः।
रामचन्द्रकुलाम्भोधिः कामिनीकामदायकः ॥ 125 ॥
सङ्गीतशास्त्रनिपुणः स्वरविद्याप्रवर्तकः।
राजग्रहोऽधिकारी च राजराजेश्वरीप्रियः ॥ 126 ॥
राज्यं भौज्यं च साम्राज्यं वैराज्यं राज्यमेव च।
गौः पञ्चगव्यं शुद्धात्मा चान्द्रायणफलप्रदः ॥ 127 ॥
कृच्छ्रादिफलदायी च दायिद्र्यभयनाशनः।
दुःखार्णवोत्तारकश्च दुरितव्रातखण्डनः ॥ 128 ॥
ब्रह्महत्यादिविध्वंसी भ्रूणहत्यानिबर्हणः।
गुरुद्रोहादिशमनो मातृगामिवधोद्यतः ॥ 129 ॥
पञ्चास्त्रशस्त्रमेघालिझंझावातो झषादिकः।
चित्रगुर्दानशौण्डश्च सिंहसंहननो युवा ॥ 130 ॥
वैधव्यबाधाशमनो विधवानां गतिप्रदः।
रजोदोषविनाशी च कृतपक्वान्नगर्हणः ॥ 131 ॥
पट्टाभिषिक्तभक्तालिर्दुष्टमत्तेभकेसरी ।
अनर्गलगतिर्गूढो गोमतीतीरपुण्यकृत् ॥ 132 ॥
जरायुदोषहारी च पूर्णायुर्योगकारकः।
भक्ताब्जपूर्णचन्द्रश्च धर्ममार्गप्रवर्तकः ॥ 133 ॥
सौवर्गसुखहेतुश्च निरयध्वंसदीक्षितः।
भ्रमन्मण्डलसंस्थानो भ्रान्तिपित्तादिरोगहृत् ॥ 134 ॥
मेहादिरोगशमनो पाण्डुक्षयविनाशनः।
पापवेतालमंत्रज्ञो पापकृज्जनदुर्लभः ॥ 135 ॥

ज्वरादिदोषदूरश्च विज्वरीकृतभूसुरः ।
मोक्षनिश्रेणिकासाक्षी दाक्षायण्यादिसेवकः ॥ 136 ॥
भावुको भद्रकरुणमश्विनीपुष्करोज्ज्वलः ।
प्रशस्तवान्निस्तुलन प्रबन्धशतकल्पनः ॥ 137 ॥
भूनेता भूधरो भोगी भाग्यदायी भवप्रियः ।
कर्मन्दी वललः क्लीबः पशुपालोऽश्वपालकः ॥ 138 ॥
शनिपीडाविनाशी च कृत्यादोषनिबर्हणः ।
आभिचारिकविध्वंसी गदावनदवानलः ॥ 139 ॥
जपपूजार्चनरतो नारायणपदं परम् ।
पापपाषाणदलनटङ्कीकृतकरावलिः ॥ 140 ॥
मोक्षलक्ष्मीकवाटश्च मातृकावर्णमण्डनः ।
अकारादिक्षकारान्तवर्णमालाविभूषणः ॥ 141 ॥
अनुस्वारादिसंख्यात्मा स्वरो व्यञ्जन एव च ।
सर्वार्थदस्सर्वकर्मसर्वकार्यप्रकाशकः ॥ 142 ॥
पञ्चविंशतितत्त्वस्थः पञ्चब्रह्मसमुद्भवः ।
पारमार्थिकसन्दायी पंग्वादिगतिदायकः ॥ 143 ॥
सफलीकृतपूजार्थो विफलीकृतदुष्कृतिः ।
श्रुतिस्मृतिसमाम्नातस्मार्तकर्मप्रकाशकः ॥ 144 ॥
यज्ञोपवीतधारी च याज्ञवल्क्यादिवन्दितः ।
सुषुम्नायोगमध्यस्थो लम्बिकायोगसाधनः ॥ 145 ॥
सालम्बनोद्दीपनादिक्रियाबीजं महामनुः ।
कल्पातिशायिसङ्कल्पो विकल्पविधिवर्जितः ॥ 146 ॥
अनल्पमूर्तिरश्वात्मा स्वात्मानन्दविधायकः ।
आत्मानात्मविवेकज्ञो निरावरणबोधनः ॥ 147 ॥
निदानभूतस्तत्त्वानां नित्यकल्याणसुन्दरः ।
शान्तरक्षणनिर्निद्रः श्रुतिस्मृतिशुभद्रुमः ॥ 148 ॥
आलापीकृतवेदाङ्गो मालालंकृतकन्धरः ।
रुद्राक्षकङ्कणलसत्करो रुद्रजपप्रियः ॥ 149 ॥
सदाशिवपरब्रह्मस्थानं श्रीशम्भुविग्रहः ।
मूलाधाराम्बुजारूढो दहराकाशमध्यगः ॥ 150 ॥
सहस्राराम्बुजारूढो ज्ञानडोलाविलासवान् ।
वेलोल्लङ्घनसामर्थ्यो वेत्ता निर्वृतिदायकः ॥ 151 ॥

सुरभूसुरदरुत्तार्घा शुद्धाम्बुग्रहणे रतः।
ब्रह्मवर्चस्वितामूलं ब्रह्मश्रीसूर्यविग्रहः ॥ 152 ॥

फलश्रुति

इति नामानि गौणानि भास्करस्य महात्मनः।
कानिचिद्वर्णितान्यत्र देवस्यानन्तरूपिण: ॥ 153 ॥
सूर्यवर्चः कृतार्थोऽसि त्वमद्य नहि संशय:।
दिव्यानामपि यन्नाम्नां सहस्रमनुकीर्तितम् ॥ 154 ॥
एतस्य श्रवणादेव कीर्तनाज्जीवकोटयः।
तरन्ति दुस्तरं घोरं संसारं नात्र संशयः ॥ 155 ॥
यश्शृणोति सदा नाम्नां सहस्रं भास्करस्य च।
विद्याकामो लभेद्विद्यामर्थार्थी सार्थको भवेत् ॥ 156 ॥
अनपत्यो लभेत्पुत्रमराजा राज्यमाप्नुयात्।
ग्रहपीडा विनश्यन्ति नश्यन्ति ब्रह्मराक्षसा: ॥ 157 ॥
आरोग्यमाप्नुयाद्रोगी कामी कामानवाप्नुयात्।
किमत्र बहुनोक्तेन सर्वसिद्धिर्भविष्यति ॥ 158 ॥
धर्मार्थकाममोक्षाणां साधनं सर्वसम्मतम्।
श्रुतिस्मृतिपुराणादिसारार्थकृतनिर्णयम् ॥ 159 ॥
नाम्नां सहस्रं यो भकया पठेन्नियतमानसः।
सिध्यन्ति सर्वधर्मार्थास्तस्य नैवात्र संशयः ॥ 160 ॥

विश्वासुरुवाच—

नारायण नमस्तेऽस्तु भानुमण्डलमध्यगः।
कर्मणामपि धर्माणां साक्षीत्वं ब्रह्मनिर्मलम् ॥ 161 ॥
अनन्तोऽनन्तनामा च श्रीमान् लोकत्रयेश्वरः।
विभूतिः केन वा ज्ञेया ज्योतिषामयनस्य च ॥ 162 ॥

गन्धर्वा ऊचुः—

सूर्यआत्मास्य जगतस्तस्थुषश्च त्वमेव हि।
त्वामृते नहि पश्यामो जन्तूनां शरणं कलौ ॥ 163 ॥

बालखिल्या ऊचुः—

यः कर्मसाक्षी विदुषां वरेण्यं भर्गश्च सूते सविता जगच्च।
यो वृष्टिदायी तपनश्च पुष्टिदस्तमेव देवं गतिमामनाम ॥ 164 ॥

वैखानसा ऊचुः—

कलाश्चेन्दोः कलास्सर्वाः कलाभिश्च प्रपञ्चिताः।
तमेव कलयामोऽद्य चक्षुषो रतिदैवतम्॥ 165॥

वैष्णवा ऊचुः—

नारायणाश्रयो मर्त्यो नारायणपरायणः।
सर्वत्र विजयी भूयात्स एव सविता स्वयम्॥ 166॥

रुद्रगणा ऊचुः—

अष्टमूर्तेरियं मूर्तिरेका दीप्तिमयी यतः।
एनं भजाम लोकेशं भानुमण्डलमध्यगम्॥ 167॥

श्रीसूत उवाच—

बृहस्पतिस्सुराचार्यः कृपया परया मुदा।
सूर्यवर्चसमित्युक्त्वा विररामोमिति स्वयम्॥ 168॥
व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानहमेतन्महर्षयः! ।
भवन्तस्सर्वधर्मोर्थसिद्ध्यै नित्यं पठन्तिवदम्॥169॥

इस सहस्रनाम स्तोत्र के एक सौ इक्यावन श्लोकों में तो भगवान भास्कर के 1020 पवित्र नामों का संकलन है और श्लोक संख्या 152 से 169 तक इसकी फलश्रुति अर्थात् इसके नियमित पाठ से होने वाले लाभों का वर्णन है।

आगामी अध्याय में भगवान सूर्यदेवजी के इन सभी नामों को इसी क्रम में हिन्दी में दिया जा रहा है। संस्कृत का कम ज्ञान रखने वाले आराधक-उपासक तो इस सहस्रनाम स्तोत्र के स्थान पर आगामी अध्याय में संकलित नामों का जप करें ही, आप संस्कृत के इन श्लोकों को कण्ठस्थ करते समय भी उन सभी नामों को याद कर लें, जिससे इन श्लोकों का स्तवन करते समय आप श्लोक में आने वाले नामों का मन-ही-मन चिन्तन भी करते रह सकें। वास्तव में यह चिन्तन ही सहस्रनाम स्तोत्र अथवा अन्य किसी भी स्तोत्र के स्तवन का मूलाधार है, बिना समझे रटकर दोहराते रहना तो एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसका पुण्यफल नगण्य ही प्राप्त हो पाता है।

॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे सूर्यसहस्रनामस्तोत्रं संपूर्णम्॥

❑❑

नमस्कार सहित सहस्त्रनामावली

प्राचीनकाल में तो हमारे देश में सभी व्यक्ति देवभाषा संस्कृत में ही पठन-पाठन एवं वार्तालाप करते थे। यही कारण है कि हमारे सभी प्राचीन ग्रंथ और शास्त्र संस्कृत में ही लिखे गए थे। आज भी कर्मकाण्ड को प्राधिमान्यता देने वाले अधिकांश व्यक्ति आराधना-उपासना करते समय संस्कृत के स्तोत्रों, कवचों, स्तुतियों और मंत्रों के स्तवन को प्राधिमान्यता देते हैं। परन्तु यह मात्र उनके मन का भ्रम है। देवता सर्वव्यापी होते हैं अत: वे सभी भाषाएं जानते और समझते हैं। यही नहीं, भगवान सूर्यदेवजी तो परब्रह्म का साक्षात स्वरूप हैं, अन्य सभी वस्तुओं के समान ही सभी भाषाओं के रचयिता भी तो आप ही हैं। यही कारण है कि आप संस्कृत के स्तोत्रों का स्तवन करें अथवा हिन्दी में या फिर अपनी मातृभाषा में स्तुतियों, विनतियों, आरतियों और प्रार्थनाओं का गायन अथवा मन-ही-मन स्तवन, आपको समान फलों की प्राप्ति होगी। सच्चे हृदय से की गई मूक-पुकार पर भी भगवान नंगे पांवों दौड़े चले आते हैं, जबकि हजारों रुपये पण्डाल और सजावट पर व्यय करके पूरी रात्रि माइक पर गायन-वादन करने वालों को उनकी कितनी कृपाएं मिलती हैं, यह भगवान ही जाने। जहां तक गत अध्याय में संकलित सूर्य सहस्त्रनाम के अनुवाद के रूप में प्रस्तुत एक हजार बीस नामों की इस शृंखला का प्रश्न है, इसका महत्व तो और भी अधिक है। इस शृंखला में सूर्यदेवजी के प्रत्येक नाम के पूर्व परब्रह्म का प्रतीक ॐ तो लगाया ही गया है, प्रत्येक नाम को नमस्कार भी किया गया है।

1. ॐ आदित्याय नमः
2. ॐ आदिदेवाय नमः
3. ॐ भास्कराय नमः
4. ॐ भवनाशनाय नमः
5. ॐ विश्वमूर्तये नमः
6. ॐ विश्वनेत्रे नमः
7. ॐ चिन्मूर्तये नमः
8. ॐ चिंतितार्थदाय नमः
9. ॐ सद्योजाताय नमः
10. ॐ वामदेवाय नमः
11. ॐ सर्वपापविनाशकाय नमः
12. ॐ वेद्याय नमः
13. ॐ वैद्याय नमः
14. ॐ सदायोगिने नमः
15. ॐ विश्वकर्मणे नमः
16. ॐ विभावसवे नमः

17. ॐ विरिंचये नमः
18. ॐ विश्रुतात्मने नमः
19. ॐ विश्वसर्गप्रवर्तकाय नमः
20. ॐ विद्यात्मने नमः
21. ॐ विषयज्ञाय नमः
22. ॐ विश्वात्मने नमः
23. ॐ विश्वपापघ्ने नमः
24. ॐ विदुषामीश्वराय नमः
25. ॐ विदुषे नमः
26. ॐ विश्वनेत्रे नमः
27. ॐ विशेषविदे नमः
28. ॐ वीरघ्ने नमः
29. ॐ विषमाय नमः
30. ॐ शून्याय नमः
31. ॐ बालखिल्यादिवंदिताय नमः
32. ॐ वामनाय नमः
33. ॐ वरदाय नमः
34. ॐ प्रांशवे नमः
35. ॐ वासुदेवाय नमः
36. ॐ सनातनाय नमः
37. ॐ बालखिल्यपुरोगाय नमः
38. ॐ वारिदाय नमः
39. ॐ वसुमते नमः
40. ॐ वसवे नमः
41. ॐ वरेण्याय नमः
42. ॐ वासुदेवाय नमः
43. ॐ वसुरेतसे नमः
44. ॐ वसुप्रदाय नमः
45. ॐ वायवे नमः
46. ॐ वाचस्पतये नमः
47. ॐ विश्वस्मै नमः
48. ॐ विष्णवे नमः
49. ॐ विश्वामरेश्वराय नमः
50. ॐ ओंकाराय नमः
51. ॐ वषट्काराय नमः
52. ॐ सोमग्रहपुरोगमाय नमः
53. ॐ ग्रहनक्षत्रमालिने नमः
54. ॐ शिंशुमारशरीरवते नमः
55. ॐ शरण्याय नमः
56. ॐ शङ्कराय नमः
57. ॐ शम्भवे नमः
58. ॐ कलात्मने नमः
59. ॐ कान्तिवर्धनाय नमः
60. ॐ कामदेवाय नमः
61. ॐ कामहर्त्रे नमः
62. ॐ विराजे नमः
63. ॐ वीरासनस्थिताय नमः
64. ॐ विस्तारभूम्रे नमः
65. ॐ भूतेशाय नमः
66. ॐ विश्वगुप्तऽनवे नमः
67. ॐ ईश्वराय नमः
68. ॐ मंदेहरिपवे नमः
69. ॐ इंदवे नमः
70. ॐ बिंदवे नमः
71. ॐ सुन्दरविग्रहाय नमः
72. ॐ सामगानप्रियाय नमः
73. ॐ साधवे नमः
74. ॐ सत्यसन्धाय नमः
75. ॐ सदाशिवाय नमः
76. ॐ समात्मने नमः
77. ॐ संधये नमः
78. ॐ अव्यक्ताय नमः
79. ॐ साम्बाय नमः
80. ॐ सारसवर्धनाय नमः
81. ॐ सूदाय नमः

82. ॐ सूक्ष्माय नम:
83. ॐ सूक्ष्मकायाय नम:
84. ॐ सूक्ष्मदृशे नम:
85. ॐ सुदृशे नम:
86. ॐ अव्ययाय नम:
87. ॐ रथाङ्गहेतये नम:
88. ॐ अम्भोजवर्धनाय नम:
89. ॐ सर्वसम्मताय नम:
90. ॐ वज्रभृते नम:
91. ॐ वत्सलाय नम:
92. ॐ वाग्मिने नम:
93. ॐ वागीशाय नम:
94. ॐ वायुवाहनाय नम:
95. ॐ धर्मात्मने नम:
96. ॐ धर्मशत्रवे नम:
97. ॐ कर्मसाक्षिणे नम:
98. ॐ परंतपाय नम:
99. ॐ पञ्चाननाय नम:
100. ॐ पञ्चमूर्तये नम:
101. ॐ पञ्चांगिने नम:
102. ॐ पापभञ्जनाय नम:
103. ॐ पराशराय नम:
104. ॐ पुण्यमूर्तये नम:
105. ॐ पुरुहूतानुजाय नम:
106. ॐ पराय नम:
107. ॐ सनाते नम:
108. ॐ सर्वसहाय नम:
109. ॐ सर्वस्मै नम:
110. ॐ सर्वगाय नम:
111. ॐ सर्वपोषकाय नम:
112. ॐ सप्ताश्वाय नम:
113. ॐ सप्तरज्जवे नम:
114. ॐ सप्तैधसे नम:
115. ॐ सप्तसारथये नम:
116. ॐ सप्तप्रियाय नम:
117. ॐ सप्तदोग्ध्रे नम:
118. ॐ मुञ्जिकेशाय नम:
119. ॐ मुरान्तकाय नम:
120. ॐ शुकाय नम:
121. ॐ शुद्धाय नम:
122. ॐ शुभाचाराय नम:
123. ॐ सर्वबीजाय नम:
124. ॐ अनामयकाय नम:
125. ॐ कर्त्रे नम:
126. ॐ विकर्त्रे नम:
127. ॐ गहनाय नम:
128. ॐ कारणाय नम:
129. ॐ करणाय नम:
130. ॐ महते नम:
131. ॐ अकुण्ठविक्रमाय नम:
132. ॐ शैरये नम:
133. ॐ वैकुण्ठाय नम:
134. ॐ भगवते नम:
135. ॐ भवाय नम:
136. ॐ भानवे नम:
137. ॐ हंसाय नम:
138. ॐ सहस्रांशवे नम:
139. ॐ तपनाय नम:
140. ॐ सवित्रे नम:
141. ॐ पित्रे नम:
142. ॐ जातुकर्णाय नम:
143. ॐ जयिने नम:
144. ॐ ज्यायसे नम:
145. ॐ मीनांगिने नम:
146. ॐ सिंहपालकाय नम:
147. ॐ एकोच्चाय नम:

148. ॐ सप्तनीचाय नमः
149. ॐ षट्पतये नमः
150. ॐ मासवल्लभाय नमः
151. ॐ ऋतवे नमः
152. ॐ सुदर्शनाय नमः
153. ॐ कालाय नमः
154. ॐ कुञ्जराननपूजिताय नमः
155. ॐ द्विजाय नमः
156. ॐ अद्विजाय नमः
157. ॐ शुचये नमः
158. ॐ धीराय नमः
159. ॐ श्रीमते नमः
160. ॐ मूर्तित्रयात्मकाय नमः
161. ॐ शिवङ्कराय नमः
162. ॐ श्रीभूतेशाय नमः
163. ॐ सिन्धवे नमः
164. ॐ उच्चैश्श्रवसे नमः
165. ॐ हरये नमः
166. ॐ पद्मप्रबोधकाय नमः
167. ॐ पद्मिने नमः
168. ॐ पद्मगर्भाय नमः
169. ॐ प्रभाकराय नमः
170. ॐ अह्नप्रभवे नमः
171. ॐ दिनमणये नमः
172. ॐ दैतेयकुलमृत्युकृते नमः
173. ॐ कलाकाष्ठामुहूर्तात्मने नमः
174. ॐ दिनरात्रिशरीरवते नमः
175. ॐ पद्मापतये नमः
176. ॐ परधाम्ने नमः
177. ॐ परमात्मने नमः
178. ॐ परायणाय नमः
179. ॐ निदानाय नमः
180. ॐ नित्याय नमः
181. ॐ अद्वैताय नमः
182. ॐ केवलाय नमः
183. ॐ मुक्तिकारणाय नमः
184. ॐ सर्वभूतशरीरस्थाय नमः
185. ॐ चैतन्याय नमः
186. ॐ ब्रह्मणे नमः
187. ॐ निर्गुणाय नमः
188. ॐ एकाय नमः, एकस्मै नमः
189. ॐ नैकाय नमः, नैकस्मै नमः
190. ॐ कृतये नमः
191. ॐ शान्ताय नमः
192. ॐ मतये नमः
193. ॐ बुद्धये नमः
194. ॐ धृतये नमः
195. ॐ स्मृतये नमः
196. ॐ मन्त्राय नमः
197. ॐ यन्त्राय नमः
198. ॐ क्षेत्राय नमः
199. ॐ क्षेत्रज्ञाय नमः
200. ॐ अक्षरसंज्ञिकाय नमः
201. ॐ इन्द्रियाणामधिष्ठात्रे नमः
202. ॐ तत्त्वाय नमः
203. ॐ तत्पुरुषाग्रण्यै नमः
204. ॐ अमायिने नमः
205. ॐ मायिनामज्ञाय नमः
206. ॐ लोकस्वामिने नमः
207. ॐ स्वराजे नमः
208. ॐ गुरवे नमः
209. ॐ प्राणदाय नमः
210. ॐ प्रणवाय नमः
211. ॐ प्राणाय नमः

212. ॐ प्राप्तिसाधनाय नमः
213. ॐ अम्बराय नमः
214. ॐ जगन्मित्राय नमः
215. ॐ पवित्राय नमः
216. ॐ देवानामपिदैवताय नमः
217. ॐ सिन्धुनिद्राते नमः
218. ॐ हिरण्याङ्गाय नमः
219. ॐ सैंहिकेयविशोधिताय नमः
220. ॐ विषुवते नमः
221. ॐ अयनाय नमः
222. ॐ कान्तये नमः
223. ॐ चन्द्रोत्पत्त्ययनाय नमः
224. ॐ ग्रहाय नमः
225. ॐ दिगीशाय नमः
226. ॐ देववृन्देशाय नमः
227. ॐ नक्षत्रेशाय नमः
228. ॐ धनेश्वराय नमः
229. ॐ सूर्यवर्चसे नमः
230. ॐ सूरये नमः
231. ॐ आद्याय नमः
232. ॐ सूर्यापतये नमः
233. ॐ उमाधवाय नमः
234. ॐ विभाकराय नमः
235. ॐ द्वादशात्मने नमः
236. ॐ कपिलाय नमः
237. ॐ कपिशिक्षकाय नमः
238. ॐ कपितााय नमः
239. ॐ कपये नमः
240. ॐ पिङ्गाय नमः
241. ॐ पंगुकालपित्रे नमः
242. ॐ हराय नमः
243. ॐ विविक्ताय नमः
244. ॐ सागराय नमः
245. ॐ सेतवे नमः
246. ॐ ताम्राय नमः
247. ॐ ताम्ररथाय नमः
248. ॐ रथिने नमः
249. ॐ मेरुप्रभाय नमः
250. ॐ सुमेरवे नमः
251. ॐ बुधनुन्नरथाय नमः
252. ॐ भवाय नमः
253. ॐ सहस्त्रप्रग्रहाय नमः
254. ॐ धन्विने नमः
255. ॐ मेधाविने नमः
256. ॐ श्रुतिसागराय नमः
257. ॐ भिषक्पित्रे नमः
258. ॐ भिषक्साराय नमः
259. ॐ भैषजाय नमः
260. ॐ भवरोगहृते नमः
261. ॐ जन्मादये नमः
262. ॐ शास्त्रयोनये नमः
263. ॐ विज्ञानाय नमः
264. ॐ ज्ञानाय नमः
265. ॐ ज्ञात्रे नमः
266. ॐ ज्ञेयाय नमः
267. ॐ स्फुटाय नमः
268. ॐ स्फूर्तये नमः
269. ॐ अनीशाय नमः
270. ॐ नये नमः
271. ॐ हविषे नमः
272. ॐ नृपाय नमः
273. ॐ अविच्छिन्नान्वयाय नमः
274. ॐ शास्त्रे नमः
275. ॐ रामाय नमः
276. ॐ राजीवलोचनाय नमः

277. ॐ गायत्रीवल्लभाय नमः
278. ॐ प्रांशवे नमः
279. ॐ गेयाय नमः
280. ॐ गात्रे नमः
281. ॐ गुणार्णवाय नमः
282. ॐ सत्यमेधसे नमः
283. ॐ समाम्नायाय नमः
284. ॐ सन्धात्रे नमः
285. ॐ कश्यपात्मजाय नमः
286. ॐ सर्वधर्ममयाय नमः
287. ॐ साक्षिणे नमः
288. ॐ चित्कूटनिलयाय नमः
289. ॐ अनलाय नमः
290. ॐ चिरन्तनाय नमः
291. ॐ चिदात्मने नमः
292. ॐ वैशाखाय नमः
293. ॐ शिखिवाहनाय नमः
294. ॐ अश्वत्थाय नमः
295. ॐ कुशनाभाय नमः
296. ॐ साम्राज्याय नमः
297. ॐ जगदीश्वराय नमः
298. ॐ दीप्तमूर्तये नमः
299. ॐ महामूर्तये नमः
300. ॐ सुतपसे नमः
301. ॐ क्रतुभुजे नमः
302. ॐ पशवे नमः
303. ॐ यज्वने नमः
304. ॐ जाज्वल्यदेहाय नमः
305. ॐ शत्रुमण्डलखण्डनाय नमः
306. ॐ शरारुध्वंसकाय नमः
307. ॐ शास्त्रे नमः
308. ॐ शास्त्रयोनये नमः
309. ॐ निरञ्जनाय नमः
310. ॐ अनिन्द्याय नमः
313. ॐ निन्द्यविध्वंसिने नमः
312. ॐ विश्वामित्रवरप्रदाय नमः
313. ॐ विध्यर्थबोधकाय नमः
314. ॐ भानवे नमः
315. ॐ विन्ध्यवीथीप्लवङ्गमाय नमः
316. ॐ तत्पदार्थाय नमः
317. ॐ अहंपदार्थाय नमः
318. ॐ तत्त्वमस्यर्थबोधकाय नमः
319. ॐ तेभ्यो नमः
320. ॐ एतेभ्यो नमः
321. ॐ तुभ्यं नमः
322. ॐ मह्यं नमः
323. ॐ देवयक्षरक्षोभयङ्कराय नमः
324. ॐ मृत्युञ्जयाय नमः
325. ॐ पाकभेदिने नमः
326. ॐ सुषुम्नानालशोभिताय नमः
327. ॐ सहस्राराम्बुजारूढाय नमः
328. ॐ कर्णिकामध्यमण्डपाय नमः
329. ॐ गुहाशयाय नमः
330. ॐ शिवाय नमः
331. ॐ स्थाणवे नमः
332. ॐ गोप्त्रे नमः
333. ॐ गुणपतये नमः
334. ॐ गिरये नमः
335. ॐ गोमूर्तये नमः

336. ॐ सर्वदेवात्मने नमः
337. ॐ सर्वसन्ध्याप्रवर्तकाय नमः
338. ॐ ज्योतिष्मते नमः
339. ॐ इन्द्रशर्मणे नमः
340. ॐ चिदानन्दाय नमः
341. ॐ दिगम्बराय नमः
342. ॐ किरीटिने नमः
343. ॐ कवचिने नमः
344. ॐ खड्गिने नमः
345. ॐ शङ्खिने नमः
346. ॐ शार्ङ्गिणे नमः
347. ॐ पद्मकाय नमः
348. ॐ वेत्रिणे नमः
349. ॐ शूलिने नमः
350. ॐ निषङ्गिणे नमः
351. ॐ तापनाय नमः
352. ॐ तपतांवराय नमः
353. ॐ शङ्कराय नमः
354. ॐ चारुसर्वाङ्गाय नमः
355. ॐ सर्वबन्धविमोचकाय नमः
356. ॐ महात्मने नमः
357. ॐ चारुसर्वाङ्गाय नमः
358. ॐ सर्वभूषणभूषिताय नमः
359. ॐ भक्तेप्सितार्थ सन्धान नमः
360. ॐ कल्पवृक्षाय नमः
361. ॐ ककुत्पतये नमः
362. ॐ बन्धूककुसुमप्रख्याय नमः
363. ॐ सर्वशास्त्रभृतांवराय नमः
364. ॐ ब्रह्मण्याय नमः
365. ॐ ब्राह्मणे नमः
366. ॐ राजर्षये नमः
367. ॐ अमितप्रभाय नमः
368. ॐ सनातनवराय नमः
369. ॐ सोमाय नमः
370. ॐ सर्वतत्त्वावलम्बनाय नमः
371. ॐ महापातालसम्मान्याय नमः
372. ॐ मानिनामग्रगण्याय नमः
373. ॐ महते नमः
374. ॐ सिद्धार्थकृते नमः
375. ॐ सिद्धगुह्याय नमः
376. ॐ सिद्धानामुत्तमागतये नमः
377. ॐ लोकनाथाय नमः
378. ॐ विभानाथाय नमः
379. ॐ माठराय नमः
380. ॐ मधुवल्लभाय नमः
381. ॐ तीक्ष्णांशवे नमः
382. ॐ तीर्थगर्भाय नमः
383. ॐ श्वेतलोहितवाहनाय नमः
384. ॐ कर्मणे नमः
385. ॐ कर्मविदांनेत्रे नमः
386. ॐ सदावरणमण्डलाय नमः
387. ॐ सहस्त्रगवे नमः
388. ॐ अनन्तात्मने नमः
389. ॐ विशिष्टाय नमः
390. ॐ शिष्टपोषकाय नमः
391. ॐ दिव्यमूर्तये नमः
392. ॐ देवसिंहाय नमः
393. ॐ दिविषत्प्रवराय नमः
394. ॐ दमाय नमः
395. ॐ विशालवक्षसे नमः

396. ॐ श्रीमूर्तये नम:
397. ॐ विश्वम्भरविभावसवे नम:
398. ॐ मूर्धन्वते नम:
399. ॐ इष्टदायिने नम:
400. ॐ कृतिचिन्तानिवर्तकाय नम:
401. ॐ गन्धर्वगणगोप्त्रे नम:
402. ॐ वस्वादिगणवन्दिताय नम:
403. ॐ ग्रहपाय नम:
404. ॐ ग्रहनेत्रे नम:
405. ॐ ग्रन्थिबन्धविभञ्जनाय नम:
406. ॐ ग्रसिष्णवे नम:
407. ॐ ग्रहगोप्त्रे नम:
408. ॐ ग्राहिणे नम:
409. ॐ ग्राह्यशरीरभासे नम:
410. ॐ तपस्विने नम:
411. ॐ तापसाय नम:
412. ॐ शेच्याय नम:
413. ॐ तरणये नम:
414. ॐ द्युमणये नम:
415. ॐ मणये नम:
416. ॐ चिन्तामणये नम:
417. ॐ दिनमणये नम:
418. ॐ ज्योतिर्मणये नम:
419. ॐ अजेश्वराय नम:
420. ॐ छन्दोमयाय नम:
421. ॐ शास्त्रमयाय नम:
422. ॐ सर्वकान्तिखनये नम:
423. ॐ मनवे नम:
424. ॐ अनूरुसारथये नम:
425. ॐ पीलाय नम:
426. ॐ पैप्पलाय नम:
427. ॐ त्रिविलोचनाय नम:
428. ॐ त्रिशिखिने नम:
429. ॐ ब्राह्मणमयाय नम:
430. ॐ ज्योतिस्सिद्धान्तबोधनाय नम:
431. ॐ त्रिनाम्ने नम:
432. ॐ त्रिशरीराय नम:
433. ॐ त्रिकाण्डाय नम:
434. ॐ चण्डदीधितये नम:
435. ॐ मुक्तिद्वाराय नम:
436. ॐ मुनिवराय नम:
437. ॐ महोरस्काय नम:
438. ॐ महामनसे नम:
439. ॐ अन्नपात्रप्रदात्रे नम:
440. ॐ विष्णुचिन्तापराय नम:
441. ॐ पुंसे नम:
442. ॐ आपदामपहर्त्रे नम:
443. ॐ रोगकाण्डदवानलाय नम:
444. ॐ निवृत्तात्मने नम:
445. ॐ समावृत्ताय नम:
446. ॐ चक्षुरिन्द्रियदेवतायै नम:
447. ॐ तपोमयाय नम:
448. ॐ तप्ततनवे नम:
449. ॐ पूष्णे नम:
450. ॐ पूषादिवन्दिताये नम:
451. ॐ सर्वजन्तुशरण्याय नम:
452. ॐ बह्वृचाय नम:
453. ॐ बहुदायकाय नम:
454. ॐ कृष्णात्मने नम:
455. ॐ कमनीयाय नम:
456. ॐ सर्ववेदविभागकृते नम:
457. ॐ कर्णाय नम:

458. ॐ विकर्णाय नमः
459. ॐ कान्ताय नमः
460. ॐ बहुभोजिने नमः
461. ॐ बहुप्रियाय नमः
462. ॐ दक्षिणाय नमः
463. ॐ दक्षिणामूर्तये नमः
464. ॐ दयावते नमः
465. ॐ दम्भवर्जिताय नमः
466. ॐ सद्भूतये नमः
467. ॐ कोशगाय नमः
468. ॐ कोशिने नमः
469. ॐ सर्वसिद्धिपरायणाय नमः
470. ॐ शिवदेहाय नमः
471. ॐ शिवात्मने नमः
472. ॐ शिवदेहाय नमः
473. ॐ शिवप्रदाय नमः
474. ॐ वाराणसीवासपराय नमः
475. ॐ हंसतीर्थप्रवर्तकाय नमः
476. ॐ सूर्यलिङ्गप्रतिष्ठात्रे नमः
477. ॐ सोमकान्तिविवर्धनाय नमः
478. ॐ सुग्रहाय नमः
479. ॐ सुखदाय नमः
480. ॐ सूक्ष्माय नमः
481. ॐ स्वरस्वरिताय नमः
482. ॐ संख्यावते नमः
483. ॐ सर्वसंसारिणे नमः
484. ॐ सूरये नमः
485. ॐ परपुरञ्जयाय नमः
486. ॐ कृतागमाय नमः
487. ॐ कृतविधये नमः
488. ॐ कृतशास्त्राय नमः
489. ॐ कृताह्निकाय नमः
490. ॐ राज्ञे नमः
491. ॐ राजद्वितीयाय नमः
492. ॐ ग्रहराजाय नमः
493. ॐ प्रमाणविदे नमः
494. ॐ बाडवाय नमः
495. ॐ बाडवामूलाय नमः
496. ॐ हव्याय नमः
497. ॐ कव्याय नमः
498. ॐ पितृप्रियाय नमः
499. ॐ समाधिवेत्रे नमः
500. ॐ सारार्थाय नमः
501. ॐ सारदृशे नमः
502. ॐ शारदाप्रियाय नमः
503. ॐ रक्तपुष्पार्चनीयाय नमः
504. ॐ रक्तगन्धाक्षतप्रियाय नमः
505. ॐ परार्थ्यार्ध्याय नमः
506. ॐ पूर्णकान्तये नमः
507. ॐ कृततत्त्वार्थनिर्णयाय नमः
508. ॐ निखिलप्राणनिलयाय नमः
509. ॐ नित्यमेरुप्रदक्षिणाय नमः
510. ॐ पूर्णाय नमः
511. ॐ पूर्णयित्रे नमः
512. ॐ पूज्याय नमः
513. ॐ परमान्नकृतादराय नमः
514. ॐ परहिंसादिरहिताय नमः
515. ॐ गुरुमूर्तये नमः
516. ॐ गतिप्रदाय नमः
517. ॐ गोपालाय नमः
518. ॐ लोकपालाय नमः
519. ॐ सर्वस्मै नमः
520. ॐ सर्वस्वाय नमः
521. ॐ अच्युताय नमः

522. ॐ मरुदीशाय नमः
523. ॐ मरुच्चक्षुषे नमः
524. ॐ मित्राय नमः
525. ॐ हृत्तापनाशकाय नमः
526. ॐ हृद्रोगहारिणे नमः
527. ॐ कौमारिणे नमः
528. ॐ हरिमादिविनाशकाय नमः
529. ॐ उत्तरांदिवमारूढाय नमः
530. ॐ हारिद्राय नमः
531. ॐ कोकनायकाय नमः
532. ॐ ह्रींबीजमध्यनिलयाय नमः
533. ॐ नवनाथविवर्धनाय नमः
534. ॐ योगिनीवन्द्यचरणाय नमः
535. ॐ बलिग्रहणतत्पराय नमः
536. ॐ नित्यकल्याणनिलयाय नमः
537. ॐ कल्याणाचलसेवकाय नमः
538. ॐ कल्याणदानकल्पात्मने नमः
539. ॐ अत्युग्राय नमः
540. ॐ रिपुभयङ्कराय नमः
541. ॐ भूतिकृते नमः
542. ॐ भूतिभृते नमः
543. ॐ भूतये नमः
544. ॐ भूतभावनपूर्वजाय नमः
545. ॐ त्रियुगाय नमः
546. ॐ त्रिपृष्ठाय नमः
547. ॐ त्रिपादे नमः
548. ॐ मूर्तित्रयात्मकाय नमः
549. ॐ सर्वविघ्नविनाशिने नमः
550. ॐ सर्वबन्धविमोचकाय नमः
551. ॐ त्रिशिरसे नमः
552. ॐ त्रिप्रलम्बाय नमः
553. ॐ त्रिदंष्ट्राय नमः
554. ॐ त्रिचतुर्गतये नमः
555. ॐ कुजमित्राय नमः
556. ॐ पितृपतये नमः
557. ॐ पितृकारकाय नमः
558. ॐ शुभाङ्गाय नमः
559. ॐ लोकसारङ्गाय नमः
560. ॐ सारङ्गाय नमः
561. ॐ अरुणसारथये नमः
562. ॐ पुण्यश्लोकाय नमः
563. ॐ पुण्यदायिने नमः
564. ॐ पुण्यकारिणे नमः
565. ॐ पुरातनाय नमः
566. ॐ विजयाय नमः
567. ॐ विष्णुराजाय नमः
568. ॐ विष्णुराताय नमः
569. ॐ भवादिहृते नमः
570. ॐ वदान्याय नमः
571. ॐ विराड्रूपिणे नमः
572. ॐ विद्यानाथाय नमः
573. ॐ विधये नमः
574. ॐ विधवे नमः
575. ॐ प्रशस्तगुणसिन्धवे नमः
576. ॐ वेदान्तवेदिबन्धवे नमः
577. ॐ तत्त्वार्थमात्रे नमः
578. ॐ ताम्राश्वाय नमः
579. ॐ तरुणाय नमः
580. ॐ तडिदुज्ज्वलाय नमः
581. ॐ तीर्णदुःखाय नमः
582. ॐ तीव्रवेगाय नमः

583. ॐ चन्दनद्युतये नमः
584. ॐ आत्मवते नमः
585. ॐ अर्कपर्णस्नानतोषिणे नमः
586. ॐ वीतिहोत्रादिदैवताय नमः
587. ॐ एकाक्षाय नमः
588. ॐ एकचक्राय नमः
589. ॐ स्वतेजोभासे नमः
590. ॐ स्वयंप्रभाय नमः
591. ॐ पिण्डजपरागतये नमः
592. ॐ अण्डजभयापहाय नमः
593. ॐ क्रूरव्रताय नमः
594. ॐ क्रूरकल्पाय नमः
595. ॐ तामसाय नमः
596. ॐ परवीरघ्ने नमः
597. ॐ षट्पल्लवविधानज्ञाय नमः
598. ॐ षट्पल्लववरप्रदाय नमः
599. ॐ श्रुतिपादपसञ्चारिणे नमः
600. ॐ कोकिलाय नमः
601. ॐ कमलाश्रयाय नमः
602. ॐ कुष्ठव्याधिविनाशिने नमः
603. ॐ दुष्टपीडानिवर्हणाय नमः
604. ॐ धृतपद्मद्वयाय नमः
605. ॐ योद्ध्रे नमः
606. ॐ तेजोमण्डलमध्यगाय नमः
607. ॐ सर्वाधिव्याधिशमनाय नमः
608. ॐ सर्वतापालितापनाय नमः
609. ॐ सर्वसाक्षिणे नमः
610. ॐ सदुदयाय नमः
611. ॐ स्वाष्टाक्षर्यधिदेवतायै नमः
612. ॐ स्फोटादिदोषहारिणे नमः
613. ॐ गुल्मदुःखप्रभञ्जनाय नमः
614. ॐ योजनार्बुदसञ्चारिणे नमः
615. ॐ सालोक्यादिप्रदाय नमः
616. ॐ पित्रे नमः
617. ॐ खेटाय नमः
618. ॐ कृपीटदायिने नमः
619. ॐ नग्नाय नमः
620. ॐ नलिनवल्लभाय नमः
621. ॐ कुन्तीप्रसन्नाय नमः
622. ॐ कौबेराय नमः
623. ॐ श्रीवक्षसे नमः
624. ॐ श्रीनिकेतनाय नमः
625. ॐ अरुणाय नमः
626. ॐ अरुणकेतवे नमः
627. ॐ युद्धप्रेतगतिप्रदाय नमः
628. ॐ संज्ञामनोनुकूलाय नमः
629. ॐ महेन्द्रकृतपूजनाय नमः
630. ॐ गरुडाग्रजसूताय नमः
631. ॐ सस्यालिसुहृदे नमः
632. ॐ ऊर्मिकृते नमः
633. ॐ गोधूमधान्यनाथाय नमः
634. ॐ वर्तुलाकारमण्डलाय नमः
635. ॐ रुद्रप्रत्यधिदेवाय नमः
636. ॐ हस्तनक्षत्रनायकाय नमः
637. ॐ गुञ्जापुञ्जप्रतीकाशाय नमः
638. ॐ पवित्रीकृतवृत्रहणे नमः
639. ॐ कालिन्दीजनकाय नमः

640. ॐ गोब्राह्मणहितेरताय नमः
641. ॐ इन्द्राय नमः
642. ॐ वृद्धश्रवसे नमः
643. ॐ पूष्णे नमः
644. ॐ विश्ववेदसे नमः
645. ॐ प्रजापतये नमः
646. ॐ अग्नये नमः
647. ॐ वायवे नमः
648. ॐ सूर्याय नमः
649. ॐ वाय्वश्वाय नमः
650. ॐ रश्मिपालकाय नमः
651. ॐ मरीच्यात्मने नमः
652. ॐ भुवनसुवे नमः
653. ॐ अद्रोहाणे नमः
654. ॐ पुत्रदायकाय नमः
655. ॐ महानाम्रीव्रतहिताय नमः
656. ॐ महामानाय नमः
657. ॐ अपराक्षसाय नमः
658. ॐ आदित्याय नमः
659. ॐ दितिदेवाय नमः
660. ॐ दिवस्पतये नमः
661. ॐ व्योमसंदृग्विमानस्थाय नमः
662. ॐ सुमृडीकाय नमः
663. ॐ सरोविभवे नमः
664. ॐ स्मृतये नमः
665. ॐ प्रत्यक्षाय नमः
666. ॐ ऐतिह्याय नमः
667. ॐ अनुमानाय नमः
668. ॐ विधायकाय नमः
669. ॐ तत्सर्वसमाविष्टाय नमः
670. ॐ अणवे नमः
671. ॐ महते नमः
672. ॐ अधिवत्सराय नमः
673. ॐ पटराय नमः
674. ॐ विक्लिधाय नमः
675. ॐ पिङ्गाय नमः
676. ॐ प्रदर्शिने नमः
677. ॐ उपदर्शकाय नमः
678. ॐ नानामुखाय नमः
679. ॐ एकशीर्षाय नमः
680. ॐ ऋतुलक्षणलक्षिताय नमः
681. ॐ शुक्लात्मने नमः
682. ॐ दक्षिणपक्षाय नमः
683. ॐ कृष्णात्मने नमः
684. ॐ वामपक्षकाय नमः
685. ॐ अह्ने नमः
686. ॐ दिवे नमः
687. ॐ विषुरूपिणे नमः
688. ॐ विश्वावनविशेषविदे नमः
689. ॐ अपशवे नमः
690. ॐ अपशुघ्नाय नमः
691. ॐ नपशवे नमः
692. ॐ पशुपालकाय नमः
693. ॐ संवत्सरप्रियतमाय नमः
694. ॐ प्रत्यक्षज्ञेयमण्डलाय नमः
695. ॐ षडुद्यमाय नमः
696. ॐ समयात्राय नमः
697. ॐ विनादिने नमः
698. ॐ अभिधावकाय नमः
699. ॐ षष्टिवल्गाय नमः
700. ॐ साष्ट्रिकाय नमः
701. ॐ प्रैषकृते नमः
702. ॐ प्रथमस्मृताय नमः
703. ॐ अघोरक्षाय नमः
704. ॐ सदोनादिने नमः
705. ॐ वाक्प्रयोजकाय नमः

706. ॐ संवत्सरीणाय नमः
707. ॐ कर्मफलाय नमः
708. ॐ पद्मापीतइवोज्ज्वलाय नमः
709. ॐ कनकोज्ज्वलवाससे नमः
770. ॐ अहताम्बराय नमः
711. ॐ कपर्दिने नमः
712. ॐ विशिखाय नमः
713. ॐ वातवते नमः
714. ॐ मरुतमुखाय नमः
715. ॐ क्षपणाय नमः
716. ॐ योत्स्यमानाय नमः
717. ॐ हेमचक्षुषे नमः
718. ॐ अकोपनाय नमः
719. ॐ अपध्वस्ताय नमः
720. ॐ सन्नद्धाय नमः
721. ॐ सहदृशे नमः
722. ॐ जीवनप्रदाय नमः
723. ॐ नदेवाय नमः
724. ॐ नमनुष्याय नमः
725. ॐ नाग्नये नमः
726. ॐ नेन्द्राय नमः
727. ॐ नमारुताय नमः
728. ॐ नोपमाय नमः
729. ॐ रुद्रधन्वने नमः
730. ॐ कर्मब्रह्मप्रपञ्चकाय नमः
731. ॐ ऋतुभिस्सन्नुताय नमः
732. ॐ स्वामिने नमः
733. ॐ सर्वकामदुहे नमः
734. ॐ अव्ययाय नमः
735. ॐ आरोग्यस्थानाभाभ्राजाय नमः
736. ॐ पटरस्थानभासे नमः
737. ॐ सप्तसूर्यार्पिताय नमः
738. ॐ कश्यपाय नमः
739. ॐ मेर्वमोचकाय नमः
740. ॐ वात्स्यायनाय नमः
741. ॐ पञ्चकर्णाय नमः
742. ॐ सप्तहोत्रे नमः
743. ॐ ऋक्पतये नमः
744. ॐ तस्थिवते नमः
745. ॐ जगदात्मने नमः
746. ॐ वैशम्पायनाय नमः
747. ॐ अनम्भसे नमः
748. ॐ अम्भसाम्मूलाय नमः
749. ॐ अग्निवायुपरायणाय नमः
750. ॐ कश्यपातिथये नमः
751. ॐ सिद्धागमनाय नमः
752. ॐ नम उक्तिप्रियाय नमः
753. ॐ पुण्याय नमः
754. ॐ अजिराप्रभवे नमः
755. ॐ नर्यापसे नमः
756. ॐ पंक्तिराधसे नमः
757. ॐ विसर्पिणे नमः
758. ॐ नीललोहिताय नमः
759. ॐ नीलार्चिषे नमः
760. ॐ पीतकार्चिषे नमः
761. ॐ वायवे नमः
762. ॐ एकादशात्मकाय नमः
763. ॐ वासुकये नमः
764. ॐ वैद्युताय नमः
765. ॐ रजताय नमः
766. ॐ परुषादिकाय नमः
767. ॐ नासत्यजनकाय नमः
768. ॐ ओं शाम्बराय नमः
769. ॐ अपपूरुषाय नमः
770. ॐ सुब्रह्मण्याय नमः

771. ॐ सूरीन्द्राय नमः
772. ॐ गौतमाय नमः
773. ॐ कौशिकीपतये नमः
774. ॐ अग्नये नमः
775. ॐ जातवेदसे नमः
776. ॐ सहोजसे नमः
777. ॐ अजिराप्रभवे नमः
778. ॐ कस्मै नमः
779. ॐ किमात्मने नमः
780. ॐ काय नमः
781. ॐ तस्मै नमः
782. ॐ सत्याय नमः
783. ॐ अन्नाय नमः
784. ॐ अमृताय नमः
785. ॐ जीवाय नमः
786. ॐ व्ययजन्मने नमः
787. ॐ अनुजन्मने नमः
788. ॐ उग्राय नमः
789. ॐ सदूससकमष्टिभाजे नमः
790. ॐ भानवे नमः
791. ॐ विधवे नमः
792. ॐ भौमाय नमः
793. ॐ चन्द्रसूनवे नमः
794. ॐ गीष्पत्तये नमः
795. ॐ उशनसे नमः
796. ॐ सूर्यसूनवे नमः
797. ॐ तमसे नमः
798. ॐ केतवे नमः
799. ॐ अद्रिभृते नमः
800. ॐ अर्धप्रहाराय नमः
801. ॐ गुलिकाय नमः
802. ॐ यमकण्टकाय नमः
803. ॐ कारकाय नमः
804. ॐ मारकाय नमः
805. ॐ पोषकाय नमः
806. ॐ तोषकाय नमः
807. ॐ पश्चाल्लताय नमः
808. ॐ पुरोल्लताय नमः
809. ॐ पार्श्वलत्ताय नमः
810. ॐ आकाशग्रहसंसेव्याय नमः
811. ॐ धूमकेतुविजृम्भणाय नमः
812. ॐ भूकम्पनादिहेतवे नमः
813. ॐ रक्तवृष्टिविधायकाय नमः
814. ॐ गर्जत्पर्जन्यरूपिणे नमः
815. ॐ दुर्जयाय नमः
816. ॐ दुरतिक्रमाय नमः
817. ॐ निर्जराराध्यचरणाय नमः
818. ॐ जरामरणवर्जिताय नमः
819. ॐ वियद्गमनजङ्घालाय नमः
820. ॐ वीतिहोत्रसमप्रभाय नमः
821. ॐ विरिञ्चिगर्भसम्भूताय नमः
822. ॐ विषव्यालविनाशकृते नमः
823. ॐ श्रीपुष्टिकीर्तिसन्दायिने नमः
824. ॐ नमतां नमनप्रियाय नमः
825. ॐ वेदाध्ययनसम्पन्नाय नमः
826. ॐ वेदान्तनिष्ठिताय नमः
827. ॐ शब्दशास्त्रप्रणेत्रे नमः
828. ॐ शब्दब्रह्ममयाय नमः
829. ॐ पराय नमः
830. ॐ अर्थब्रह्ममयाय नमः

831. ॐ अर्थार्थिने नमः
832. ॐ स्वार्थिनामर्थदायकाय नमः
833. ॐ जपयज्ञाय नमः
834. ॐ तपोयज्ञाय नमः
835. ॐ दानयज्ञाय नमः
836. ॐ स्वाध्याययज्ञाय नमः
837. ॐ धर्मज्ञाय नमः
838. ॐ नीतिज्ञाय नमः
839. ॐ विज्ञाय नमः
840. ॐ गुहाशायिने नमः
841. ॐ गुहभेदिने नमः
842. ॐ साक्षान्मन्मथमन्मथाय नमः
843. ॐ मञ्जुदेहाय नमः
844. ॐ मञ्जुकान्तये नमः
845. ॐ महिमातिशयोज्ज्वलाय नमः
846. ॐ मित्रविन्दावन्द्यपादाय नमः
847. ॐ मुनिवृन्दावनहिताय नमः
848. ॐ ब्रह्मचारिणे नमः
849. ॐ सुमेधसे नमः
850. ॐ ऊर्ध्वरेतसे नमः
851. ॐ तपोमयाय नमः
852. ॐ ऐङ्कारनिलयाय नमः
853. ॐ वाग्मिने नमः
854. ॐ वागर्थप्रदाय नमः
855. ॐ ह्रींकारनिलयाय नमः
856. ॐ मायिने नमः
857. ॐ इन्द्रजालादितत्त्वविदे नमः
858. ॐ श्रीङ्कारनिलयाय नमः
859. ॐ श्रीमते नमः
860. ॐ धनदाय नमः
861. ॐ धनवर्धनाय नमः
862. ॐ श्रीचक्रराजनिलयाय नमः
863. ॐ श्रीदेवीकर्णभूषणाय नमः
864. ॐ क्लींकारमध्यनिलयाय नमः
865. ॐ कामराजवशंकराय नमः
866. ॐ सौश्शक्तिसहिताय नमः
867. ॐ ज्ञानदानदक्षाय नमः
868. ॐ प्रकाशकाय नमः
869. ॐ परमात्मने नमः
870. ॐ अन्तरात्मने नमः
871. ॐ जीवात्मने नमः
872. ॐ नियामकाय नमः
873. ॐ हृदयग्रन्थिभेत्रे नमः
874. ॐ सर्वसंशयनाशनाय नमः
875. ॐ ब्रह्मव्याख्याननिपुणाय नमः
876. ॐ यज्ञदीक्षाधुरन्धराय नमः
877. ॐ दौर्भाग्यतूलवातूलाय नमः
878. ॐ जराध्वान्तनिवर्तकाय नमः
879. ॐ द्वैतमोहविनाशिने नमः
880. ॐ भेदवादिविभेदनाय नमः
881. ॐ वीरभद्रमतध्वंसिने नमः
882. ॐ वीराराध्यनिबर्हणाय नमः
883. ॐ कापालिमतकोपिने नमः
884. ॐ मीमांसान्यायतत्पराय नमः
885. ॐ कार्तान्तिकवराय नमः

886. ॐ सर्वकार्तान्तिक-परायणाय नम:
887. ॐ जङ्गमाजङ्गममयाय नम:
888. ॐ जानकीपूजिताय नम:
889. ॐ इक्ष्वाकुवंशनाथाय नम:
890. ॐ इन्दिरास्थानसुन्दराय नम:
891. ॐ विद्याविनयविज्ञानाय नम:
892. ॐ त्रयीताण्डवमण्डपाय नम:
893. ॐ रामचन्द्रकुलाम्भोधये नम:
894. ॐ कामिनीकामदायकाय नम:
895. ॐ सङ्गीतशास्त्रनिपुणाय नम:
896. ॐ सर्वविद्याप्रवर्तकाय नम:
897. ॐ राजग्रहाय नम:
898. ॐ अधिकारिणे नम:
899. ॐ राजराजेश्वरीप्रियाय नम:
900. ॐ राज्याय नम:
901. ॐ भोज्याय नम:
902. ॐ साम्राज्याय नम:
903. ॐ वैराज्याय नम:
904. ॐ राज्याय नम:
905. ॐ गवे नम:
906. ॐ पञ्चगव्याय नम:
907. ॐ शुद्धात्मने नम:
908. ॐ चान्द्रायणफलप्रदाय नम:
909. ॐ कृच्छ्रादिफलदायिने नम:
910. ॐ दारिद्र्यभयनाशनाय नम:
911. ॐ दु:खार्णवोत्तारकाय नम:
912. ॐ दुरितव्रातखण्डनाय नम:
913. ॐ ब्रह्महत्यादिविध्वंसिने नम:
914. ॐ भ्रूणहत्यानिबर्हणाय नम:
915. ॐ गुरुद्रोहादिशमनाय नम:
916. ॐ मातृगामिवधोद्यताय नम:
917. ॐ पञ्चास्त्रशस्त्रमेघालि नम:
918. ॐ झंझावाताय नम:
919. ॐ झषादिकाय नम:
920. ॐ चित्रगवे नम:
921. ॐ दानशौण्डाय नम:
922. ॐ सिंहसंहननाय नम:
923. ॐ यूने नम:
924. ॐ वैधव्यबाधाशमनाय नम:
925. ॐ विधवानाङ्गतिप्रदाय नम:
926. ॐ रजोदोषविनाशिने नम:
927. ॐ कृतपक्वान्नगर्हणाय नम:
928. ॐ पट्टाभिषिक्तभक्तालये नम:
929. ॐ दुष्टमत्तेभकेसरिणे नम:
930. ॐ अनर्गलगतये नम:
931. ॐ गूढाय नम:
932. ॐ गोमतीतीरपुण्यकृते नम:
933. ॐ जरायुदोषहारिणे नम:
934. ॐ पूर्णायुर्योगकारकाय नम:
935. ॐ भक्ताब्धिपूर्णचन्द्राय नम:
936. ॐ धर्ममार्गप्रवर्तकाय नम:
937. ॐ सौवर्गसुखहेतवे नम:
938. ॐ निरयध्वंसदीक्षिताय नम:
939. ॐ भ्रमन्मण्डलसंस्थानाय नम:
940. ॐ भ्रान्तिपित्तादिरोगहृते नम:

941. ॐ मेहादिरोगशमनाय नमः
942. ॐ पाण्डुक्षयविनाशनाय नमः
943. ॐ पापवेतालमन्त्रज्ञाय नमः
944. ॐ पापकृज्जनदुर्लभाय नमः
945. ॐ ज्वरादिदोषदूराय नमः
946. ॐ विज्वरीकृतभूसुराय नमः
947. ॐ मोक्षनिश्रेणिकासाक्षिणे नमः
948. ॐ दाक्षायण्यादिसेवकाय नमः
949. ॐ भावुकाय नमः
950. ॐ भद्रकरणाय नमः
951. ॐ अश्विनीपुष्करोज्ज्वलाय नमः
952. ॐ प्रशस्तवते नमः
953. ॐ निस्तुलनाय नमः
954. ॐ प्रबन्धशतकल्पनाय नमः
955. ॐ भूनेत्रे नमः
956. ॐ भूधराय नमः
957. ॐ भोगिने नमः
958. ॐ भाग्यदायिने नमः
959. ॐ भवप्रियाय नमः
960. ॐ कर्मन्दिने नमः
961. ॐ वललाय नमः
962. ॐ क्लीबाय नमः
963. ॐ पशुपालाय नमः
964. ॐ अश्वपालकाय नमः
965. ॐ शनिपीडाविनाशिने नमः
966. ॐ कृत्यादोषनिबर्हणाय नमः
967. ॐ अभिचारिकविध्वंसिने नमः
968. ॐ गदावनदवानलाय नमः
969. ॐ जपपूजार्चनरताय नमः
970. ॐ नारायणपदाय नमः
971. ॐ पराय नमः
972. ॐ पापपाषाणदलन टङ्की-कृत करावलये नमः
973. ॐ मोक्षलक्ष्मीकवाटाय नमः
974. ॐ मातृकावर्णमण्डनाय नमः
975. ॐ अकारादिक्षकारान्त-वर्णमालाविभूषणाय नमः
976. ॐ अनुस्वारादिसंख्यात्मने नमः
977. ॐ स्वराय नमः
978. ॐ व्यञ्जनाय नमः
979. ॐ सर्वार्थदाय नमः
980. ॐ सर्वकर्मणे नमः
981. ॐ सर्वकार्यप्रकाशकाय नमः
982. ॐ पञ्चविंशतितत्त्वस्थाय नमः
983. ॐ पञ्चब्रह्मसमुद्भवाय नमः
984. ॐ पारमार्थिकसन्दायिने नमः
985. ॐ पंग्वादिगतिदायकाय नमः
986. ॐ सफलीकृतपूजार्थाय नमः
987. ॐ विफलीकृतदुष्कृतये नमः
988. ॐ श्रुतिस्मृति समाम्नात-स्मार्तकर्मप्रकाशकाय नमः
989. ॐ यज्ञोपवीतधारिणे नमः
990. ॐ याज्ञवल्क्यादिवंदिताय नमः

991. ॐ सुषुम्रायोगमध्यस्थाय नमः
992. ॐ सालंबनोद्दीपनदिक्रिया-बीजाय नमः
993. ॐ लम्बिकायोगसाधनाय नमः
994. ॐ महामनवे नमः
995. ॐ कल्पातिशायिसङ्कल्पाय नमः
996. ॐ विकल्पविधिवर्जिताय नमः
997. ॐ अनल्पमूर्तये नमः
998. ॐ अश्वात्मने नमः
999. ॐ स्वात्मानन्दविधायकाय नमः
1000. ॐ आत्मानात्मविवेकज्ञाय नमः
1001. ॐ निरावरणबोधनय नमः
1002. ॐ तत्त्वनिदानभूताय नमः
1003. ॐ नित्यकल्याणसुन्दराय नमः
1004. ॐ शान्तरक्षणनिर्निद्राय नमः
1005. ॐ श्रुतिस्मृतिशुभद्रुमाय नमः
1006. ॐ आलापीकृतवेदाङ्गाय नमः
1007. ॐ मालालंकृतकन्धराय नमः
1008. ॐ रुद्राक्षकङ्कणलसत्कराय नमः
1009. ॐ रुद्रजपप्रियाय नमः
1010. ॐ सदाशिवपरब्रह्मस्थानाय नमः
1011. ॐ श्रीशम्भुविग्रहाय नमः
1012. ॐ मूलाधाराम्बुजारूढाय नमः
1013. ॐ दहराकाशमध्यगाय नमः
1014. ॐ सहस्त्राराम्बुजारूढाय नमः
1015. ॐ ज्ञानडोलाविलासवते नमः
1016. ॐ वेलोल्लङ्घनसामर्थ्याय नमः
1017. ॐ वेत्रे, निर्वृतिदायकाय नमः
1018. ॐ सुरभूसुरदत्तार्घ्यशुद्धांब-ग्रहणरताय नमः
1019. ॐ ब्रह्मवर्चस्वतामूलाय नमः
1020. ॐ श्रीसूर्यविग्रहाय नमः

भगवान सूर्यदेव के इस सहस्त्रनाम में उनके परम पवित्र और प्रमुख एक हजार बीस नामों का संकलन है। इसके नियमित पाठ करने पर सभी प्रकार के रोग-शोक, अकाल मृत्यु का भय और दरिद्रता दूर हो जाते हैं। इसके पाठ करने वाले पर भगवान सूर्यदेव सदैव कृपालु बने रहते हैं और उसे अन्त में मोक्ष भी प्राप्त हो जाता है, ऐसा इसकी फलश्रुति में कहा गया है। परन्तु यदि आप किसी कारणवश गत अध्याय में संकलित मूल स्तोत्र का पाठ अथवा इन उपरोक्त नामों का जप नहीं कर पा रहे, तब भी निराश न हों। आगामी अध्याय में भगवान रविदेव के एक सौ आठ नामों का संकलन किया जा रहा है। उनका जप अथवा पाठ भी लगभग इतना ही प्रभावशाली है।

❑❑

सूर्य अष्टोत्तर शतनाम स्तोत्र

यंत्र-मंत्र-तंत्र के सिद्धहस्त साधक तो प्रायः मूल सहस्रनाम का मन-ही-मन स्तवन करते हैं, जबकि संस्कृत न जानने वाले उपासक करते हैं गत अध्याय में संकलित सूर्यदेव के एक हजार से कुछ अधिक नामों का जप। परन्तु प्रारम्भिक दिनों में उपासना करते समय प्रायः अधिकांश उपासक इतना समय नहीं दे पाते। यही कारण है कि सूर्यदेव की मानसिक उपासना करने वाले अधिकांश उपासक और विग्रह अथवा चित्र को सभी वस्तुएं और सेवाएं क्रियात्मक रूप में अर्पित करने वाले आराधक प्रायः ही सूर्यदेव के इस अष्टोत्तर शतनाम अथवा इसके नीचे संकलित एक सौ आठ नामों का जप करते हैं। आप मूल सहस्रनाम का स्तवन करें अथवा इस अष्टोत्तर शतनाम का स्तवन अथवा हिन्दी में इन नामों का जप, आपको समान फलों की प्राप्ति होगी। आराधना-उपासना, मंत्रों के जप और इन स्तोत्रों के स्तवन में महत्व इस बात का नहीं कि आप किस भाषा में और कितने लम्बे समय तक इनका स्तवन करते हैं। मुख्य महत्त्व तो इस बात का है आप कितनी श्रद्धापूर्वक और तन्मयता से इनका स्तवन करते हैं। इनका पाठ करते समय आप प्रत्येक नाम के साथ ही भगवान सूर्यदेव के रूप-स्वरूप और उस नाम के अर्थ एवं अभिप्राय का चिन्तन भी मन-ही-मन करते रहें। बिना इस चिन्तन के इन्हें स्तवित करते रहना तो मात्र मुंह की कसरत बनकर ही रह जाता है, अतः व्यर्थ भ्रम में न पड़ें, इनमें से जिसका भी स्तवन अथवा जप करें, पूरे मनोयोग के साथ करें।

अरुणाय शरण्याय करुणारससिंधवे।
असमानबलायार्तरक्षकाय नमो नमः ॥ 1 ॥
आदित्यायादिभूताय अखिलागमवेदिने।
अच्युतायाखिलज्ञाय अनंताय नमो नमः ॥ 2 ॥
इनाय विश्वरूपाय ज्यायेंद्राय भानवे।
इन्दिरामंदिराप्ताय वन्दनीयाय ते नमः ॥ 3 ॥
ईशाय सुप्रसन्नाय सुशीलाय सुवर्चसे।
वसुप्रदाय वसवे वासुदेवाय ते नमः ॥ 4 ॥
उज्ज्वलायोग्ररूपाय ऊर्ध्वगाय विवस्वते।
उद्यत्किरणजालाय हृषीकेशाय ते नमः ॥ 5 ॥
ऊर्जस्वलाय वीराय निर्जराय जयाय च।
ऊरुद्वयाभावरूपयुक्तसारथये नमः ॥ 6 ॥
ऋषिवंद्याय रुग्घंत्रे ऋक्षचक्रचराय च।
ऋजुस्वभावचित्ताय नित्यस्तुत्याय ते नमः ॥ 7 ॥
ऋकारमातृकावर्णरूपायोज्ज्वलतेजसे ।
ऋक्षाधिनाथमित्राय पुष्कराक्षाय ते नमः ॥ 8 ॥
लुप्तदंताय शांताय कांतिदाय घनाय च।
कनत्कनकभूषाय खद्योताय नमो नमः ॥ 9 ॥
लूनिताखिलदैत्याय सत्यानन्दस्वरूपिणे।
अपवर्गप्रदायार्तशरण्याय नमो नमः ॥ 10 ॥
एकाकिने भगवते सृष्टिस्थित्यन्तकारिणे।
गुणात्मने घृणिभृते बृहते ब्रह्मणे नमः ॥ 11 ॥
ऐश्वर्यदाय शर्वाय हरिदश्वाय शौरये।
दशदिक्संप्रकाशाय भक्तवश्याय ते नमः ॥ 12 ॥
ओजस्कराय जयिने जगदानन्दहेतवे।
जन्ममृत्युजराव्याधिवर्जिताय नमो नमः ॥ 13 ॥
औन्नत्यपदसंचाररथस्थाय सुरारये।
कमनीयकरायाब्जवल्लभाय नमो नमः ॥ 14 ॥
अंतर्बहिः प्रकाशाय अचिन्त्यायात्मरूपिणे।
अच्युतायामरेशाय परस्मै ज्योतिषे नमः ॥ 15 ॥
अहस्कराय रवये हरये परमात्मने।
तरुणाय वरेण्याय ग्रहाणां पतये नमः ॥ 16 ॥

ओं नमो भास्करायादिमध्यांतरहिताय च।
सौख्यप्रदाय सकलजगतां पतये नमः॥ 17॥
नमस्सूर्याय कवये नमो नारायणाय च।
नमो नमः परेशाय तेजोरूपाय ते नमः॥ 18॥
ओं श्रीं हिरण्यगर्भाय ओं ह्रीं संपत्कराय च।
ओं ऐंमिष्टार्थदायाशुप्रसन्नाय नमो नमः॥ 19॥
श्रीमते श्रेयसे भक्तकोटिसौख्यप्रदायिने।
निखिलागमवेद्याय नित्यानन्दाय ते नमः॥ 20॥

फलश्रुति

यो मानवस्सन्ततमर्कमर्चयन् पठेत् प्रभाते विमलेन चेतसा।
इमानि नामानि च तस्य पुण्यमायुर्धनं धान्यमुपैति नित्यम्॥ 21॥
इमं स्तवं देववरस्य कीर्तयेच्छृणोति योऽयं सुमनास्समाहितः।
स मुच्यते शोकदवाग्निसागरात्प्राप्नोति सर्वान् मनसो यथेप्सितान्॥ 22॥

नमस्कार सहित 108 नाम

1. ॐ अरुणाय नमः।
2. ॐ शरण्याय नमः।
3. ॐ करुणारससिन्धवे नमः।
4. ॐ असमानबलाय नमः।
5. ॐ आर्तरक्षकाय नमः।
6. ॐ आदिभूताय नमः।
7. ॐ आदित्याय नमः।
8. ॐ अखिलागमवेदिने नमः।
9. ॐ अच्युताय नमः।
10. ॐ अखिलज्ञाय नमः।
11. ॐ अनन्ताय नमः।
12. ॐ इनाय नमः।
13. ॐ विश्वरूपाय नमः।
14. ॐ इज्याय नमः।
15. ॐ इन्द्राय नमः।
16. ॐ भानवे नमः।
17. ॐ इन्दिरामन्दिराय नमः।
18. ॐ आप्ताय नमः।
19. ॐ वन्दनीयाय नमः।
20. ॐ ईशाय नमः।
21. ॐ सुप्रसन्नाय नमः।
22. ॐ सुशीलाय नमः।
23. ॐ सुवर्चसे नमः।
24. ॐ वसुप्रदाय नमः।
25. ॐ वसवे नमः।
26. ॐ वासुदेवाय नमः।
27. ॐ उज्वलाय नमः।
28. ॐ उग्ररूपाय नमः।
29. ॐ ऊर्ध्वगाय नमः।
30. ॐ विवस्वते नमः।
31. ॐ उद्यत्किरणजालाय नमः।
32. ॐ हृषीकेशाय नमः।
33. ॐ ऊर्जस्वलाय नमः।
34. ॐ वीराय नमः।
35. ॐ निर्जराय नमः।
36. ॐ जयाय नमः।
37. ॐ ऊरुद्वयाभावरूपयुक्त-सारथये नमः।
38. ॐ रुग्घन्त्रे नमः।
39. ॐ ऋक्षचक्रचराय नमः।
40. ॐ ऋजुस्वभावचित्ताय नमः।

41. ॐ नित्यस्तुत्याय नमः।
42. ॐ ऋकारमातृकावर्णरूपाय नमः।
43. ॐ उज्वलतेजसे नमः।
44. ॐ ऋक्षाधिनाथाय नमः।
45. ॐ मित्राय नमः।
46. ॐ पुष्कराक्षाय नमः।
47. ॐ लुप्तदन्ताय नमः।
48. ॐ शान्ताय नमः।
49. ॐ कान्तिदाय नमः।
50. ॐ धनाय नमः।
51. ॐ कनत्कनकभूषाय नमः।
52. ॐ खद्योताय नमः।
53. ॐ लूनिताखिलदैत्याय नमः।
54. ॐ सत्यानन्दस्वरूपिणे नमः।
55. ॐ अपवर्गप्रदाय नमः।
56. ॐ आर्तशरण्याय नमः।
57. ॐ एकाकिने नमः।
58. ॐ भगवते नमः।
59. ॐ सृष्टिस्थित्यन्तकारिणे नमः।
60. ॐ गुणात्मने नमः।
61. ॐ घृणिभृते नमः।
62. ॐ बृहते नमः।
63. ॐ ब्रह्मण नमः।
64. ॐ ऐश्वर्यदाय नमः।
65. ॐ शर्वाय नमः।
66. ॐ हरिदश्वाय नमः।
67. ॐ शौरये नमः।
68. ॐ दशदिक्सम्प्रकाशाय नमः।
69. ॐ भक्तवश्याय नमः।
70. ॐ ओजस्कराय नमः।
71. ॐ जयिने नमः।
72. ॐ जगदानन्दहेतवे नमः।
73. ॐ जन्ममृत्युजराव्याधिवर्जिताय नमः।
74. ॐ औन्नत्यपदसञ्चाररथस्थाय नमः।
75. ॐ असुरारये नमः।
76. ॐ कमनीयकराय नमः।
77. ॐ अब्जवल्लभाय नमः।
78. ॐ अन्तर्बहिःप्रकाशाय नमः।
79. ॐ अचिन्त्याय नमः।
80. ॐ आत्मरूपिणे नमः।
81. ॐ अच्युताय नमः।
82. ॐ अमरेशाय नमः।
83. ॐ परस्मै नमः।
84. ॐ ज्योतिषे नमः।
85. ॐ अहस्कराय नमः।
86. ॐ रवये नमः।
87. ॐ हरये नमः।
88. ॐ परमात्मने नमः।
89. ॐ तरुणाय नमः।
90. ॐ वरेण्याय नमः।
91. ॐ ग्रहाणांपतये नमः।
92. ॐ भास्कराय नमः।
93. ॐ आदिमध्यान्तरहिताय नमः।
94. ॐ सौख्यप्रदाय नमः।
95. ॐ सकलजगतांपतये नमः।
96. ॐ सूर्याय नमः।
97. ॐ कवये नमः।
98. ॐ नारायणाय नमः।
99. ॐ परेशाय नमः।
100. ॐ तेजोरूपाय नमः।

101. ॐ ह्रीं हिरण्यगर्भाय नमः।

102. ॐ ऐं इष्टार्थदाय नमः।

103. ॐ आशुप्रपन्नाय नमः।

104. ॐ श्रीमते नमः।

105. ॐ श्रेयसे नमः।

106. ॐ भक्तकोटिसौख्य-प्रदायिने नमः।

107. ॐ निखिलागमवेद्याय नमः।

108. ॐ नित्यानन्दाय नमः।

इस अष्टोत्तर शतनाम के प्रथम बीस श्लोकों में तो भगवान सूर्यदेव के एक सौ आठ प्रमुख नाम संकलित हैं और प्रत्येक श्लोक में उन्हें नमस्कार भी किया गया है। इक्कीसवें और बाइसवें श्लोक में इसकी फलश्रुति है। इसके नीचे ये ही 108 नाम प्रारम्भ में ब्रह्म का प्रतीक ॐ और अन्त में नमस्कार हेतु नमः लगाकर संकलित किए गए हैं। भगवान सूर्यदेवजी की आराधना, उपासना, बड़ी संख्या में किसी मंत्र के जप अथवा अन्य कोई भी साधना करते समय सहस्रनाम का स्तवन किया जाए अथवा इनके हिन्दी नामों का स्तवन, इसका कोई निश्चित नियम नहीं। यह स्तवन और जप जितना अधिक किया जाए, उतना ही कम है। वैसे आप इस अष्टोत्तर शतनाम का स्तवन आराधना, उपासना अथवा साधना के अन्त में मन-ही-मन तो करें ही, दिन अथवा रात्रि में भी इसे अधिक-से-अधिक दोहराते रहें। यह आवश्यक नहीं है कि एक जगह बैठकर ही आप इसका स्तवन करें, काम करते हुए भी आप यह स्तवन कर सकते हैं। इसी प्रकार कोई भय अथवा संकट उपस्थित होने पर आप थोड़ा ऊंचे स्वर में इस स्तोत्र का स्तवन कीजिए। जिस प्रकार हनुमान चालीसा का पाठ करने पर ऊपरी बाधाएं, हर प्रकार का भय और अनिष्ट की आशंकाएं समाप्त हो जाती हैं, ठीक उसी प्रकार इसका पाठ करने पर भी हर प्रकार का भय समाप्त हो जाता है।

❑❑

विशिष्ट मंत्र तथा उनकी सिद्धियां

भगवान सूर्यदेव के चार मंत्र पीछे तीसरे अध्याय से आप कण्ठस्थ कर चुके हैं तथा चौथे अध्याय में अर्थ सहित संकलित नमस्कार मंत्रों में से भी किसी का भी स्तवन जप के लिए किया जा सकता है। परन्तु जिस प्रकार भगवान सूर्यदेव की रश्मियां, उनका तेज एवं महिमाएं तथा स्वरूप अनन्त हैं, ठीक उसी प्रकार उनके मंत्र भी सभी देवों से अधिक हैं। ये सभी मंत्र समान रूप से प्रभावशाली हैं और इनमें से किसी भी मंत्र का जप, आप आराधना-उपासना के अंतिम चरण में कर सकते हैं। बड़ी मात्रा में जपने के लिए भी आप तीसरे अध्याय में संकलित चार मंत्रों में से किसी को भी सतत रूप से जप सकते हैं। वैसे सूर्यदेव के सिद्धहस्त उपासक उपासना के अंतिम चरण में प्राय: सूर्य गायत्री मंत्र का अथवा सूर्यदेव के वेदोक्त मंत्र का जप करते हैं। सूर्यदेव के तंत्रोक्त मंत्रों का जप प्राय: ही इन्हें सिद्ध करने अथवा विशेष प्रयोजनों की आपूर्ति के लिए किया जाता है। इनमें से कुछ प्रमुख मंत्र इस प्रकार हैं—

वैदिक सूर्य मंत्र

वैदिककाल में सूर्यदेव सर्वाधिक पूजनीय देव थे और यही कारण है कि वेदों में आपके अनेक जप-मंत्र हैं। इनमें से चार मंत्र नीचे दिए जा रहे हैं—

ॐ घृणि: सूर्य: आदित्योम्।

मात्र आठ अक्षरों के इस सूर्य मंत्र की महिमा का वेदों में काफी गुणगान किया गया है। अन्य सभी मंत्रों के समान ॐ इसमें भी परब्रह्म का प्रतीक है। शास्त्रों में कहा गया है कि सूर्य नारायण की तरफ मुख करके इस मंत्र का जप करने से रोगों, शोकों और दरिद्रता से मुक्ति मिल जाती है। इसका नियमित जप करने से सभी पाप और पातक समाप्त हो जाते हैं। मध्याह्न काल में सूर्य की तरफ मुंह करके इसका जप करने पर विशेष लाभ प्राप्त होता है, जबकि प्रात:, मध्याह्न और सूर्यास्त के समय सूर्य की तरफ मुंह करके जप करने पर तो वह व्यक्ति देवतुल्य ही हो जाता है।

आदित्याय विद्महे सहस्त्रकिरणाय धीमहि।
तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्॥

इस मंत्र में कहा गया है कि हम भगवान आदित्य को पूजते हैं। हम हजारों किरणों से मण्डित भगवान सूर्य नारायण का ध्यान करते हैं। वे सूर्यदेव हमें प्रेरणा दें। इस मंत्र की महिमा भी उपरोक्त मंत्र के सदृश ही है। सूर्यदेवजी के तीसरे और चौथे वैदिक मंत्र कुछ अधिक क्लिष्ट और लम्बे हैं, जो इस प्रकार हैं—

ॐ आ कृष्णेन रजसा व्वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्त्यञ्चं।
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥

सूर्यदेव का चौथा वेदोक्त मंत्र इस मंत्र का ही थोड़ा परिवर्तित रूप है, जो इस प्रकार है—

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः ॐ भूर्भुवः
स्व ॐ आकृष्णेन रजसावर्तमानो निवेशयन्तमृतं मर्त्यञ्चं।
हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्।
ॐ स्वः भुवः भूः ॐ सः ह्रौं ह्रीं ह्रां ॐ सूर्याय नमः।

सूर्य गायत्री मंत्र

गायत्री मंत्र भी वास्तव में सूर्यदेव का विशिष्ट मंत्र ही है क्योंकि उसमें भगवान सूर्यदेव को सविता नाम से सम्बोधित करके ज्ञान देने और अज्ञान का अन्धकार मिटाने हेतु प्रार्थना की गई है। इसके अतिरिक्त भी चार विशिष्ट सूर्य गायत्री मंत्र हैं और बड़ी संख्या में जप इनमें से किसी एक मंत्र का ही प्रायः किया जाता है—

1. **ॐ भास्कराय विद्महे महातेजसे धीमहि तन्नो सूर्यः प्रचोदयात्।**
2. **ॐ आदित्याय विद्महे भास्कराय धीमहि तन्नो भानुः प्रचोदयात्॥**
3. **ॐ आदित्याय विद्महे प्रभाकराय धीमहि तन्नो सूर्यः प्रचोदयात्॥**
4. **ॐ सप्त तुरंगायविद्महे सहस्त्रकिरणाय धीमहि तन्नो रविः प्रचोदयात्॥**

इनमें से किसी भी सूर्य गायत्री मंत्र का जप आत्म शुद्धि के लिए संजीवनी बूटी के समान है, जबकि वैदिक मंत्रों का जप प्रायः ही सूर्यदेव की विशिष्ट कृपाओं और अन्त में मोक्ष की प्राप्ति के लिए किया जाता है।

पुराणोक्त सूर्य मंत्र

शास्त्रों में कहा गया है कि यज्ञोपवीत धारण करने वाला व्यक्ति ही वैदिक और गायत्री मंत्रों के जप करने का अधिकारी है। महिलाओं के लिए भी इन मंत्रों का जप वर्जित है। यही कारण है कि आजकल सूर्यदेव के अधिकांश आराधक और उपासक सूर्य पुराण में दिए गए आगामी मंत्र का जप ही अधिक करते हैं—

जपाकुसुमसङ्काशं काश्यपेयं महाद्युतिम्।
तमोऽरिं सर्वपापघ्नतम् प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्॥

इनके अतिरिक्त भी विभिन्न धर्मग्रंथों में सूर्यदेवजी के अनेक मंत्र उपलब्ध हैं। इनमें से अधिक प्रचलित और पूर्ण प्रभावशाली चन्द मंत्र ये भी हैं—

ॐ ह्रीं ह्रीं सूर्याय नमः।

ॐ ह्रौं श्रीं आं ग्रहधिराजाय आदित्याय नमः।

ॐ ह्रीं घृणिः सूर्यादित्य श्रीं ॐ।

तांत्रिक सूर्य मंत्र

सूर्यदेवजी की तांत्रिक साधनाएं करते समय अथवा किसी विशेष प्रयोजन की आपूर्ति के लिए निर्धारित दिनों के अन्दर निश्चित संख्या में इन दो मंत्रों का जप प्रायः ही किया जाता है—

ॐ जुं सः सूर्याय नमः।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रौं सः सूर्याय नमः।

नेत्र रोगनाशक विशिष्ट मंत्र

नेत्रों में किसी प्रकार की पीड़ा अथवा रोग होने पर इस मंत्र का प्रतिदिन जप विशेष लाभकारी सिद्ध होता है—

ॐ पक्षिराजाय विद्महे सुवर्णपक्षाय धीमहि।
तन्नो गरुडः प्रचोदयात्॥

सूर्यदेव के शास्त्रोक्त तथा तांत्रिक मंत्र मात्र सात हजार जपने पर ही सिद्ध हो जाते हैं। किसी रविवार को यह जप प्रारम्भ किया जाता है और दस माला प्रतिदिन जप करके शनिवार को जप पूर्ण कर लिया जाता है। आगामी दिन अर्थात् रविवार को यही मंत्र आगे स्वाहा लगाकर सात सौ आहुतियां देकर हवन किया जाता है और इस प्रकार वह मंत्र सिद्ध हो जाता है। मंत्र जप के पूर्व भगवान सूर्यदेव की नियमित उपासना और मंत्रों का जप आदि तो किया ही जाता है, यह दस माला जप अतिरिक्त रूप से किया जाता है। भगवान सूर्यदेव का विशिष्ट प्रिय रत्न माणिक्य है, परन्तु माणिक्य पर्याप्त कीमती भी है। माणिक्य के उपरत्न के रूप में तामड़ा, गार्नेट, अकीक और गुलाबी आनिक्स को तथा सूर्यबेल नामक लता की जड़ को भी शास्त्रों में प्राधिमान्यता प्राप्त है। भगवान सूर्यदेवजी की विशेष कृपाओं की प्राप्ति के लिए सूर्यदेव के भक्तों तथा सूर्य ग्रहपीड़ा से पीड़ित व्यक्तियों को माणिक्य अथवा उपरत्नों में से किसी भी एक को अंगूठी के रूप में तथा सूर्यबेल की जड़ को तावीज के रूप में धारण करना चाहिए। जहां तक मंत्रों के जप और इन्हें सिद्ध करने का प्रश्न है, सम्पूर्ण जानकारियां नीचे दी जा रही हैं।

मंत्रों में शक्ति का रहस्य

भगवान सूर्यदेव की आराधना अथवा उपासना करते समय सेवाओं के समर्पण के लिए स्तवित किए जाने वाले मंत्रों की अपेक्षा आकार में काफी छोटे होते हैं, ये जपे जाने वाले मन्त्र। परन्तु इनकी शक्ति अद्‌भुत है। इस बारे में हमारे शास्त्रों का कथन है कि ये जपे जाने वाले मन्त्र देवताओं का अक्षर और अगोचर रूप हैं। जिस प्रकार देवताओं के विग्रह और मूर्तियां उनके साकार रूप और पावन प्रतीक हैं, ठीक उसी प्रकार मन्त्र उनके निराकार रूप हैं। परन्तु एक और भी बड़ा अन्तर है। जहां देव-विग्रहों में देव विशेष की शक्तियां निवास करती हैं, वहीं मन्त्रों में तो स्वयं देवता निवास करते हैं। हमारे लगभग सभी शास्त्रों का मत है कि मन्त्र देवी-देवताओं के अगोचर अक्षर रूप होते हुए भी पूर्णतय जीवन्त होते हैं। तन्त्रशास्त्र की पुस्तकें ही नहीं, बल्कि सभी धर्मग्रन्थ एक स्वर से घोषणा कर रहे हैं कि मन्त्रों का पूर्ण अनुष्ठानपूर्वक सच्चे हृदय से जप करने वाले साधक से देवता प्रसन्न और संतुष्ट तो रहते ही हैं, उसके समक्ष साकार रूप में सशरीर उपस्थित होकर उसे न केवल दर्शन देते हैं, बल्कि उसकी सभी मनोकामनाओं और कार्यों को तत्काल सिद्ध भी कर देते हैं।

प्राचीनकाल में देवी-देवता ऋषि-मुनियों के आह्वान पर सशरीर उपस्थित हो जाते थे यह उनके द्वारा सतत रूप से जपे जाने वाले मन्त्रों का ही कमाल था। कुन्ती के मन्त्र-आह्वान पर बालपन में सूर्यदेव और शादी के पश्चात् क्रमशः स्वर्ग-नर्क के संचालक और आत्माओं के न्यायाधीश धर्मराज, मृत्यु-नियंत्रक देव यमराज, देवराज इन्द्र तथा अश्विनी कुमारों का सशरीर उपस्थित होकर उसे पुत्र प्रदान करना मन्त्रों के सतत जप द्वारा ही संभव हुआ था। बालक ध्रुव और प्रह्लाद ने मन्त्रों के जप द्वारा ही परमपिता के साक्षात दर्शन किए थे, तो भगवान शिव तक स्वयं जप करते हैं। इस कलिकाल में भी पूर्ण आस्था के साथ विधिविधान और अनुष्ठानपूर्वक सूर्यदेव के किसी मंत्र का नियमित जप इस लोक में सर्व कामनाओं एवं मृत्यु उपरान्त मोक्ष प्राप्त कराने में पूर्ण समर्थ है, यह सभी शास्त्रों की मान्यता है।

आसन, माला तथा यंत्र का चयन

आराधना-उपासना के अंतिम चरण में अथवा यों ही सामान्य रूप से एकाध माला मन्त्र जप करते समय तो आप किसी भी आसन पर बैठकर जप कर लेते हैं। परन्तु मन्त्रों के जागरण अथवा किसी विशिष्ट प्रयोजन की आपूर्ति के लिए बड़ी संख्या में मंत्र-जप करते समय, उससे प्राप्त होने वाले फलों और साधना की सफलता में वह आसन, जिस पर बैठकर आप जप करते हैं, तथा प्रयोग की जाने वाली माला भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मृगछाला और व्याघ्रचर्म के आसन यद्यपि शीघ्र सिद्धि प्रदायक हैं, परन्तु सद्गृहस्थों के लिए उनका प्रयोग उचित नहीं। आपके लिए कम्बल, मोटे कपड़े या कुशा घास से निर्मित सात्विक आसन ही अधिक उचित रहेंगे। बिना किसी आसन के भूमि पर बैठकर मन्त्र जप का भी शास्त्र निषेध करते हैं। इसी प्रकार एक सौ आठ मनकों वाली माला भी जप का अनिवार्य उपादान है। तन्त्रसार नामक प्राचीन पुस्तक के अनुसार उंगलियों पर मन्त्र जप साधारण, पुत्रजीवा की माला से दस गुना, छोटे-छोटे शंखों से बनी माला से सौ गुना, मूंगे की माला से हजार गुना, मणि, रत्नों तथा स्फटिक की माला से दस हजार गुना, मोती की माला से लाख गुना, सोने की माला से करोड़ गुना, कुश ग्रन्थि की माला से अरब गुना और रुद्राक्ष की माला से जप करने पर अनन्त गुना फल प्राप्त होता है। कालिका पुराण में मूंगे की माला को सर्व प्रकार की कामनाओं की पूर्ति करने वाली, पुत्रजीवा की माला को पुत्रदाता और समस्त पापों का विनाश करने वाली बतलाया गया है। जहां तक व्यावहारिकता और सुविधा का प्रश्न है, भगवान सूर्यदेव के किसी भी मंत्र का जप करते समय स्फटिक अथवा रुद्राक्ष की माला और कुश के आसन का प्रयोग श्रेष्ठ फलदायी सिद्ध होता है।

स्थान एवं समय का चयन

उपासना के समान ही मंत्रों का जप भी एक मानसिक प्रक्रिया है। यही कारण

है कि इन कार्यों के लिए प्रात:काल ब्रह्म मुहूर्त का समय सर्वोत्तम रहता है क्योंकि शान्त वातावरण में मन आसानी से एकाग्र हो जाता है। स्थान के चयन के बारे में लिंग पुराण में लिखा है कि घर में किए गए जप का फल साधारण होता है तो नदी तट पर किए जप का फल अनन्त होता है। पवित्र आश्रमों, देवालयों, पर्वत-शिखर पर, बाग-बगीचे में अथवा समुद्र तट पर यह लाभ करोड़ गुना हो जाता है। ध्रुव तारे या सूर्य के अभिमुख होकर और गौ, अग्नि, दीपक या जल के सामने जप करने का फल भी श्रेष्ठ माना गया है। इसके साथ ही जप करते समय साधना स्थल को पूर्णतय स्वच्छ व सात्विक रखने पर विशेष ध्यान देना भी अनिवार्य है। किसी भी पालतू पशु अथवा हिंसक, तामसिक और नास्तिक प्रवृत्ति के दुष्ट व्यक्ति को जप स्थल के पास नहीं आने देना चाहिए। भगवान सूर्यदेव के चित्र एवं प्रेरणास्पद वाक्यों से लिखे पटल और धार्मिक पुस्तकें तथा चित्र जहां मन में सात्विक प्रवृतियों का उदय करते हैं, वहीं गंदे और उत्तेजक कैलेण्डर मन की चंचलता और कलुष में वृद्धि करते हैं। आप उपासना करें या आराधना, मन्त्रों का जप करें अथवा इनकी सिद्धि तन-मन के समान ही स्थान का स्वच्छ और पवित्र होना भी आवश्यक है। भगवान सूर्यदेव को किसी प्रकार की मलीनता पसन्द नहीं, अत: आराधना स्थल, आपके तन और मन का स्वच्छ होना आवश्यक ही नहीं, बल्कि अनिवार्य है।

स्तवन की गति

अटक-अटक कर बोलना अथवा इतनी तीव्र गति से कोई बात कहना कि सुनने वाला उसे समझ ही न सके, लौकिक जीवन में भी असफलता का एक बड़ा कारण बन जाता है। यही सिद्धान्त मंत्रों के स्तवन और जप पर भी पूरी तरह लागू होता है। इस बारे में शास्त्रों का कथन है कि मंत्रों का जप अथवा उपासना करते समय मंत्रों का स्तवन इतनी गति से करना चाहिए कि प्रत्येक शब्द के भाव और अर्थ का चिन्तन भी मन-ही-मन होता रहे। यही कारण है कि किसी भी मंत्र का स्तवन अथवा जप न तो इतनी मन्द गति से करना चाहिए कि तन्द्रा अथवा नींद ही आने लग जाए और न ही इतनी शीघ्रतापूर्वक कि हाथ में माला और मुख में जिह्वा तो घूमती रहे, परन्तु आपका मन्त्र के अर्थ और भाव से तादात्म्य ही स्थापित न हो। आप जिस मन्त्र का जप कर रहे हों, उस मन्त्र के अर्थ का भी चिन्तन करते रहिए। इससे कालान्तर में शनैः-शनैः आपके चरित्र में भी उन गुणों का समावेश होने लगेगा। दैवीय गुणों का यह सतत विकास ही सम्पूर्ण आराधना-उपासना का मुख्य प्रयोजन है। मंत्रसिद्धि का अर्थ मंत्र और उपास्यदेव के साथ साधक का एकाकार हो जाना तथा दैवीय गुणों का विकास ही होता है।

ध्वनि की सीमाएं

आरती, भजन, चालीसे और अष्टक आदि का तो गायन किया जाता है, परन्तु

मन्त्रों का स्तवन। किसी भी मन्त्र के मन-ही-मन लगातार स्तवन का नाम ही जप है। गायन तो दूर की बात है, मंत्र के स्पष्ट उच्चारण की आज्ञा भी शास्त्र नहीं देते। मंत्रों के जप के समय होंठों के हिलने और श्वास तथा स्वर के निस्सारण के आधार पर शास्त्रों ने जप की प्रक्रिया को तीन वर्गों में विभाजित किया है—

वाचिक जप—भजन, कीर्तन और आरतियों के समान उच्च स्वरों में मंत्र जप का निषेध तो है ही, दूसरों के कानों तक आपकी ध्वनि पहुंचे, इसकी भी शास्त्र आज्ञा नहीं देते। जब जप करते समय मंत्रों का उच्चारण इतने तीव्र स्वरों में होता है कि ध्वनि जपकर्ता के कानों तक पहुंचती है, तो वह 'वाचिक जप' कहलाता है।

उपांशु जप—ध्वनि तो बाहर न निकले, परन्तु जप करते समय आपकी जीभ और होंठ हिलते रहें, तो इसे 'उपांशु जप' कहा जाएगा। इसमें देखने वालों को आपके होंठ तो हिलते हुए दृष्टिगोचर होते हैं, परन्तु कोई शब्द उसे तो क्या, आपको भी सुनाई नहीं पड़ता।

मानस जप—मंत्र जप की इस शास्त्रसम्मत विधि में जपकर्ता के होंठ तो क्या, जीभ तक नहीं हिलती। जपकर्ता मन-ही-मन निरन्तर मन्त्र को दोहराता रहता है। इस अवस्था में आप आंखें बंद करके भगवान सूर्यदेव से अपने आपको एकाकार अनुभव करते हुए मन-ही-मन में मंत्र दोहराते रहते हैं। अतः देखने वाले को लगता है कि शायद आप बैठे-बैठे ही सो गए हैं।

इन तीन प्रकार के जपों में शास्त्रों ने 'मानस जप' को सर्वश्रेष्ठ माना है और उपांशु जप को मध्यम स्तरीय। जहां तक वाचिक जप का प्रश्न है, वह मानस जप की प्रथम सीढ़ी तो हो सकता है, परन्तु पूर्ण फलदायक तो क्या, उपांशु जप से भी हीन माना गया है। इसी प्रकार उत्तेजित मन, जल्दबाजी और भावनाशून्य अवस्था में भी मंत्रों के जप का शास्त्र निषेध करते हैं, जबकि टोपी या पगड़ी अथवा पश्चिमी परिधान पहनकर जप करना तो एक पाप ही है।

हवन और आहुतियां

आराधना-उपासना के एक अंश के रूप में तो साधक जीवन भर भगवान सूर्यदेव के किसी भी मंत्र की एक, पांच अथवा ग्यारह मालाएं प्रतिदिन जपते ही रहते हैं। परंतु किसी मंत्र विशेष को सिद्ध करने के लिए अधिकांश सूर्य मंत्रों को सात हजार की संख्या में जपने का विधान है। यही नहीं, किसी विशेष प्रयोजन की आपूर्ति के लिए भी वांछित मंत्र का बड़ी संख्या में जप किया जाता है। यह जप रविवार को प्रारम्भ करके निर्धारित दिनों के अन्दर पूर्ण किया जाता है। जप पूर्ण हो जाने पर दूसरे दिन जपे हुए मन्त्रों की संख्या का दशमांश अर्थात् दसवां भाग आहुतियां देकर हवन किया जाता है। हवन करने के पूर्व पूरे विधि-विधान के साथ भगवान सूर्यदेव की षोडशोपचार पूजा की जाती है और उसके तत्काल बाद हवन

करते हैं। हवन करते समय वही मन्त्र स्वाहा लगाकर स्पष्ट स्वर में बोला जाता है। प्रत्येक स्वाहा के साथ थोड़ी-थोड़ी हवन सामग्री और देशी घी चम्मच से हवनकुण्ड की अग्नि में डालते रहते हैं।

मन्त्र सिद्ध करने अथवा किसी विशेष प्रयोजन के लिए जपने के पश्चात् दशमांश आहुतियां देना ही अधिक श्रेयस्कर है। परन्तु यदि बहुत बड़ी संख्या में किसी मन्त्र का जप किया गया हो तो अन्तिम दिन कुल योग का दशमांश जप बिना आहुतियां दिए भी किया जा सकता है। इसके बाद दूसरे दिन इस जप का दसवां भाग अर्थात् पहले जपे गए मंत्रों की कुल संख्या का मात्र एक प्रतिशत आहुतियां देकर ही अनुष्ठान की इतिश्री कर ली जाती है। वास्तव में आराधना-उपासना के समान ही मंत्रों के जप में भी मुख्य महत्व आपकी भावना का है। यदि कोई साधक आर्थिक अभाव के कारण जप संख्या का मात्र एक प्रतिशत ही आहुतियां दे पाता है, तब भी भगवान भास्कर उसे पूर्ण मान लेते हैं। आखिर वे हमारे सर्वस्व हैं और हमारी मजबूरियों को अच्छी तरह जानते हैं।

सूर्यदेव का पूजन तथा विविध न्यास

उपासना के एक अंग के रूप में किसी भी मन्त्र की एक अथवा अधिक मालाओं का जप सामान्य रूप में कर लिया जाता है। कारण स्पष्ट है। उपासना करते समय स्वस्तिवाचन से लेकर सूर्यदेव को विविध वस्तुएं समर्पण तक के सभी कार्य हम कर चुके हैं। यद्यपि बड़ी संख्या में किसी भी मन्त्र का जप करते समय भगवान भास्कर का पूजन और वस्तुओं का समर्पण अनिवार्य नहीं है, परन्तु 'उपासना एवं साधनाओं का पूर्वार्द्ध' नामक दसवें अध्याय में वर्णित सभी प्रक्रियाएं एवं उनके मन्त्रों का स्तवन जरूरी है। इसके साथ ही विभिन्न प्रकार के न्यास भी किए जाते हैं। प्रत्येक न्यास के लिए चन्द शब्दों के छोटे-छोटे मन्त्र होते हैं, परन्तु काफी अधिक हैं ये न्यास। सबसे अच्छा तो यही रहता है कि किसी मन्त्रों को सिद्ध कर चुके साधक अथवा कर्मकाण्डी विद्वान ब्राह्मण से इन सभी प्रक्रियाओं को अच्छी प्रकार समझ लिया जाए।

मंत्रसिद्धि अर्थात् मंत्र जागरण

मंत्रों की शक्ति और इन शक्तियों के जागरण के बारे में हमारे शास्त्रों का कथन है कि मन्त्रों में दो प्रकार की शक्तियां होती हैं—वाच्य शक्ति और वाचक शक्ति। वाचक शक्ति तो मंत्र का शरीर है और वाच्य शक्ति उसकी आत्मा। मंत्र के शब्द उसकी वाचक शक्ति हैं और मंत्र जप के समय प्रयोग किए जाने वाले सभी उपादान इस वाचक शक्ति को बढ़ाने के माध्यम। वाचक शक्ति यदि मन्त्र का शरीर है तो वाच्य शक्ति मन्त्रसिद्धि की आत्मा है। वास्तव में वाच्य शक्ति किसी मन्त्र, यन्त्र, मूर्ति अथवा अन्य उपादान का नाम नहीं, यह तो साधक की आस्था का ही

दूसरा नाम है। कारण स्पष्ट है, उपासना के समय प्रयोग किए जाने वाले मन्त्र हों अथवा जप और तान्त्रिक सिद्धियों के लिए बड़ी संख्या में जपे जाने वाले मन्त्र, वे तो माध्यम मात्र हैं। मन्त्रों का स्तवन अथवा जप तो साधक ही करता है और साधक की साधना, भावना, आस्था और तन्मयता पर ही निर्भर करती है किसी भी मन्त्र की सिद्धि।

इस बारे में शास्त्र स्पष्ट रूप से कहते हैं कि किसी भी विशिष्ट प्रयोजन की आपूर्ति के लिए किसी मन्त्र का पूर्ण अनुष्ठानपूर्वक जप करें अथवा उपासना के एक भाग के रूप में किसी मन्त्र की एक अथवा अधिक मालाओं का जप, सफलता में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका तो साधक की भावना, आस्था और मन की एकाग्रता ही निबाहती है। यद्यपि दोनों ही शक्तियों का महत्व है। वाचक शक्ति (मन्त्र के शरीर) और वाच्य शक्ति (मन्त्र की आत्मा या चैतन्य) दोनों ही महत्वपूर्ण हैं, परन्तु मुख्य महत्व तो वाच्य शक्तियों का ही है, वाचक शक्तियां तो माध्यम मात्र हैं। धर्म और दर्शन के विशिष्ट ग्रन्थ 'योग दर्शन' का इस बारे में कथन है कि मन्त्र साधक के हृदय में अपने आराध्यदेव की भक्ति की अखण्ड ज्योति का सतत प्रज्वलन तथा उसके चरित्र में वर्णित गुणों का समावेश एवं सतत विकास ही मन्त्रसिद्धि है, और साथ ही मानव जीवन का चरम लक्ष्य भी। इसके विपरीत किसी भी मंत्र को शुद्ध रूप में याद कर लेने, उसका भाव और अर्थ समझ लेने के बावजूद अन्यमनस्क भाव से उसे रटते या दोहराते रहने का कोई लाभ नहीं। मन्त्र जागरण का मूल आधार है मन्त्र के अधिष्ठाता देव को अपना सर्वस्व मानना तथा उनकी दिव्य शक्तियों और आप पर की जाने वाली कृपाओं पर दृढ़ विश्वास। इसी प्रकार आप जिस मन्त्र का जप कर रहे हैं, उस मन्त्र की शक्ति पर पूर्ण आस्था भी आवश्यक है, बिना आस्था और विश्वास के तो धर्म के इस संसार में कुछ भी प्राप्त नहीं किया जा सकता।

मंत्र जप का जीवन पर प्रभाव

धर्म आडम्बर अथवा कर्मकाण्ड नहीं, बल्कि जीवन को जीने योग्य बनाने का सशक्त माध्यम है। धर्म और सभी धार्मिक कार्यों का प्रमुख उद्देश्य ही मानव में दैवीय गुणों का विकास और उसकी आसुरी प्रवृत्तियों को नियंत्रित करना है। भजन, पूजा, आराधना, उपासना सभी हमें इस दिशा में प्रेरित करते हैं, परन्तु मन्त्रों का जप तो चरम तक सहज ही ले जाने में समर्थ है। इस बारे में धर्मशास्त्रों के साथ ही आधुनिक मनोविज्ञान, चिकित्सकों और समाज शास्त्रियों की एकमत राय है कि मानव शरीर में मन, मस्तिष्क और हृदय के अतिरिक्त भी चेतना के कई केन्द्र हैं। चेतना के ये विभिन्न केन्द्र चेतना के विभिन्न स्तरों को प्रकट करते हैं। यही कारण है कि ज्ञानीजन शारीरिक चैतन्य से अधिक महत्व मानसिक चैतन्य को देते हैं और

सर्वाधिक महत्व देते हैं हृदय अर्थात् आत्मा के चैतन्य को। जब तक हमारी चेतना अर्थात् मन की प्रवृत्तियां और ध्यान सांसारिक माया-मोह और अर्थ चिन्तन जैसे नीचे के स्तरों पर केन्द्रित रहती है, हमारे हृदय में क्रोध, मोह, लालच, भय, ईर्ष्या आदि विकार घूमते रहते हैं। लम्बे समय तक यह स्थिति रहने पर मन-मस्तिष्क ही नहीं शरीर तक अस्वस्थ-सा रहने लगता है और मन हर समय अशान्त। मन की यह अशान्ति शारीरिक और मानसिक स्तर पर व्यक्ति को इस प्रकार का रोगी बना देती है कि किसी मानसिक कार्य में तो उसका मन लगता ही नहीं, वह शारीरिक कार्य भी भली-भांति नहीं कर पाता। आज अधिकांश व्यक्तियों में अवसाद, निराशा, हाई ब्लडप्रेशर और हृदयरोग तथा समाज में हिंसा का कारण यही मनोस्थिति और मानसिक तनाव है।

यह एक मनोवैज्ञानिक ध्रुव सत्य है कि जब हम नियमित रूप से किसी मन्त्र का जप करने लगते हैं, तब हमारी चेतना नीचे के केन्द्रों को छोड़कर ऊपर की ओर अग्रसर होने लगती है। यद्यपि पूजा-आराधना, भजन-कीर्तन, सत्संग और धार्मिक साहित्य के अध्ययन-मनन से भी हमारा उत्थान होता है, परन्तु मानसिक उपासना और मन्त्रों के जप का तो इस क्षेत्र में जवाब ही नहीं। नियमित रूप से किसी भी मन्त्र का जप करने पर हमारे हृदय में अविरल गति से दिव्य भावों का उदय और मस्तिष्क में क्रियाशीलता का संचार तो होने ही लगता है, मन की चंचलता का बड़ी सीमा तक स्वयं ही शमन भी हो जाता है। इस अवस्था में हमारी आत्मा का सम्बन्ध जीवन के सूक्ष्म तथा शक्तिशाली तत्वों से जुड़ जाता है और परस्पर सौहार्द्र, जीवमात्र के प्रति दया तथा मानसिक संतोष जैसे गुण हमारे अन्दर स्वयं ही विकसित होने लगते हैं। इस अवस्था के पूर्ण विकसित हो जाने पर हमारे व्यवहार में पवित्रता, नम्रता और दृढ़ता तो आ ही जाती है, बहुत ही अधिक बढ़ जाती हैं हमारी मानसिक शक्तियां एवं आत्मबल। यह मानसिक दृढ़ता और आत्मसन्तोष जहां इस लोक में हमें सभी कार्यों में सहज सफलता दिलाता रहता है, वहीं भगवान भास्कर की अनुकम्पा से हमें सभी लौकिक उपलब्धियां तो प्राप्त होती ही रहती हैं, हम आवागमन के चक्र से मुक्त होकर मोक्ष के सहज अधिकारी तक बन जाते हैं। जहां तक मन्त्र सिद्धि में परम सहायक भगवान सूर्यदेवजी के यन्त्रों के चयन, प्राणप्रतिष्ठा एवं तांत्रिक साधनाओं का प्रश्न है, आइए आगामी अध्याय का अवलोकन करें।

❑❑

अध्याय : अठारह

यंत्रसिद्धि एवं तांत्रिक साधनाएं

सूर्यदेव की आराधना-उपासना से भी अधिक उनके मंत्रों का जप किया जाता है। मंत्रों का जप करते समय भगवान सूर्यदेव का कोई यंत्र सम्मुख रखकर और उस पर दृष्टि जमाकर किसी भी मंत्र का जप करने पर उससे प्राप्त होने वाले फलों की मात्रा और शक्ति बहुत ही अधिक बढ़ जाती है। इस बारे में हमारे शास्त्रों का कथन है कि देवी-देवताओं के विग्रह उनके साकार रूपों के प्रतीक हैं तो मन्त्र उनके अगोचर अक्षर रूप। परन्तु यन्त्र तो उस देव विशेष की सभी शक्तियों से भरपूर उनका पूर्ण जीवन्त स्वरूप ही हैं। यद्यपि किसी भी यन्त्र में उस देव अथवा अन्य किसी भी देवी-देवता की आकृति नहीं, मात्र कुछ रेखाएं और अंक तथा अक्षर एक निश्चित क्रम में अंकित होते हैं। फिर भी सभी देवों के अलग-अलग यंत्र तो हैं ही, विशिष्ट प्रयोजनों के लिए भी अलग-अलग यंत्रों का प्रयोग होता है। रेखाओं की आकृति व क्रम तथा अंकों और अक्षरों के आधार पर ही किसी यन्त्र को कोई विशिष्ट नाम दिया जाता है।

यन्त्रों में अंकित रेखाएं इन्हें विशिष्ट आकृति और उन रेखाओं के मध्य लिखे हुए अंकों और अक्षरों को विशिष्ट शक्ति प्रदान करती हैं। इसमें अंकित अंक और अक्षर उस देवता से सम्बन्धित बीजांक होते हैं और साथ ही इनकी शक्ति का प्रतीक भी। यही कारण है कि यन्त्र में अंकित अक्षरों और अंकों को बीज कहा जाता है और उन पर दृष्टि केन्द्रित करके ही मन्त्रों का निश्चित संख्या में पूर्ण विधि-विधान के साथ जप किया जाता है। तन्त्र शास्त्र के ग्रन्थों में कहा गया है कि विभिन्न प्रकार के यन्त्रों की रेखाएं, बीजाक्षर और बीजांक ब्रह्माण्ड की दिव्य शक्तियों से प्रभावित होते हैं। यही कारण है कि साधक जब किसी यन्त्र पर नजरें जमाकर किसी विशिष्ट मन्त्र का जप करता है, तब न केवल उसके मन और शरीर पर ही बल्कि आसपास के वातावरण पर भी अच्छा अथवा बुरा प्रभाव पड़ता ही है। यही कारण है कि पूजा-उपासना और मन्त्रों का जप करने में यदि थोड़ी-बहुत त्रुटि रह भी जाए तो कोई विशेष हानि नहीं होती। परन्तु यदि कोई यन्त्र सम्मुख रखकर और उस पर दृष्टि जमाकर किसी भी मंत्र का जप किया जाए तो जितनी जल्दी सफलता मिलती है, त्रुटि होने पर उतनी शीघ्रता से हानि भी हो सकती है।

यंत्र का चयन

यंत्र साधना की सम्पूर्ण सफलता यंत्र के सही चयन पर निर्भर करती है। त्रुटिपूर्ण तरीके से अंकित, अधूरा, अशुद्ध अथवा अस्पष्ट यंत्र साधना को सफल बनाने के स्थान पर खण्डित तो कर ही देता है, साधक को अनेक कष्टों में भी डाल सकता है। सूर्यदेव के कई यंत्र हैं और उनमें से कुछ का प्रयोग तो किसी विशिष्ट तांत्रिक प्रयोजन के लिए किया जाता है, जबकि सामान्य रूप से जप करते समय अधिकांश उपासक सूर्यदेव का पूजन यंत्र अपने सम्मुख रखते हैं। यहां विशेष ध्यान रखने की बात यह है कि यंत्र के माप से तो आपकी साधना में किसी प्रकार का कोई अन्तर नहीं पड़ता लेकिन यंत्र किस धातु पर अंकित है और उसका निर्माण किस घड़ी–मुहूर्त में हुआ है इसका सम्पूर्ण साधना पर पूर्ण प्रभाव पड़ता है।

८	१५	२	७
६	३	१२	११
१४	९	८	१
४	५	१०	१३

सूर्य बत्तीसा यंत्र

६	१	८
७	५	३
४	९	४

पंचादश सूर्य यंत्र

मूर्ति निर्माण के विपरीत यन्त्रों के निर्माण का एक पूर्ण शास्त्रोक्त विधि–विधान है और शुद्ध तांबे के पतरे पर विशेष घड़ी–मुहूर्त में निर्मित यन्त्र ही अपना पूर्ण प्रभाव दिखला पाते हैं। यद्यपि अब तो कैलेंडरों तक पर कुछ व्यक्ति यन्त्रों का मुद्रण कर रहे हैं, परन्तु पूजन के लिए इनका उपयोग पूर्णतः वर्जित है। प्लास्टिक की शीट, कपड़े अथवा कागज पर छपे हुए अथवा स्याही से बनाए गए यंत्रों का प्रभाव तो लगभग शून्य ही होता है, जबकि भूमि अथवा स्लेट पर कोई भी यन्त्र बनाना तो स्वयं को संकट में डालना ही है। इस पुस्तक में यन्त्रों के ये चित्र मात्र आपकी जानकारी के लिए दिए गए हैं, कृपया पूजन और सिद्धि के लिए इनका प्रयोग न करें। सैद्धान्तिक रूप में तो आप स्वयं भी भगवान सूर्यदेव का कोई भी यन्त्र साफ-सुथरे, छिद्ररहित, अखण्ड और पर्याप्त बड़े चौरस भोजपत्र पर अष्टगंध द्वारा चन्दन की लकड़ी की कलम से तैयार कर सकते हैं। परन्तु इस रूप में रेखाओं का स्पष्ट और निर्दोष अंकन तो आवश्यक है ही, सभी अंक, अक्षर और शब्द भी पूर्णतः शुद्ध रूप में लिखने अनिवार्य हैं। कोई टूटी हुई रेखा अथवा अस्पष्ट अक्षर या अंक आपकी साधना को खण्डित कर सकता है। यही कारण है कि आजकल लगभग

सभी साधक और तान्त्रिक ताम्रपत्र पर अंकित यन्त्रों का ही प्रयोग करते हैं और आप भी ऐसा ही करें। मात्र एक पत्र लिखकर सभी प्रकार के शुभ घड़ी-मुहूर्त में शास्त्रोक्त विधि से अंकित यंत्र आप हमसे भी मंगा सकते हैं।
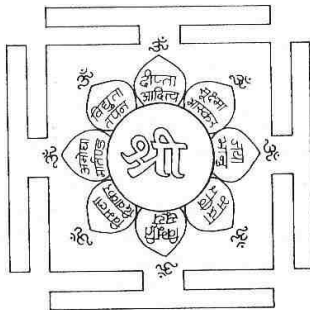
सूर्य पूजन यंत्र

यंत्र जाग्रत करने की विधि

मन्दिरों में मूर्ति स्थापित करने के पश्चात् उसकी प्राण-प्रतिष्ठा की जाती है और फिर आराधना प्रारम्भ करते हैं, ठीक उसी प्रकार यन्त्र की भी प्राण-प्रतिष्ठा की जाती है। इस प्रक्रिया को यन्त्र जागरण कहा जाता है और इसकी एक निश्चित निर्धारित विधि है। परन्तु यन्त्र में प्राण-प्रतिष्ठा का यह विधि-विधान न तो उतना जटिल है और न ही उतना भव्य। यही कारण है कि आप स्वयं यह कार्य आसानी से कर सकते हैं। सूर्यदेव की पूर्ण शास्त्रोक्त आराधना के समान ही सबसे पहले यन्त्र की सोलह संस्कारों सहित पूर्ण पूजा की जाती है। इस प्रयोजन के लिए उपासना से संबंधित दोनों अध्यायों में वर्णित सभी मन्त्रों का स्तवन और अन्य सभी क्रियाएं तो की ही जाती हैं, मूर्ति पूजा में काम आने वाली सभी सामग्रियों का प्रयोग भी किया जाता है।

विभिन्न न्यासों के साथ ही एक विशिष्ट विधि विधान है यन्त्र में प्राण-प्रतिष्ठा करने के लिए की जाने वाली इस सम्पूर्ण प्रक्रिया का। तन्त्र साधना करने हेतु यन्त्र का जागरण तो किसी सिद्धहस्त साधक के सान्निध्य में विशेष प्रकार की पूरी पूजा करके ही करना अनिवार्य है, परन्तु जहां तक सामान्य रूप से किसी यन्त्र के जागरण का प्रश्न है, आप केवल इन तीन मन्त्रों के स्तवन द्वारा भी यन्त्र में प्राण-प्रतिष्ठा कर सकते हैं। वैसे सबसे अच्छा रहेगा यंत्र का सोलह संस्कार से पूजा करने के पश्चात्

इन तीन मंत्रों के स्तवन द्वारा उसमें प्राणप्रतिष्ठा करना। यन्त्र सम्मुख रखकर उसे दाएं हाथ में पकड़ी हुई दूब घास अथवा कुशा से छू-छूकर इन मन्त्रों के स्तवन द्वारा यन्त्र में प्राण-प्रतिष्ठा की जाती है—

ॐ ऐं ह्रीं आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं ॐ हं सः सोहं सोहं हंसः शिवः अस्य यन्त्रस्य प्राणा इह प्राणाः।

ऐं ह्रीं श्रीं आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य जीव इह स्थितः। सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक् चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहैवागत्यं सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं असुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम्। ज्योक्, पश्येम सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मृडया नः स्वस्ति॥

यन्त्र की षोडशोपचार पूजा करने के पश्चात् उपरोक्त तीन मन्त्रों का स्तवन करके यन्त्र में प्राण, जीव, वाणी, मन, त्वचा, नेत्र, कर्ण, जिह्वा, नासिका आदि सभी इन्द्रियों का आह्वान किया जाता है। अब यह यन्त्र भगवान भास्कर का साक्षात रूप धारण कर चुका है, ऐसा मानकर यन्त्र की नियमित पूजा-आराधना और उस यन्त्र पर दृष्टि केन्द्रित करके वांछित मन्त्र का प्रतिदिन जप किया जाता है। मन्त्रसिद्धि में तो इस प्रकार का जाग्रत यन्त्र परम सहायक सिद्ध होता ही है, तन्त्र साधना का तो आधार स्तम्भ ही होता है इस प्रकार का प्राण-प्रतिष्ठित यन्त्र।
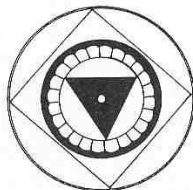
छाया यंत्र
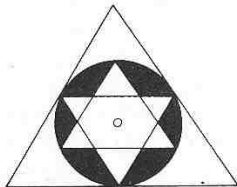
माया यंत्र
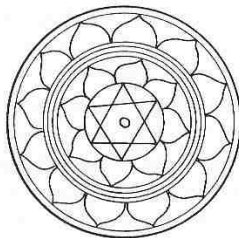
सूर्य यंत्र

तांत्रिक साधनाएं और सूर्यसिद्धि

तांत्रिक साधनाओं के बारे में धर्मग्रंथों का कथन है कि जिस प्रकार पूजा-आराधना का आगामी कदम मानसिक उपासना और चालीसों व आरतियों के गायन का आगामी चरण मंत्रों का जप है, ठीक उसी प्रकार मंत्रों के जप और यंत्र सिद्धि का आगामी आयाम तंत्रसिद्धि अथवा तांत्रिक साधनाएं करना है। प्राचीन धर्मग्रन्थों में मन्त्र, यन्त्र और तन्त्र साधनाओं के बारे में विपुल जानकारियां उपलब्ध हैं। अनेक ग्रन्थ तो केवल तन्त्रशास्त्र के ऊपर ही लिखे गए हैं। इन सभी धर्मशास्त्रों में कहा गया है कि मन्त्र जप और यन्त्र पूजन के साथ-साथ पूजा के विविध उपकरणों का प्रयोग करके प्रकृति, परमेश्वर तथा उपास्यदेव को अपने अनुकूल बनाने का नाम ही तन्त्र साधना है। शास्त्रों के अनुसार यन्त्र को सम्मुख रखकर सम्पूर्ण अनुष्ठानों का विस्तारपूर्वक सम्पादन करते हुए आराध्यदेव के किसी भी मन्त्र का निश्चित संख्या में जप और उसके बाद हवन आदि करना तन्त्रसाधना का प्रारम्भिक रूप है। इसी प्रकार भय और आपदाओं से रक्षा अथवा किसी विशिष्ट सिद्धि या कार्य की आपूर्ति के लिए जो मन्त्र जप एवं अनुष्ठान किए जाते हैं, वह भी तन्त्रसिद्धि ही हैं। यहां विशेष ध्यान रखने की बात यह है कि मन्त्रों का जप करते समय जब मुख्य जोर मन्त्रों के जप एवं देवाराधना पर दिया जाता है तो वह जप मन्त्रसिद्धि कहलाता है, जबकि यन्त्र की पूजा पर विशेष ध्यान देते हुए मन्त्र के जप का नाम यन्त्र साधना है। परन्तु जब यन्त्र और मन्त्र दोनों को समान महत्व देते हुए किसी विशेष प्रयोजन की सिद्धि हेतु पूर्ण विधि विधानपूर्वक यन्त्र का पूजन तथा मन्त्रों का जप किया जाता है तब यही कार्य तन्त्र साधना कहलाने लगता है।

उपासना और मंत्रों के जप तथा मंत्रसिद्धि के विपरीत तांत्रिक साधनाएं करते समय उपास्यदेव के विग्रह और यंत्र के साथ सम्पूर्ण पूजन सामग्री और विशेष भोग का प्रयोग तो होता ही है, अन्त में प्राय: हवन भी किया जाता है। यही नहीं, साधना के समय के साथ-साथ साधक के बैठने के स्थान एवं दिशा तथा प्रयोग किए जा रहे आसन और माला तक का इन साधनाओं पर भीषण प्रभाव पड़ता है। परन्तु इस पुस्तक में हम इस प्रकार की कोई जानकारी नहीं दे रहे। इसका सबसे बड़ा कारण तो यह है कि सूर्यदेवजी की तांत्रिक साधनाएं लगभग नहीं ही की जातीं। भगवान विष्णु के समान ही सूर्यदेवजी भी अपने आराधक-उपासक की सभी मनोकामनाएं मात्र आराधना-उपासना और मंत्रों का जप करने पर ही पूर्ण कर देते हैं, अत: सूर्यदेव की तांत्रिक साधनाएं करने की आवश्यकता उनके भक्तों को पड़ती ही नहीं। सूर्यपुत्र कर्ण, भगवान श्रीराम तथा पाण्डवों तक ने सूर्यदेव की कोई तांत्रिक साधना नहीं की थी, सूर्योपासना और उनके मंत्रों का जप करके ही उन्होंने सभी सिद्धियां एवं सूर्यदेवजी के प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त किए थे।

हम एक बार फिर दोहरा रहे हैं कि कोई आधी-अधूरी पुस्तक पढ़कर अथवा मातेश्वरी काली या भैरवदेव के भक्तों को तांत्रिक साधनाएं करते हुए देखकर आप भगवान सूर्यदेवजी की तांत्रिक साधना के चक्कर में न पड़ें। तांत्रिक सिद्धियों का यह क्षेत्र जितना शीघ्र और शक्तिशाली रूप में फल प्रदायक है, उतना ही अधिक जटिल तथा व्यापक भी है। वास्तविकता तो यह है कि तांत्रिक साधनाओं और तंत्र सिद्धि का क्षेत्र एक दुधारी तलवार है, जो कभी भी साधक को न केवल असफल बना सकती है, बल्कि जरा-सी भूल या प्रमाद उसे पागल तक बना सकता है। हम बारम्बार इस बात को दोहरा रहे हैं कि केवल पुस्तकें पढ़कर आप भगवान सूर्यदेवजी की तांत्रिक साधनाओं के क्षेत्र में कदम न बढ़ाएं, लाभ की सम्भावना तो नगण्य है, जबकि भीषण हानि की पूर्ण सम्भावना बनी ही रहेगी।

❑ ❑ ❑